कांगड़ा

(कला, देश और गीत)

कांगड़ा

(कला, देश और गीत)

लेखक :

महेन्द्रसिंह रन्धावा

अनुवादक :

बालकराम नागर

साहित्य अकादेमी नई दिल्ली

अपने कांगड़ा के मित्रो

परमेश्वरीदास

बेनीप्रसाद

विश्वम्भरदास कायस्थ

मामचन्द उप्पल

शोभासिंह

करमसिंह

रामसिंह

के

नाम

सूची

देश

गीत

प्रस्तावना

ग्राम्य संस्कृति, कला तथा गीतों से मेरा प्यार कोई आज से नहीं है। बचपन से ही ग्राम्य वातावरण और ग्रामवासी मुझ पर गहरा प्रभाव डालते रहे है। मैंने इनके लोक-गीतों और लोक-कथाओं मे भरपूर रस लिया है। होशियारपुर की दसूहा तहसील के ग्राम बोदलाँ मे, मेरे बचपन ने गाँवों से मेरा ऐसा नाता जोड़ा जो आज तक मेरे हृदय मे अभिव्यक्ति के लिए छटपटाता रहा है। कांगड़ा के समूचे रहन-सहन की होशियारपुर के पर्वतीय प्रदेश की संस्कृति मे इतने निकट की साझेदारी है कि कांगड़ा घाटी की सुन्दरता का वर्णन करते हुए मुझे कुछ ऐसा अनुभव होता है जैसा कि मैं अपने ही गाँव का चित्रण कर रहा होऊँ।

कांगडा के गाँवो को देखकर मैंने अनुभव किया कि इनकी होशियारपुर के ग्रामों से बडी समानता है। आम और शीशम के पेड दोनो ही जिलो के शृङ्गार है। दंगल, मेले और त्यौहार भी एक-दूसरे से मिलते-जुलते है। बोली और रीति-रिवाज मे भी बहुत साम्य है। कई लोक-गीतों के बारे मे यह निर्णय करना भी कठिन हो जाता है कि ये दोनो प्रदेशों मे से किसके है। कांगडा के गाँवो का दौरा करते, और वहाँ के चित्रोंको देखकर, आत्मविभोर होते हुए मुझे कुछ ऐसा अनुभव हुआ जैसे कि मैं गाँव से दूर रहने के अपने अभाव की पूर्ति कर रहा होऊं। लाहौर और लंदन में देखे हुए चित्र, कांगडा के नैसर्गिक वातावरण मे देखने पर एक नया ही आनन्द देते हैं। मैं इस परिणाम पर पहुँचा कि अजंता के भित्ति-चित्रों के बाद पंजाब ही एक ऐसा प्रदेश है, जिसने भारत को ऐसी भव्य और कोमल कला प्रदान की है। कांगड़ा के लोक-गीतों मे मुझे होशियारपुर की वनस्पति और होशियारपुर जन-जीवन की झलक मिली।

इसके बाद फुल्कारियाँ और कांगडा के कढ़े हुए रुमाल देखे। भारत के किस प्रान्त मे इतनी सुन्दर कढ़ाई होती है ? जो प्रदेश इस प्रकार की उच्चकोटि की कला, रंग-बिरंगी कढ़ाई, हृदय मे उतर जाने वाले गीत और गुरुओ की आध्यात्मिक वाणी को जन्म दे सकता है, उसे असभ्य और गँवार नही कहा जा सकता।

कालान्तर मे मेरी कांगडा-चित्रकला पर पहली पुस्तक भी प्रकाशित हो गई। इसकी कलामर्मज्ञो और कलाप्रेमियो ने बड़ी सराहना की। इस पुस्तक के

छपने के बाद मैंने सोचा कि कांगड़ा के लोक-गीतों की भी खोज की जाय। चित्र-कला और लोक-गीतों में ही लोगों की आन्तरिक भावनाएँ मुखर होती हैं।

जैसे कांगड़ा की चित्रकला शृङ्गार रस में डूबी है, ऐसे ही कांगड़ा के लोक-गीत प्रेम रंग में रँगे हैं। सुन्दर मृग-नयनियाँ, जिनका रूप चकाचौंध करता है, विरह की अग्नि में जलती हुई, मुँडेर पर खड़ी, अँधेरी रातों में अपने परदेसी प्रियतम को याद करती है और प्रेम सन्देश भेजती है। वे बादलों, पंख-पखेरुओं से कहती हैं कि वे उनकी दशा उनके प्रियतम को कह सुनाएँ। मिलन के चित्र तथा गीत और भी लुभावने हैं। वियोगियों के मिलन, आत्मा की सर्वोपरि सुखानुभूति है। जैसे ज्योति, ज्योति में मिल जाती है, ऐसा ही आत्माओं का संयोग है। यही परमानन्द का उच्च शिखर है। यही परमात्मा से साक्षात्कार है, मिलन है। जो सच्चे प्यार से अनभिज्ञ है, वे चाहे कितना पूजा-पाठ करें, जंगलों, पहाड़ों की खाक छानें, उनका जीवन व्यर्थ ही गया। ईश्वर प्रेम है—निस्वार्थ और सच्चा प्रेम जो शरीर की सुध-बुध भुला देता है और जीवात्मा रस के सागर में हिलोरें लेने लगता है। इन गीतों में हृदय की सच्ची वाणी है। ये हमें एक कोमल, कमनीय संसार में ले जाते हैं। यही है सच्चे प्यार की दुनिया। कांगड़ा के लोक गीत तो और भी मीठे, और भी कोमल, और भी प्यारे हैं।

इन गीतों की खोज और अध्ययन से यह पता चला कि कांगड़ा, बिलासपुर, मुकेत, जम्मू और चम्बा की बोली भी पंजाबी ही है। यह परिणाम एक लम्बी खोज के बाद निकला कि पंजाबी उत्तरी भारत की साँझी बोली है और किसी सम्प्रदाय विशेष अथवा धर्म की निजी सम्पत्ति नहीं है।

कई लोग मुझसे पूछते हैं कि मैं पंजाब की कला, लोक-गीत, बोली और साहित्य में इतनी रुचि क्यों लेता हूँ? मेरा उत्तर है: १९४७ में जब देश का बँटवारा हुआ तो पश्चिमी पंजाब के लोग दिल्ली में आए, तथा और जगलों में भी फैल गए। जहाँ भी सिर छिपाने का जगह मिली, पंजाबी बस गए। मैंने देखा कि भारत के कुछ लोग, इनको असभ्य-सा समझते थे। बहुत-से दूकानदार पेशा लोग मिलने आते और टूटी फूटी हिन्दुस्तानी में बात करते, जिसमें आधी पंजाबी होती। ऐसे लगता जैसे ये न तीतर है न बटेर। अपनी बोली को गँवारू और जटकी समझना और दूसरी बोलियों को सभ्य। अभी तक हमारे बहुत-से पंजाबी भाई विशेषकर शहरों में रहने वाले, इस बड़े भ्रम में पड़े हुए हैं। इनकी वही मन स्थिति है जो क्रान्ति से पहले रूस के उच्च वर्ग के लोगों की थी। वे भी रूसी को गँवारू बोली ही समझते और फ्रांसीसी ही बोलते थे। अब वही रूसी भाषा है जिसमें विज्ञान और साहित्य के ऊँचे-से-ऊँचे विचार अभिव्यक्त किये गए हैं। इस सम्बन्ध में दूर जाने की आवश्यकता नहीं। पचास-साठ साल पीछे की ओर देखें तो पता चलता है कि भारत में भी तमिल को छोड़कर जो संस्कृत से भी

पुरानी है, बहुत-सी प्रान्तीय भाषाओ मे कोई विशेष साहित्य उपलब्ध नही था।

दिनेशचन्द्र सेन, बगाल के एक उच्चकोटि के विद्वान्, अपने 'बंगला भाषा का इतिहास' मे लिखते है कि उन्नीसवी शताब्दी के अन्त मे कलकत्ता मे एक साहित्य-सभा हुआ करती थी, जिसके अग्रेज और बगाली दोनो सदस्य थे। इस सभा मे आम तौर पर अग्रेजी मे ही लेख पढे जाते और वाद-विवाद भी अग्रेजी मे ही होता। एक अग्रेज सदस्य ने सुझाव रखा कि गोष्ठियो मे लेख बंगला मे पढे जायँ। यह सुनते ही बगाली सदस्य आग-बगूला हो गए, और सबने इसका विरोध किया। उन्होंने कहा कि बगला एक गँवारू बोली है और वे इसमे लेख पढना पसन्द नही करेंगे। पर शीघ्र ही बगालियो के विचारो मे परिवर्तन आया और अग्रेजी पढे सब विद्वान्—राजा राममोहन राय, टैगोर तथा बकिमचन्द्र चटर्जी के नेतृत्व मे, अपनी भाषा मे दिलचस्पी लेने लग गए और ५०-६० वर्षों में ही, उन्होंने साहित्यिक दृष्टि मे बंगला को एक समृद्ध भाषा बना दिया।

पजाबी बोली तो बहुत पुरानी है और है भी बहुत लचीली जानदार और रसीली। वास्तव में भाषा को बनाने वाले, उस भाषा के लेखक होते है। यदि सुलझे हुए विद्वान् और विचारक लिखने बैठ जायँ तो वही बोली समृद्ध और सशक्त हो जाती है। बाबा फरीद के श्लोकों, गुरुवाणी, भाई गुरुदास के काव्य, शाह हुसैन और बुल्ले की काफियाँ, वीर रस की हीर और हाशिम की रचनाओं ने पजाबी भाषा को जो सम्पन्नता प्रदान की है, उसका प्रमाण पंजाबी के वर्तमान साहित्यिको की रचनाओ में प्रत्यक्ष झलकता है। धनीराम चात्रिक और पूरनसिंह की पजाबी पढने मे कितनी रसीली और मादक है। गुरुबख्शसिंह ने इस बोली में सोज पैदा किया है, और इसमे उर्दू, अग्रेजी और हिन्दी के शब्दो का खुले तौर पर प्रयोग करके पजाबी भाषा को लचीला बनाया है। मोहनसिंह की 'अबी दे बूटे' नामक कविता, दिल को कुछ इस तरह कचोटती है कि कहते नही बनता। अमृता प्रीतम ने अपनी कविता मे नारी के प्यार-भरे हृदय को हमारे सामने खोलकर रख दिया है। कुलवन्तसिंह विर्क, गुलजारसिंह सधू, संतोष सिंह धीर और रावलसिंह धूत ने अपनी लघु कथाओं में हमारे देहातो का ऐसा चित्रण किया है कि ग्राम्य जीवन की जीती-जागती तसवीरें आँखो के सामने उभर आती है—गाँव के जाटो की दरिया-दिली, हौसला, दृढता और जी-तोड़ परिश्रम! धूल, आँधी, पानी से उनका सघर्ष मानो साकार हो उठता है। मतसिंह सेखो ने इन्हीं पंजाबियो के जीवन की कसक और विवशता को पैनी दृष्टि से देखा। कर्तारसिंह दुग्गल ने अपनी कहानियों मे पोठोहार का खूब रग बाँधा है। पोठोहारिनो की सुन्दरता, कोमलता, प्यार-भरी चितवन, बिरह मे टप-टप गिरते उनके आँसू और चाँदी-से सफेद पोठोहारी झरनो का कल-कल करता पानी—ये सब हमारे सामने जीता जागता दिखाई देने लगता है पजाब क विविधता

पूर्ण जीवन का इतना सजीव और चित्ताकर्षक रूप सिद्ध करता है कि जिस बोली मे इतने बहुरंगी और परिपूर्ण चित्र प्रस्तुत किये गए हैं, वह निश्चय ही अत्यन्त समृद्ध और जीवित है, तथा प्रत्येक साहित्य-प्रेमी को मोहित और प्रेरित करती है।

वैसे भी किसी को किसी चीज से अलग रखा जाय, तो उसके दिल मे उसकी क़द्र और भी बढ जाती है। यह भी, पंजाबी भाषा से मेरे प्यार का एक कारण है। मैं ग्यारह वर्ष उत्तरप्रदेश मे रहा, जहाँ पंजाबी कभी-कभार ही सुनने को मिलती थी। १९४१-४५ तक रायबरेली मे रहते हुए, एक पंजाबी मुसलमान मोहम्मद अफजल से भेंट का प्राय. अवसर मिलता। जब मैं पंजाबी मे उससे बात करता तो उस पर नशा-सा छाने लगता, जैसे किसी को कोई खोई हुई वस्तु मिल जाय। इसके अतिरिक्त मैंने यह भी देखा कि हम पंजाबी लोग हिन्दुस्तानी का कितना ही अभ्यास करें, उत्तर प्रदेश वाले हमारी त्रुटियाँ झट पकड लेते और कहते, "क्यो साहब! आप पंजाबी है क्या?" मैंने सोचा, छोडो यह छल-छन्द, हमारी बोली किसी से कम नही। यह बोली है प्यार की, और प्यार करने वालों की। यह बोली है हीर और रांझा की, सोहनी और महीवाल की। यह बोली है— मन को मोह लेने वाले लोक-गीतों की, जिनके सामने उर्दू, हिन्दी की कृत्रिम कविता फीकी-सी लगती है। यह बोली है पंजाब के परिश्रमी हलधरो और मजदूरो की, जो वर्षों की उपेक्षा के बावजूद. जंगल के पेड-पौधो की तरह—जिन्हे आसमानी मेंह सींचता है—बढती और फलती-फूलती रही है।

पंजाबी के विरोध मे 'मम्मी-डैडी' कहने वाले, अंग्रेजी पढे-लिखे पंजाबियो ने भी, पंजाबी में मेरी दिलचस्पी को काफी बढाया है। इसमे शायद उनका दोष नही—क्योंकि शासकवर्ग सदा ही अपने-आपको साधारण जनता से विलग रखने के लिए उनसे भिन्न भाषा ही बोलता रहा है। गुप्तकाल सन् १००० तक हिन्दू राजा-रानियाँ और उनके दरबारी तथा बडे कर्मचारी संस्कृत मे ही बोलते थे और जनता की अपनी बोली प्राकृत थी। प्राकृत मे से ही प्रान्तीय भाषाएँ निकली। मुसलमानो के राज्य मे राजभाषा फारसी थी। सेना में, जिसमे हर तरह की खिचड़ी थी, उर्दू ने जन्म लेना शुरू किया। अंग्रेजो के राज्य मे सरकारी भाषा अंग्रेजी हो गई, पर पंजाब की कचहरियो मे, उर्दू मे ही काम होता था। अजीब तमाशा था। गवाह बयान पंजाबी मे देता और लिखा जाता उर्दू मे। आम लोगो पर रौब जमाने के लिए भी अफसर लोग उर्दू ही बोलते। जैसे ही एक गाँव का मुसलमान बाबू बन जाता तो उसकी बीबी, जो गाँव मे पहले साग तोड़ती और उपले चुनती, खुली फिरती थी—बुरका ओढकर बेगम बन जाती। ऐसे ही बाहरी भाषा भी एक बुरके का ही काम करती है, और इसे ओढकर लोग अपने-आपको सम्मानित वर्ग मे शामिल हुआ समझ लेते है।

जो कुछ मैंने ऊपर बताया है, यह मुझ अकेले का ही अनुभव नही बहुत सारे

कलाकारों और लेखकों का भी है। कहानीकार और नाटककार बलवन्त गार्गी ने बताया कि जब वह कालेज मे पढता था उसे अग्रेजी मे लिखने का बडा शौक था। वह अपनी अंग्रेजी की रचनाएँ इकट्ठी करके शान्तिनिकेतन गया और उन्हें टैगोर को दिखलाया। टैगोर ने कहा, "बच्चे! तेरी मातृभाषा कौन-सी है?" उसने उत्तर दिया, "पजाबी।" टैगोर ने कहा, "तो फिर तुम पंजाबी मे लिखा करो।" इस बात ने गार्गी के जीवन में परिवर्तन ला दिया और अब वह पजाबी के लब्धप्रतिष्ठ नाटककारों मे से है। इससे उलटा तजरुबा लोक-गीतो के सग्राहक देवेन्द्र सत्यार्थी का है। शुरू-शुरू मे उसने पजाबी मे अच्छा काम किया। जब वह हिन्दी 'आजकल' का सम्पादक बना तो 'हम तुम' के बिना बात ही नही करता था। पर वहाँ से छुट्टी हो जाने पर उसने फिर पजाबी मे बोलना शुरू कर दिया। भारत के प्रसिद्ध कलाकार पृथ्वीराज कपूर ने बताया था कि जब वह लगातार उर्दू बोलता है तो उसका मुँह दुखने लग जाता है, और फिर जब तक पजाबी मे न बोले, चैन नही पडता। सारांश यह कि अपनी मातृभाषा-जैसी कोई चीज नही। अगर मन में विचार है, भाव हैं, तो झरनों की तरह फूटकर निकलते है, भाषा चाहे कोई भी हो। पर जिस सुन्दरता और सच्चाई के साथ मातृभाषा मे व्यक्त होते है और किसी भाषा मे नही।

हिन्दी की तरह पजाबी भी कई तरह से लिखी जाती है। जब इसको संस्कृत और हिन्दी के विद्वान् लिखते है, तब सस्कृत शब्दों मे लाद देते हैं, और आजकल की हिन्दी की तरह इसे भी इतना कठिन बना देते है कि आम आदमी तो समझ ही नही सकता कि लेखक कहना क्या चाहता है। जब यह फारसी के आलिमों के हाथ पड़ती है तो वे इसे फारसी के भारी-भरकम लफ्जो से लाद देते हैं। ये लेखक इतना नही समझते कि कोई भी रोज़ परांठे नहीं खा सकता और यदि खायगा तो बदहजमी हो जायगी। भाषा एक माध्यम है जिससे हम अपने विचार और भावनाएँ दूसरो तक पहुँचाते हैं, और यह माध्यम जितना सुगम हो उतना ही अच्छा होता है। हमे यह भी नहीं भूलना चाहिए कि पंजाबी मुसलमानों, हिन्दुओं और सिखों की साँझी बोली है और इसे न मौलवी की बीवी, न ही भाई जी की सिहनी, और न ही पडित जी की पडिताइन बनाना उचित है। यह तो हम सबकी माँ है, और हम सब उसके बच्चे है। माँ की बोली तभी अच्छी है जब उसके बच्चे उसको समझ सकें। जैसे अग्रेजी में लैटिन, ग्रीक, एंग्लो सैक्सन, स्काच, कैल्श, गैलिक, पुर्तगाली और हिन्दुस्तानी तक के शब्द सम्मिलित है, इसी तरह ही पजाबी की नई बनाई जा रही इमारत के दरवाजे भी चारो ओर से खुले रखे जाने चाहिएँ और इसमे अरबी, फ़ारसी, उर्दू, संस्कृत हिन्दी, और अग्रेजी तक के शब्दों को आने देना चाहिए। इस तरह से ही यह भाषा समृद्ध हो

पूर्ण जीवन का इतना सजीव और चित्ताकर्षक रूप सिद्ध करता है कि जिस बोली मे इतने बहुरंगी और परिपूर्ण चित्र प्रस्तुत किये गए है, वह निश्चय ही अत्यन्त समृद्ध और जीवत है, तथा प्रत्येक साहित्य-प्रेमी को मोहित और प्रेरित करती है।

वैसे भी किसी को किसी चीज से अलग रखा जाय, तो उसके दिल मे उसकी कद्र और भी बढ़ जाती है। यह भी, पजाबी भाषा से मेरे प्यार का एक कारण है। मैं ग्यारह वर्ष उत्तरप्रदेश मे रहा, जहाँ पजाबी कभी-कभार ही सुनने को मिलती थी। १६४१-४५ तक रायबरेली मे रहते हुए, एक पंजाबी मुसलमान मोहम्मद अफजल से भेट का प्राय: अवसर मिलता। जब मैं पजाबी मे उससे बात करता तो उस पर नशा-सा छाने लगता; जैसे किसी को कोई खोई हुई वस्तु मिल जाय। इसके अतिरिक्त मैंने यह भी देखा कि हम पजाबी लोग हिन्दुस्तानी का कितना ही अभ्यास करें, उत्तर प्रदेश वाले हमारी त्रुटियाँ झट पकड लेते और कहते, "क्यो साहब! आप पंजाबी हैं क्या?" मैंने सोचा, छोडो यह छल-छन्द, हमारी बोली किसी से कम नही। यह बोली है प्यार की, और प्यार करने वालों की। यह बोली है हीर और राँझा की, सोहनी और महीवाल की। यह बोली है—मन को मोह लेने वाले लोक-गीतो की, जिनके सामने उर्दू, हिन्दी की कृत्रिम कविता फीकी-सी लगती है। यह बोली है पजाब के परिश्रमी हलधरो और मजदूरो की, जो वर्षों की उपेक्षा के बावजूद जंगल के पेड-पौधों की तरह—जिन्हे आसमानी मेंह सींचता है—बढती और फलती-फूलती रही है।

पंजाबी के विरोध मे 'मम्मी-डैडी' कहने वाले, अग्रेजी पढे-लिखे पजाबियो ने भी, पजाबी में मेरी दिलचस्पी को काफी बढाया है। इसमे शायद उनका दोष नही—क्योकि शासकवर्ग सदा ही अपने-आपको साधारण जनता से विलग रखने के लिए उनसे भिन्न भाषा ही बोलता रहा है। गुप्तकाल सन् १००० तक हिन्दू राजा-रानियाँ और उनके दरबारी तथा बड़े कर्मचारी सस्कृत मे ही बोलते थे और जनता की अपनी बोली प्राकृत थी। प्राकृत में से ही प्रान्तीय भाषाएँ निकली। मुसलमानो के राज्य मे राजभाषा फारसी थी। सेना मे, जिसमे हर तरह की खिचड़ी थी, उर्दू ने जन्म लेना शुरू किया। अग्रेजो के राज्य मे सरकारी भाषा अग्रेज़ी हो गई, पर पजाब की कचहरियों मे, उर्दू मे ही काम होता था। अजीब तमाशा था। गवाह बयान पजाबी मे देता और लिखा जाता उर्दू मे। आम लोगों पर रौब जमाने के लिए भी अफसर लोग उर्दू ही बोलते। जैसे ही एक गाँव का मुसलमान बाबू बन जाता तो उसकी बीवी, जो गाँव मे पहले साग तोड़ती और उपले चुनती, खुली फिरती थी—बुरका ओढकर बेगम बन जाती। ऐसे ही बाहरी भाषा भी एक बुरके का ही काम करती है, और इसे ओढकर लोग अपने-आपको सम्मानित वर्ग मे शामिल हुआ समझ लेते हैं।

जो कुछ मैंने ऊपर बताया है यह मुझ अकेले का ही अनुभव नहीं बहुत सारे

कलाकारों और लेखको का भी है। कहानीकार और नाटककार बलवन्त गार्गी ने बताया कि जब वह कालेज मे पढता था, उसे अग्रेजी में लिखने का बडा शौक था। वह अपनी अग्रेज़ी की रचनाएँ इकट्ठी करके शान्तिनिकेतन गया और उन्हे टैगोर को दिखलाया। टैगोर ने कहा, "बच्चे! तेरी मातृभाषा कौन-सी है?" उसने उत्तर दिया, "पजाबी।" टैगोर ने कहा, "तो फिर तुम पंजाबी मे लिखा करो।" इस बात ने गार्गी के जीवन में परिवर्तन ला दिया और अब वह पजाबी के लब्धप्रतिष्ठ नाटककारो में से है। इससे उलटा तजरुबा लोक-गीतों के सग्राहक देवेन्द्र सत्यार्थी का है। शुरू-शुरू में उसने पजाबी मे अच्छा काम किया। जब वह हिन्दी 'आजकल' का सम्पादक बना तो 'हम तुम' के बिना बात ही नही करता था। पर वहाँ से छुट्टी हो जाने पर उसने फिर पजाबी मे बोलना शुरू कर दिया। भारत के प्रसिद्ध कलाकार पृथ्वीराज कपूर ने बताया था कि जब वह लगातार उर्दू बोलता है तो उसका मुँह दुखने लग जाता है, और फिर जब तक पजाबी मे न बोले, चैन नही पडता। सारांश यह कि अपनी मातृभाषा-जैसी कोई चीज़ नही। अगर मन मे विचार है, भाव हैं, तो झरनो की तरह फूटकर निकलते है, भाषा चाहे कोई भी हो। पर जिस सुन्दरता और सच्चाई के साथ मातृभाषा में व्यक्त होते है और किसी भाषा मे नही।

हिन्दी की तरह पजाबी भी कई तरह से लिखी जाती है। जब इसको सस्कृत और हिन्दी के विद्वान् लिखते हे, तब सस्कृत शब्दो से लाद देते है, और आजकल की हिन्दी की तरह इसे भी इतना कठिन बना देते हैं कि आम आदमी तो समझ ही नहीं सकता कि लेखक कहना क्या चाहता है! जब यह फारसी के आलिमों के हाथ पडती है तो वे इसे फ़ारसी के भारी-भरकम लफ्ज़ों से लाद देते हैं। ये लेखक इतना नही समझते कि कोई भी रोज़ पराँठे नही खा सकता और यदि खायगा तो बदहज़मी हो जायगी। भाषा एक माध्यम है जिससे हम अपने विचार और भावनाएँ दूसरों तक पहुँचाते है, और यह माध्यम जितना सुगम हो उतना ही अच्छा होता है। हमें यह भी नही भूलना चाहिए कि पजाबी मुसलमानों, हिन्दुओ और सिखो की साँझी बोली है और इसे न मौलवी की बीवी, न ही भाई जी की सिहनी, और न ही पडित जी की पडिताइन बनाना उचित है। यह तो हम सबकी माँ है, और हम सब उसके बच्चे हैं। माँ की बोली तभी अच्छी है जब उसके बच्चे उसको समझ सकें। जैसे अग्रेज़ी मे लैटिन, ग्रीक, एग्लो सैक्सन, स्काच, कैल्श, गैलिक, पुर्तगाली और हिन्दुस्तानी तक के शब्द सम्मिलित है, इसी तरह ही पजाबी की नई बनाई जा रही इमारत के दरवाजे भी चारो ओर से खुले रखे जाने चाहिएँ और इसमे अरबी, फारसी, उर्दू, सस्कृत हिन्दी, और अग्रेजी तक के शब्दो को आने देना चाहिए। इस तरह से ही यह भाषा समृद्ध हो

सकती है, और उन्नति कर सकती है। ध्यान केवल इतना ही रखा जाना चाहिए कि भाषा का निजी स्वरूप न बिगाड़ा जाय।

आज़ाद होने के बाद हम अपनी बोली, कला और लोक-गीतो में साहित्यिक और सास्कृतिक दृष्टि से नई-नई विशेषताएँ देख रहे है। पश्चिमी सभ्यता का झूठा रौब कम हुआ है। तथाकथित सभ्य समाज के नीचे दबी हुई हमारी बोली और कला फिर से साँस लेने लगी है। इस रौब-तले हमारी हर अच्छी चीज की बेकद्री हुई थी। हमारी बोली, लोक-गीत, कढाई और चित्र-कला गँवारू ही समझे जाते रहे। अब फिर से इन चीज़ो का मूल्य मालूम पड रहा है। हम इन्ही दबी पडी, धूल-मिट्टी मे रौदी वस्तुओ को उठाकर, झाड-पोछकर, सँजो रहे है। मेरी यह पुस्तक भी अन्य रचनाओं की तरह इस ओर एक प्रयास है।

इस पुस्तक के पहले भाग मे मैने बताया है कि ग्राम्य जीवन और प्रकृति की सुन्दरता ने मुझ पर कितना प्रभाव डाला है। ग्राम्य जीवन की इसी सादगी और सुन्दरता की झलक मैने कागडा-कला के चित्रो मे देखी। मैंने यह भी बताया है कि कागड़ा-कला के चित्रों से मेरा परिचय लाहौर म्यूज़ियम में किस प्रकार हुआ, और लदन मे कैसे मेरे हृदय पर इनका और भी गहन प्रभाव पडा। इसके बाद, भारत लौटने के कुछ वर्षो बाद एक बगाली कला-पारखी के तीखे पत्र ने भी मुझ पर गहरा असर डाला। कई साल उत्तर प्रदेश मे रहकर मै १९४८ मे जब पजाब वापस लौटा तो १९५१ मे, मेरी, कागड़ा घाटी से जानकारी हुई और मैंने कागडा घाटी की कई यात्राएँ की। इस पुस्तक मे मेरी उन यात्राओ का उल्लेख है, जो मैंने १९५१ से १९६१ तक की। मार्च १९५४ और अप्रैल १९६० की यात्राओ मे कागडा-कला के पारखी और योग्य विद्वान् मिस्टर डबल्यू० जी० आर्चर और भारत के प्रसिद्ध उपन्यासकार मुल्कराज आनन्द भी मेरे साथ थे। इन यात्राओ मे मैंने कागडा के लोगों, किसानो और गद्दियो को देखा। उनके बारे मे मैंने पुस्तक मे जानकारी दी है। पुस्तक के दूसरे भाग में कांगडा के ३०० से अधिक लोक-गीत है, और उनके साथ ही कागडा की प्रसिद्ध लोक-कथा 'राँझू और फुलमो' है। इसके अतिरिक्त मैंने कागडा के खास शब्दो के अर्थ भी दिए है ताकि पाठको को उनकी जानकारी हो और वे इनमे रस ले सकें।

इस पुस्तक की तैयारी मे बहुत-से मित्रो ने मेरी सहायता की है। इनमे से मैं गुलज़ारसिह सधू और कर्त्तारसिंह दुग्गल का हृदय से आभारी हूँ। लोक-गीतों का सग्रह करने मे बहुत से कांगड़ा-प्रदेशी सज्जनो ने मुझे सहयोग दिया। इनमें से मगतराय खन्ना, कैलाशनाथ रैणा, श्रुतिप्रसाद, बेनीप्रसाद, राजेश्वर कायस्थ, बेलीराम आजाद और मत्या शर्मा के नाम विशेष रूप से उल्लेखनीय है।

यह पुस्तक मेरी उस खोज का परिणाम है जो मैंने कागडा घाटी की कला

लोक-गीत और प्राकृतिक सुन्दरता के सम्बन्ध मे की है । मुझे पूरी आशा है कि पाठक इसका अध्ययन उतने ही चाव से करेंगे जितने चाव और प्यार से मैंने इसे लिखा है ।

७ तीनमूर्ति लेन,
नई दिल्ली

महेन्द्रसिंह रंधावा
२० जनवरी १९६२

मेरा गाँव

कितने सुन्दर हैं होशियारपुर के गांव ! समूचे भारत मे यही एक इलाका है, जहाँ मैदानों मे से हिमालय की बरफ से ढकी चोटियाँ इतनी स्पष्ट दिखाई देती है। शिवालक की ऊदी-नीली पहाड़ियो ने तो सीरोवाल की उपजाऊ स्थली को और भी मनोरम बना दिया है। चारों ओर आमो के वाग तथा शीशम के झुड और गाँव का नाम वोदलां। जिसके निकट वन मे 'गरना साहिब' का गुरुद्वारा है।

हर मौसम में गाँव के इलाके की रौनक, और बदलते हुए दृश्य बड़े ही मन-भावन लगते है। बरसात मे जब चारो ओर से घनघोर काली घटाएँ उमडती है तथा मूसलाधार पानी बरसता है, तो बादलों की गरज सुनकर मोर चारो ओर से कैं-औ कै-औं का शोर मचा देते हैं। रात-भर मेढको की गुड़ै-गुड़ै वातावरण मे गूँजती रहती है। जब मेढक मौन हो जाते हैं तो झींगुर अपनी ही-ही की तान छेड़ देते है। रात को पीपल-तले तलैया पर जुगनुओ का नाच शुरू हो जाता है, और लगता है जैसे तारो का मेह बरस रहा हो।

दिन मे गाय-भैंसो का चारागाहो मे चरना और उनके पीछे सफेद सफेद बगलों का टिड्डियाँ चुगते फिरना ! बछड़ों का पूँछ ऊपर उठाकर मस्ती मे कुलाँचे भरना ! बरसात का मौसम मनुष्य को ही खुशी नही देता, पशु-पक्षी भी इस खुशी मे साझी होते है, और बादलो का स्वागत करते है। सलेटी बादलों में सफेद बगलो की पंक्तियाँ और भी सुन्दर लगती हैं, मानो प्रकृति के गले मे सफेद फूलों की वरमाला पडी हो।

बरसात मे, अमराइयो में खूब गहमा-गहमी रहती हैं। दिन मे कोयल की 'कुहू-कुहू' और रात को पपीहे की 'पी कहाँ, पी कहाँ' हवा मे गूँजती रहती है। हम तड़के ही बागो मे निकल जाते, और कमडंल मे पानी भरकर, वृक्षों से नीचे गिरे हुए आमो को चुन-चुनकर, पानी मे धो-धोकर चूसते जाते।

पद्रह-बीस पेडो के आम चूस लेते तो पता चल जाता कि सबसे स्वादिष्ट आम किस पेड के है। फिर उसी पेड के आमो का टोकरा मँगवा लेते और ठंडे पानी मे धोकर बाल्टी भर लेते। होशियारपुर के गाँवों का शीतल जल भी तो एक वरदान

है। गर्मियों में भी इतना ठंडा कि नहाओ तो कँपकँपी छूट जाय। हाँ तो गर्मियों में हम आमों को ठंडा करके, जी भरकर चूसते। कोई 'सिंदूरी' तो कोई तोते के रंग का; कोई पीला तो कोई मीठा तो कोई खटमिट्ठा; कोई खट्टा तो कोई सौंफिया।

मुसलमान भाइयों के बहिश्त में, हूरों और पानी के चश्मों का वर्णन किया जाता है। हम होशियारपुरियों के बहिश्त में मीठे आम हैं—और आमों को कौन सी वस्तु मात दे सकती है? हमारे भाइयों को अपने स्वर्ग में हूरें अथवा अप्सराएँ मिलें अथवा नहीं, लेकिन हमारा स्वर्ग तो हमारे पास है। और हर तीसरे साल सावन-भादों में हम इसका आनन्द ले सकते हैं। काम-धंधे और चिन्ताओं में डूबे, शहरों से ऊबे हुए कई लोग मुझसे पूछते हैं कि हमारी बीमारी का कोई इलाज है, और कि आत्मा को शान्ति कैसे मिल सकती है? इनको मैं यह परामर्श देता हूँ, "होशियारपुर के बागों में जाकर पन्द्रह दिन आम चूसो और भूल जाओ कि तुम पढ़े-लिखे हो।"

आमों का मौसम बीतता तो मक्की के भुट्टे चल निकलते। हम खेतों में झाड़-झंखाड़ को जला, भुट्टे भून-भूनकर खाते। और घर लौटकर खट्टी लस्सी का गिलास नमक और काली मिर्च डालकर पीते। भुट्टे पकने को होते तो कहारी के भाड़ पर उनके मुरमुरे भुनवाते, और पक जाते तो फुल्ले।

सर्दियों में बेलने (कोल्हू) चलते तो हवा गर्म गुड़ और राब की महक से भर जाती। कितनी स्वादिष्ट है गुड़ और राब की महक। मुझे अभी तक वह महक आती है। रात को कम्बल लपेटकर भट्ठी के पास 'खोरी' पर लेट जाना, और जाटों की बातें सुनना! गप्पों में बोदलों वालों का कोई मुकाबला नहीं कर सकता। आधा गाँव बेकार है, और चबूतरों तथा लकड़ी के ठूँठों पर पंक्तियाँ-की-पंक्तियाँ बैठी दीखती हैं।

जब सर्दी बढ़ जाती तो जाट दीवानखाने के बरामदे में सेगनियाँ जलाकर आग तापते और साथ-ही-साथ सन भी उतारते जाते! मैं गोपीचन्द, विक्रमाजीत राजा भोज और पूर्ण भक्त की कहानियाँ बड़े ध्यान से सुनता। कभी-कभी जाटों को भूगोल समझाने की चेष्टा करते हुए कहता कि धरती गोल है और सूर्य की परिक्रमा करती है। एक राजासिंह नामक भैंसों का व्यापारी था। उसने काफी पैसा जोड़ा था, किन्तु रहता था अत्यन्त मैली-कुचैली कोठरी में। उससे मैं कहा करता, "चाचा! घोर नरक में क्यों रहता है? पैसा साथ बाँधकर ले जायगा क्या? एक हवादार कोठा छतवा ले।" वह कहता, "तब छतवायेंगे जब धरती घूमना बन्द कर देगी, कहीं कोठे का मुँह ही दूसरी तरफ न हो जाय।"

पौष के महीने में सर्दी और बढ़ जाती। पहाड़ की ओर से कड़ाके की हवा चलती, रात को कोहरा पड़ता और तालाबों पर बरफ़ की तह जम जाती।

धुंध मे सूरज ऐसे दिखाई देता जैसे चाँद हो। भैंसें पानी पीने के लिए तालाब की ओर भागतीं, थूथनी पानी मे डालतीं और ठंड के मारे झट से बाहर निकाल लेतीं। खेस ओढे, और बाँहों की कैंची बनाए, जाट दाँत कटकटाते; पर अपना काम हिम्मत से करते जाते। मुझे भी बहुत सर्दी लगती। गर्म स्वेटर और कोट पहने, तथा सिर पर गर्म गुलूबन्द लपेटे जब प्रात:काल नित्यकर्म के लिए, घर से खेतों की ओर निकलता तो चरणसिंह मसंद कहता, "सरदार जी! आप पूनी की तरह लिपटे हुए कहाँ जा रहे हैं?" पौष के महीने मे छत पर धूप सेकने का बड़ा आनन्द है, तथा साग और मक्की की रोटी, कुछ और ही मजा देती है।

फाल्गुन और चैत मे खेतों की बहार जोबन पर होती। सरसों के पीले फूलों के साथ गेहूँ के खेत ऐसे लगते जैसे एक हरी तस्वीर पीले चौखटे मे जड़ी हुई हो। साग तोड़ने वालियों के लाल, पीले, नीले दुपट्टे हरी लहलहाती फसलों मे कितने सुन्दर लगते! लड़के छोलिया की टाट के पटाखे बजाते और जौ की कोंपलों की पीपनियाँ। नंगे पैर, ठंडी रेत पर चलने मे और भी आनन्द आता। यह कृषकों के लिए फुरसत का महीना है। बैसाखी के मेले पर कुश्तियाँ होतीं और लड़के लड्डू और जलेबियाँ जी भरकर खाते।

जब गेहूँ की फसल कट चुकती तो किसान गहाई मे जुट जाते। चिलचिलाती धूप के फराटे चलते और छाजों से उड़ाई होती। जब ज्येष्ठ आषाढ मास मे अनाज की भराई हो चुकती तब न्यौतों का दौर शुरू होता। इन न्यौतों में गाँवों के लोग एक दूसरे को दावत खिलाते—माश (उड़द) की दाल और लाल मिर्चों से रँगी हुई खट्टी लस्सी के पकौड़ों का रायता और लोह पर सिकी हाथ की रोटियाँ। यह १६१८ की बात है। अभी गाँवों में चुनाव की बीमारी नही पहुँची थी, और लोग मैम्बरी और मिनिस्टरी के सपने नही देखते थे। सब बड़े प्यार-सलीके से रहते थे और एक-दूसरे के दु:ख-सुख के साझी होते थे।

अभी मुँह अँधेरा ही होता, और सुबह का तारा चमक रहा होता कि हम रोटियाँ और अचार अँगोछे मे बाँधकर, बलगनों के स्कूल को चल देते। बहुत-सारे तो स्कूल पहुँच जाते, पर कई पीर-फलाही ही रुक जाते और शाम को घर आकर बताते कि पढ आए हैं।

बहुत-से लोग गर्मी पसन्द नही करते, पर मुझे गर्मियों के महीने बहुत अच्छे लगते हैं। दिन को ठंडे पानी से नहाने का मजा, और रात को मकान की छत पर सोने का। खुले आसमान के नीचे सोकर प्रकृति से सीधा सम्पर्क स्थापित हो जाता है। चारपाई पर लेटकर, चाँद-तारों की ओर देखना और देखते ही चले जाना! आकाश मे चाँद की दैनिक यात्रा कितनी रोचक है! पहाड़ों के पीछे से धुँधली-सी रोशनी का दिखाई देना, धीरे-धीरे उसका तेज होना और फिर सारे आकाश मे फैल जाना! चाँद और बादलों की आँख-मिचौली और भी आनन्द देती।

ध्रुवतारे और सप्तर्षि को उत्तरी आकाश मे देर तक दृष्टि गडाकर देखना, और ध्रुव भक्त की कहानी की याद हो आना। आकाश-गगा का अँधेरी रात में और भी चमकना, और मेरा यह सोचना कि इस धुँधली-सी पट्टी मे लाखो सूरज और सृष्टियाँ घूम रही हैं ––और अनेको मे जीवन हमारी पृथ्वी से भी आगे बढा हुआ होगा। एक तारो का गुच्छा-सा, जिसको सतबहनी कहते हैं, उसको देखते ही समय का अनुमान लगाना, और सोने की तैयारी करना। कुत्तो की चऊँ-चऊँ का रात की खामोशी को और भी बढाना! रात्रि के इस मौन मे कितनी शान्ति होती है। और इससे ही हमे शक्ति और जिन्दगी मिलती है। कभी-कभार तडका होते ही आँख का खुल जाना, और सुबह के तारे की ओर देखना! इसकी चमक कितनी भली लगती है! ऐसा प्रतीत होता है, जैसे यह आसमान का दीपक हो। इस समय सारा गाँव सो रहा होता और मुझे ऐसा लगता जैसे सारी प्रकृति की सुन्दरता का स्वामी मैं ही हूँ, और इसके सब भेद केवल मुझे ही मालूम हो। इसकी सुन्दरता का अवलोकन करते हुए मैं अपना-आपा भूल जाता और मुझे एक नशा-सा चढ जाता।

आमो के बाग होशियारपुर के वासियों को जिस्मानी खुराक ही नहीं देते, इनसे ग्रामीण जनता को रूहानी खुराक भी मिलती है। हरेक बाग मे सतो का डेरा होता है, और लोग फुरसत के समय गुरुवाणी का पाठ सुनने आते हैं। हमारे गाँव के बाग मे भी संत नारायणसिह, सत हरनामसिह और उनके साथियो ने बडी रौनक लगा रखी थी। गर्मी की छुट्टियो में, श्रोताओ मे हम भी सम्मिलित हो जाते। सत नारायणसिह बडे नेक इसान थे। सफेद भरी हुई दाढी, चेहरे पर नूर, और मीठे बोल। जब भी बात करते, शान्ति और खुशी बिखेरते। सत हरनामसिह 'योग वाशिष्ठ और 'सूरज प्रकाश' की बड़ी अच्छी कथा कहते और हम बडे चाव से सुनते।

बागों में बडी सफाई रहती. और झाड़ू देने वालो की कोई कमी न होती। कहते है कि भादो की चिलचिलाती धूप जाट को साधु बना देती है। सन्तो का सेवक एक गंगू नाम का जाट था। गुडाई से उकताया हुआ बाग की ओर आ गया। मैंने पूछा, "गंगू! कोई भजन-पाठ भी करते हो?" वह बोला, "समाधि तो लगने ही नही देते सन्त जी, कभी कहते हैं पानी भरो, कभी कहते हैं झाड़ू दो।" श्रोताओं मे पडौसी गाँव का राजपूत चौधरी भीखेखाँ सन्तो और गुरुवाणी का बडा प्रेमी था। आम के नीचे चारपाइयो की पंक्ति लगी होती, और सबसे चौड़ी खाट पर चौधरी साहब विराजमान होते। ठंडाई के दौर के साथ-साथ कथा भी चलती रहती। चौधरी साहब बडे विशाल हृदय थे। आधी के करीब जमीन, हमारे चाचा मेहरसिह के पास गिरवी रख चुके थे। मेहरसिह बडे कजूस थे और सन्तो को चढावा कम ही चढाते थे। कजूस भी क्यों न होते। जी तोडकर

उन्होंने दौलत पैदा की थी। जब मेह पड़ता तो शीशम उगाते। और कोई काम न होता तो सन ही उतारते या फिर गँडासे से चारा काटने लगते। सन्त हरनामसिंह सदा यही उपदेश देते, "माया के जाल में नहीं फँसना चाहिए। जो कमाओ, उसमें से साधु-सन्तों की भी सेवा करो।" मेहरसिंह की कंजूसी और तंगदिली को याद करके, कबीर साहब के इस दोहे का उच्चारण करते :

"सूमे धन राखन को दीआ,
मुगध कहे धन मेरा।
जम का डंड मूँड में लागे,
छिन में करे, नबेरा।"

जब पिछली दो पंक्तियों का उच्चारण होता तब चौधरी भीखेखाँ भी साथ-ही-साथ जोर से दोहराता, "जम का डंड मूँड में लागे, छिन में करे नबेरा।" और फिर बड़ी हँसी मचती।

अमृत वेला में सन्त कुए के पास स्नान करते, और मैं ढीगली से डोल खींचता। सरदी का मौसम होता। पानी में से भाप निकल रही होती और सन्त कच्छे को मसलते हुए कहते, "रामदास सरोवर नहाते, सब उतरे पाप कमाते।" सन्तों की सेवा करके बड़ा आनन्द आता। इन बातों से ही नम्रता और सेवा भाव उत्पन्न होता है, जो आजकल लुप्त-सा हो रहा है। कुए के पास जहाँ जिन्दगी की झलक देखते, वहाँ मौत की परछाइयाँ भी दिखाई देतीं। गाँव में किसी की मृत्यु हो जाती तो बाहर से लोग सोग मनाने आते। स्त्रियों की टोलियाँ कुए के पास डेरा लगातीं। पहले तो सब हँसती-खेलती रहतीं, पर कुए के पास आते ही, घाघरे कंधों से उतारकर पहन लेतीं और सहसा विलाप करना शुरू कर देतीं। गाँव पहुँचते ही, मीरजादी सबका चार्ज ले लेती और 'शम शम शेरा' कहकर परेड करवाती।

गर्मियों के महीनों में जब मेह की वाट देखी जाती है तब गाँव वालों के पास काम कम होता है। दंगल होते और गाँव के पहलवान बादाम खाकर कसरत करते। निक्की पहलवान अपना पाँच मन का पत्थर उठाता। शीशम के झुरमुट में कुलाराँ के भाँड बड़ी खूबी से नकलें उतारते। कई बार लोग काफी देर तक उनको पैसा न देते तो वे आपस में बात-चीत का ढंग इस तरह पलट लेते, "भई! यह गाँव लगता तो शौकीनों का है, पर है सब ठंडे-दार। लगता है जैसे सबने धनिया पी रखा हो।" यह सुनकर लोग हँस-हँसकर लोट-पोट हो जाते और नकलची फिर अपनी बात शुरू कर देता.

"एक चीज ऐसी है जो रब्ब के पास भी है नहीं!"

"क्या?"

"रब्ब के पास गुस्सा है नहीं।"

"एक चीज ऐसी है जो आसमान में भी है नहीं?"

'वह क्या ?'

"दरख्त।"

"एक चीज ऐसी जो धरती पर है नही !"

"वह क्या ?"

"नारे।"

"एक चीज ऐसी जो इन चौधरियो के पास भी है नही !"

वह क्या ?

'इनके पास न नही है।"

और बारात मे आए हुए जाट चौधरी झेप कर, झट से रुपया निकालने और भाँडों को थमा देते।

इस तरह लोग खुशियाँ मनाते। रात को रास रचाई जाती। रासधारिये आम तौर पर कृष्णलीला ही करते, और बारह-बारह साल के लडके मुँह पर आटा पोतकर गोपियाँ बनते। गोपियो को देखकर जाट मस्त हो जाते और दुअन्नियो का मेह बरसा देते।

कभी-कभी जलसे वालों की पार्टी भी आती, जिनमे नबिया, कालू और भोले सराई की ढढ सारगी वाली पार्टी बडा समा बाँधती। जलसा-पार्टी के आगे-आगे तीन नाचने वाले लडके, घाघरा पहनकर मोरों की तरह झूमते-इठलाते। उनके पीछे ढोलक वाला, मस्ती में आकर ढमक-ढमक करता और सारगी वाला झूमता हुआ-सा अपनी सारगी पर गज फेरता। करताल वाला, पोस्त के सरूर मे ढढ वाले के साथ मिलकर बोल उठता

'देवा आदि कुआँरिए
लुडीयाँ वर देह,
विच पहाडी आसन तेरा
मेरे कारज सिद्ध कर देह।'

और इसके बाद झट जलसा-पार्टी का अगुआ दोहा उठता और नाचने वाले अखाडे मे ऐसे कूद पडते जैसे मुर्गा-मुर्गी पर लपकता है।

कभी-कभी पहाड़ी कहार रतजगा करते, और पूरन भगत की कथा गा-गा कर सुनाते। इस तरह गाँव के लोग सीधे-सादे रग से अपना मनोरजन करते और जीवन का आनन्द लूटते।

कांगड़ा-कला की खोज की पृष्ठभूमि

गाँव का स्वर्ग १९२४ मे छूट गया, और मैं लाहौर मे मिशन कालेज मे भरती हो गया, और १९२६ मे गवर्नमेंट कालेज मे। यहाँ अमीरो के लडके बडे सूट-बूट पहनकर आते, और नाक भी रेशमी रूमाल से ही पोंछते। लाहौर का किले-जैसा डरावना रेलवे स्टेशन मुझे हमेशा उदास कर देता। जब कभी बौटनी की प्रयोगशाला मे अवकाश मिलता, तो मै लाहौर के अजायबघर मे चला जाता। यह गुम्बद वाली इमारत, जिसके सामने भगियो की तोप गड़ी हुई है बड़ी विचित्र-सी है, ढालो, तलवारो, पुरानी बन्दूकों, और भी कई छुट-पुट चीजो से भरी हुई! प्रवेश-द्वार के पास शीशे की अलमारियों मे कुछ तसवीरें लगी हुई थी। इन चित्रो के लाल, हरे, नीले और पीले रग मुझे सदा अपनी ओर आकर्षित करते, इनमें राजा-रानियो के साथ, बादलो के सुन्दर दृश्य देखने को मिलते; तो कही भवनों की छत पर गर्दन उठाए और बादलों से प्यार कर रहे होते, और कही कुओ पर स्त्रियाँ घड़े लिये हुए पानी भर रही होतीं। इन चित्रों मे, चित्रकार ने ग्राम्य जीवन को इतने प्यार और उत्साह से दर्शाया था कि इनको देखकर मुझे अपना गाँव याद आ जाता। पूछने पर पता चला कि ये चित्र हमारे पडौसी जिले कागडा मे अठारहवी और उन्नीसवी शती मे चित्रित किये गए थे।

सन् १९३३ मे मैंने आई० सी० एस० की परीक्षा पास की, और दो साल लदन मे काटे। गाँव की शान्ति की तुलना मे लदन के यातायात के कोलाहल से जी घबरा उठता। डामर से पुती सड़के और धुएँ से काली हुई पत्थर की इमारतें, जो सिर उठाकर सूरज की रोशनी और खुली हवा को ढूँढने की व्यर्थ कोशिश कर रही थी, बडी निराश-सी दिखाई देती। मन में कई बार उमंग उठी कि किसी खुली जगह निकल जाऊँ और धरती माता के दर्शन करूँ। जब हैम्प्सटैड हीथ मे मैंने हरी घास और मिट्टी देखी तो बडी खुशी हुई। मिट्टी का डला हाथ मे लेकर यो लगा जैसे अपने गाँव की धरती की निशानी हाथ लग गई हो। इंसान इसलिए नही बना कि वह कुर्सियो पर बैठे और मकान की चारदीवारी मे बन्दी होकर रह जाय। जब मनुष्य का प्रकृति से सम्बन्ध छूट जाता है तो वह घुलने लगता है और उसमे वे सब गुण जो मिट्टी हवा और धूप पैदा करती है लुप्त

होने शुरू हो जाते हैं। गाँव के लोग आम तौर पर मिलनसार, सहृदय और सच्चे होते है, और यह गुण प्रकृति से, नित्य का निकट सम्बन्ध ही पैदा करता है। इन लोगो को उठाकर पक्के शहरो मे डाल दो तो यही चालाक, धोखेबाज़, झूठे, तग-दिल और कुटिल बन जाते है।

किसी ने मुझसे पूछा था कि भारत के ग्रामीणो और पश्चिम के वासियो मे बडा अन्तर क्या है? मैने उत्तर दिया कि हमारे भीतर दिल है, मोहब्बत है, और हम एक-दूसरे के दुःख सुख के साझी होते है, और वे लोग चाहे चतुर और मेहनती है पर बडे कोरे हैं जिन्हे अपने को छोड़कर कोई और दिखाई नहीं देता। इनके फूलो मे रंग तो है पर सुगधि नही। अगर कुछ-एक मे सुगधि है भी तो केवल नाम-मात्र की। हमारे फलो में रग चाहे न हो, सुगधि अवश्य होती है। पश्चिम के लोगो के बारे मे पूरणसिंह ने ठीक ही अनुभव किया था कि यहाँ मुश्किल से ही कोई दिल वाला दीखता है। स्त्री-पुरुष और माँ-बेटे के बीच एक गहरी-सी अदृश्य खाई है। पड़ौसी का पडौसी से कोई सम्बन्ध नहीं। हर अग्रेज का घर उसका किला होता है, इसकी फसीलें मजबूत और ड्योढी का द्वार मजबूत ताले से बन्द होता है। पहले तो कोई एक-दूसरे के घर विना बुलाए जाता नही, यदि कोई भूला-भटका चला ही जाय तो कोई पानी तक को नही पूछता। एक-दूसरे के प्रति ये इतने कोरे हैं कि मुझे हैरानी होती थी। अगर इनको रेलगाडी मे बैठा देखो तो और भी अचम्भा होता है। हर आदमी अखबार के पीछे मुँह-छिपाए बैठा होता है। कोई साल-भर बाद, मुझे इस ठडी-सुन्न और बलगमी स्वभाव की दुनिया का अनुमान हुआ। ठीक है, लदन चाहे लाखो पुरुष-स्त्रियोसे भरा है, पर एक विदेशी के लिए, जिसका कोई दोस्त, मित्र न हो, यह अरब के मरुस्थल से भी सूनी जगह है।

मुझे जब भी पढाई से फुरसत मिलती आर्ट गैलरियों और ब्रिटिश म्यूजियम मे चला जाता। वहाँ कागडा का एक चित्र देखकर बडी खुशी हुई और गाँव याद आ गया। यह चित्र 'वासक सज्जा' नायिका का है, और म्यूजियम वालो ने इसके कार्ड भी छापे हुए है। एक सुन्दरी लाल घाघरा पहने और नीला दुपट्टा ओढे, पत्तो की सेज पर नदी किरारे बैठी है। वह अपने प्रियतम की प्रतीक्षा मे है। यदि फूलदार झाडियाँ हैं, और चन्द्रमा आकाश को सुशोभित कर रहा है। इस चित्र मे भारतीय नारी की सुन्दरता और कोमलता बडी कारीगरी से दिखाई गई है। जब कभी अकेले बैठे हुए इस चित्र का ध्यान आता कि प्यार की वह जोगन प्रेम मे डूबी हुई, अपने प्रियतम का अभी तक इन्तज़ार कर रही होगी, तो दिल मे टीस-सी उठती और कागडा के चित्र, जो मैंने लाहौर मे देखे थे, फिर से याद आ जाते।

दो वर्ष बाद स्वदेश लौटा और अक्टूबर १९३४ मे मुझे जिला सहारनपुर मे असिस्टेंट कलेक्टर नियुक्त किया गया इस जिले के देहातों की गरीबी देख कर

दिल मे जोश आया कि इनके सुधार का काम किया जाय। उन दिनो अंग्रेजो का बोलवाला था, और कोई अफसर दम नही मार सकता था। वे दिखावे का ग्राम-सुधार ही चाहते थे, असली नही। अगर कोई लगन के साथ काम करता तो उसको दिल से नफरत करते, चाहे मुँह से कुछ न कहते। अंग्रेज अफसरो की परवाह न करते हुए मैंने यह काम सहारनपुर, फैजाबाद और अल्मोडा के जिलो मे खूब उत्साह से किया, और लोगो मे एक लहर पैदा कर दी।

१९३८ मे मेरा तबादला अल्मोडा हो गया। यह पहाडी जिला सस्कृति और कला का केन्द्र बना हुआ था, और बहुत-से पश्चिमी कलाकार, विद्वान् और योगी यहाँ कालीमठ के पहाड पर रहते थे। यहाँ मेरी भेंट बरूस्टर नामक एक अमरीकी कलाकार से हुई। शनिवार और रविवार, मैं उन्हींके यहाँ व्यतीत करता।

वहाँ से बिनसर के पहाडो, और नैना देवी तथा नन्दाकोट की बरफानी चोटियो के अत्यन्त सुन्दर दृश्य दिखाई देते। बरूस्टर साहब ने कुमाऊँ की वनस्पतियो, पहाडो और मदिरो के बडे भव्य चित्र बनाए थे। ये मेरे मन को बहुत भाते।

१९४० मे मुझे इलाहबाद बदल दिया गया, और बरूस्टर की कला पर मैंने एक छोटी-सी किताब लिखी। कला के सम्बन्ध मे यह मेरी पहली पुस्तक थी, और मुझे इस बात का बडा मान था कि कला के पारखियों मे अब मेरा भी नाम जुड गया है।

१९४२ मे जब मै रायबरेली का डिप्टी कमिश्नर था, जी मे आया कि अपनी पुस्तक की प्रतियो के बदले कला के अन्य विद्वानो से कला-साहित्य इकट्ठा किया जाय। इसी सिलसिले मे बगाल के कला-पारखी अर्धेन्द्र गगोली को मैने अपनी किताब भेजी, और बदले मे उसकी एक छोटी-सी पुस्तक, जिसमे कागडा शैली के चित्र थे, भेजने का अनुरोध किया। कुछ दिनो बाद गगोली का पत्र आया। उसमे लिखा था, "आपकी किताब किसी काम की नही। आपको मालूम ही नही कि भारतीय कला है क्या ? यदि आप कागडा-शैली के चित्र देख पायें तो आपको पता चले कि कला किसको कहते है।" अपनी पहली किताब की निन्दा पढकर बडा क्रोध आया और गगोली के पत्र के टुकडे करके मैंने बाहर फेक दिए। गुस्सा चाहे बहुत था, पर उसकी कागडा-कला की उत्कृष्टता की बात मेरे मन मे जैसे गड-सी गई। १९४५ में, मै इंडियन कौंसिल ऑफ एग्रीकलचरल रिसर्च का सेक्रेट्री बनकर दिल्ली आया, और देश के बँटवारे तथा आजादी के बाद, अपना नाम उत्तर प्रदेश से बदलवाकर पजाब मे लिखवा दिया। १९४८ मे जब पजाब आया तो टूटे-फूटे, धूल में मिले, लुह-लुहान पजाब मे यहाँ-वहाँ, हर कही शरणार्थी-कैम्प ही दिखाई देते। १९४९ मे पजाब सरकार ने जमीन की बाँट का काम मुझे सौंपा। यह काम मैंने त्रिलोकसिंह और प्रेमनाथ थापर के साथ मिलकर किया।

उजडे हुओं को   और कई नई योजनाएं   मुझे बडा सन्तोष हुआ

कांगड़ा में थार टी एस्टेट नाम से चाय बागान है। कांगड़ावासी चाहते थे कि यह उनको अलॉट कर दिया जाय।

१९५१ तक, जब काम-काज का जोर ज़रा हल्का पड़ा, मैंने सोचा कि कांगड़ा का दौरा करके इस चाय-बागान को देखा जाय। अप्रैल १९५१ में, मैं पालमपुर पहुँचा और घोड़े पर सवार होकर बहुत सारे गाँव देखे। धौलीधार को दूर से तो कई बार देखा था, पर निकट से देखने का अवसर अब ही मिला। घाटी की सुन्दरता देखकर मुझ पर वही असर हुआ जो राँझा का हीर को पहली बार देखने पर हुआ होगा। जी चाहता था कि इन बर्फानी पहाड़ों को देखता ही रहूँ, देखता ही रहूं!

इन दौरों में ही सोभासिंह चित्रकार से मिलने का अवसर प्राप्त हुआ। इन्होंने अन्दरेय गाँव के एकान्त में कुटिया बनाई है। सोभासिंह ने कांगड़ा-चित्रों के एक संग्रह का ज़िक्र किया जो भवारना के मियाँ रामसिंह के पास था। दिल में शौक उठा कि कांगड़ा-कला की उत्पत्ति और विकास की खोज की जाय। इस बीच मुझे अम्बाला का कमिश्नर बनाकर भेज दिया गया। जालन्धर के कमिश्नर के पास, अम्बाला के कमिश्नर के मुकाबले में ज्यादा अपीलें होती थी। और जालंधर डिवीजन की कुछ अपीलें अम्बाला कमिश्नर को भुगतानी पड़ती थीं। मैंने कांगड़ा की अपीलें स्वीकार कर ली, ताकि इस बहाने मुझे कांगड़ा का इलाका देखने का और अधिक अवसर मिल सके।

इन्हीं दिनों लाहौर से, चालीस प्रतिशत कांगड़ा-शैली के चित्र, पंजाब म्यूज़ियम शिमला में आ गए। यह भारत के पंजाब के लिए, लाहौर म्यूजियम के कला-भंडार का भाग था। इनमें से बहुत-से चित्र बड़े सुन्दर थे। मैंने सोचा कि साठ प्रतिशत कमी-चित्रों की बाँट के कारण हो गई है, उसको पूरा किया जाय। अम्बाला में एक बहुत बड़े सांस्कृतिक मेले का आयोजन किया, और उसकी आमदनी से न केवल बहुत-से पुस्तकालय ही खोले, इसके साथ ही कांगड़ा घाटी में जो चित्र मिले, सब खरीदकर पंजाब म्यूज़ियम शिमला में रख दिए। फिर पंजाब सरकार को प्रेरित किया कि वह भी इस कला-संग्रह के अभियान में योग दे। पंजाब सरकार के मंत्री सरदार प्रतापसिंह कैरों और सरदार उज्ज्वलसिंह के सहयोग से बीस हज़ार रुपया प्रति वर्ष कांगड़ा चित्रों की खरीद के लिए मिलने लग गया और भारत के दूर-दूर के नगरों में से कांगड़ा के जो भी चित्र उपलब्ध हुए, सब-के-सब इकट्ठा करके पंजाब म्यूज़ियम के हवाले किए।

भारत सरकार के सूचना और कला-मंत्रालय ने १९५३ में मुझसे कहा कि कांगड़ा-कला पर किताब लिखूं। कलाकार सुशील सरकार और फोटोग्राफर मोतीचन्द जैन को संग लेकर मैंने कांगड़ा घाटी का एक और दौरा किया और कांगड़ा, गुलेर, लम्बाग्राम और नदौन में राजाओं के चित्र-भंडारों की खोज की।

इसी वर्ष ही पंजाब सरकार ने मुझे पंजाब का डैवेलपमैंट कमिश्नर नियुक्त किया और मुझे सारे पंजाब के गाँवों में घूमने की छूट मिल गई। पंजाब के गाँवों के दौरे फिर से बसाने के महकमे के काम के दौरान भी, काफी किए थे। गाँव बसाने के काम में, यह अनुभव बहुत काम आया। सबसे बड़ी खुशी तो मुझे यह हुई कि अब मुझे कांगड़ा के गाँवों की सेवा करने का अवसर मिला।

अगस्त १९५३ में मैं शिमला से पंजाब की नई राजधानी चंडीगढ आ गया। यहाँ मुझे श्री डब्ल्यू० जी० आर्चर की पहाड़ी चित्र-कला पर लिखी हुए पुस्तक पढ़ने का अवसर मिला। इस पुस्तक ने मुझे बड़ा प्रभावित किया। सबसे बड़ी बात तो यह थी कि आर्चर ने लन्दन में बैठकर जो अनुमान लगाए थे, वे सही निकले। इस सच्चे और गहरी खोज के काम ने, मेरे दिल में आर्चर के लिए बड़ा सम्मान जगाया। मैं उनको व्यक्तिगत रूप से नहीं जानता था, पर फिर भी पत्र लिखा। उनका बड़ा प्यार-भरा जवाब आया। मैंने उन्हें कांगड़ा आने का निमन्त्रण दिया। मुझे बड़ी खुशी हुई कि वे १९५४ में भारत, मेरे पास आए। भारत के बड़े लेखक डाक्टर मुल्कराज आनन्द भी उनके साथ थे। हम तीनों ने कांगड़ा का दौरा किया।

शिवालक

शिवालक की नीली पहाड़ियों के पीछे बर्फ़ से ढकी चोटियों की एक पंक्ति है, जो जनवरी मास मे दिखाई देती है। धौलीधार नामक यह पर्वत-खड, पौष में एक जादू की तरह, उत्तर में दूर क्षितिज तक प्रकट होता है तथा वैशाख मे फिर धूल और धुंध में लुप्त हो जाता है। शिवालक की नीली पहाड़ियों की पृष्ठभूमि मे यह अत्यन्त सुन्दर प्रतीत होता है। लगता है जैसे यह पंजाब के मैदानो का मुकुट हो।

जिला होशियारपुर में अपने गाँव के मकान की छत पर खड़ा, मैं कई बार इस बर्फ़ की चोटी को अपलक निहारता हुआ, विचारों में डूब जाता था। मुझ पर सदा ही इसका जादू-सा प्रभाव होता। फिर मैंने इस हिमशिखर का दृश्य बनखंडी के एकान्त बगले से देखा, जो होशियारपुर से ऊना जाने वाली सड़क पर बना हुआ है। मुझे लगा जैसे यह बगला शिवालक की पहाड़ियों मे किसी बाज का घोसला हो, और मैं यहाँ से धौलीधार की अनुपम छटा को देखता नहीं थकता था। चिन्त-पुरनी के मंदिर से, मैंने इस बर्फानी पहाड़ का दृश्य और निकट से देखा, और मुझे यह चुम्बक की तरह अपनी ओर खींचता हुआ प्रतीत हुआ। सूर्य के प्रकाश मे यह चोटी ऐसे चमक रही थी जैसे चाँदी की डली हो, या कोई, हिमालय पर्वत की नवविवाहिता रानी किसी गहरी प्रतीक्षा मे खोई हुई हो।

कांगड़ा की घाटी, अपनी कोमल सुन्दरता के लिए विख्यात है। नाटी-नाटि पहाड़ियों और छोटे-छोटे घरो, कोठियो, हवेलियों तथा मंदिरो के बीच सीढीदार खेत हैं। लहरो की तरह फैले इन खेतों के किनारों मे से बहती, मोतियों-जैसे स्वच्छ बर्फ से ठडे पानी की अगणित कूलें हैं जिनके कारण यह घाटी बड़ी मनोरम लगती है। इस घाटी की कमनीय सुन्दरता के विपरीत धौलीधार के हिम से ढके, आकाश से बातें करने वाले पहाड़ है, जिनमे से बर्फानी नदियाँ नाचती-गाती हुई गुज़रती है। इसके चीड़ के जगलो और मैदानो पर खामोशी और शान्ति का साम्राज्य है। किसी देश की सुन्दरता का कारण, वहाँ के प्राकृतिक दृश्य ही नहीं उसके निवासी भी होते है। कांगड़ा की घाटी मे प्रकृति का सौन्दर्य वहाँ के बसने वालो के सौन्दर्य से और भी चमक उठा है। धौलीधार के सघन जगलो मे गद्दी नौजवान और सुन्दर गद्दी स्त्रियाँ घूमती फिरती है। उनका जीवन शुद्ध ग्रामीण सादगी का जीवन
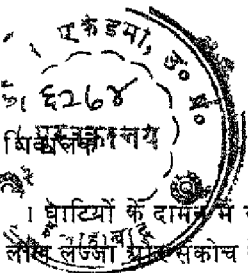
। घाटियों के दामन में राजपूत और ब्राह्मण सुन्दरियाँ अपनी सुन्दरता को, लाख-लौकिक लज्जा और संकोच के पर्दों से, छिपाती फिरती है। कमर पर भले-भले से घाघरे, नाक में नवेली नथ और सिर पर चमकते हुए चौक। इस घाटी मे हमे कागड़ा की अति सुन्दर कला के नमूने भी मिलते है, जिनमें प्रेम की भावनाओं को रगो और रेखाओ के अत्यन्त कोमल सम्मिश्रण ने अमर कर दिया है। दो शताब्दियाँ बीत जाने के बाद भी, उनमें दिखाए गए पात्र जैसे जीते-जागते, हंसते-खेलते दिखाई देते है। मेरे मन मे आया कि कागडा की इस अनुपम घाटी को और निकट से देखूँ और इसका आनन्द लूँ।

फाख्ताओ की घूं-घूं से हवा गूंज रही थी, और मोर मस्ती मे भर मकानो की छतो पर नाच रहे थे। अपने चमकते पखो का प्रदर्शन करके वे मोरनियों का मन-मोह रहे थे। अकुर फूटने की ऋतु थी। शहतूत की कोमल पत्तियाँ निकल रही थी और शाखाएँ, जो एक सप्ताह पूर्व ईंधन की तरह लगती थी, उनमे भी हरियाली झलक रही थी। लाखो कोपलें, फूटने की तैयारियाँ कर रही थी। आम के बागो की उदासी भी खत्म हो रही थी। सारे वृक्ष हल्के पीले बौर मे लदे हुए थे। रात को पपीहे का 'पी कहाँ-पी कहाँ' का राग खूब समाँ बाँध रहा था, और दिन मे कोयल की कुहू-कुहू बागो की रौनक को बढा रही थी। मेरे सामने धौलीधार की सफेद प्राचीर, बर्फ से ढकी हुई दिखाई दे रही थी, और उसके नीचे शिवालक की नीली पहाडियाँ और भी सुन्दर लग रही थी।

कागड़ा-घाटी के पहाड़ों, नदियों, जन-जीवन तथा कला-सौन्दर्य की खोज, मैंने मार्च १९५१ मे आरम्भ की। कागडा, व्यास नदी की घाटी है। यहाँ व्यास मे और भी कई नदियाँ मिलती है। हमने व्यास नदी को मीरथल के नए पुल द्वारा पार किया। मुकेरियाँ-पठानकोट सडक पजाब की सबसे रमणीक सड़क है। पहाडियो के दामन मे, यह सडक आम के बागो मे मे गुजरती हुई, कई बरसाती नालो को फलाँगती है जिन पर जगह-जगह पुल बनाए गए है। मीरथल का पुल इजीनियरी विज्ञान का एक उत्तम नमूना है। जब हम इस इलाके मे से गुजरे तो आम के पेडो पर हल्का-पीला बौर आया हुआ था, जिनसे हवा मे सुगंधि फैली हुई थी। खेतों मे चारो ओर हरियाली थी, और गेहूँ की खेतियाँ प्रातःकाल के शीतल पवन से झूम रही थी। आठ मील मोटर चलाने के बाद हम डमठाल के आश्रम में पहुँच गए। यह आश्रम शिवालक की गोद मे बना हुआ है। आश्रम तक पहुँचने के लिए पहले हम एक बडे सघन वट-वृक्षो के झुड मे से गुजरे। बड़ के वृक्ष हमें ऐसे लगे जैसे रहे रग के मंदिरो के झुरमुट हो। इनकी ठडी-मीठी छाया मे यात्री सो जाते हैं और इनके सघन घेरो में से सूरज की किरणें, कभी-कभी ही नीचे पहुँच पाती है, और हमेशा अधेरा-अधेरा रहता है। बड के वृक्षों की लटकी हुई हवाई जड़े, हिमालय के किसी तपस्वी की गुंथी हुई जटाओ-सी प्रतीत होती हैं। हम एक

अतिप्राचीन, अतिपावन और अनुपम आश्रम मे प्रवेश कर रहे थे। आश्रम के अन्दर, एक सुन्दर ड्योढी मे से होकर जाना होता है। बाहर के बड़े फाटक पर एक बहुत बड़ा मधुमक्खियो का छत्ता लगा हुआ था। इसके बाद महन्तो की समाधियाँ बनी हुई थी।

यह आश्रम तोलाराम के पुत्र नारायण का बनाया हुआ है जो गुरुदासपुर के खानोवाल नामक गाँव का ब्राह्मण था। नारायण की चमत्कारी शक्ति के बारे मे कई किस्से प्रचलित है। कहा जाता है कि डमठाल के पास से एक सौदागर गुज़रा जिसके पास खच्चरो पर चीनी की बोरियाँ लदी हुई थी। खेलने वाले कुछ बच्चो ने सौदागर से पूछा, "बोरियों में क्या है ? ' सौदागर ने कहा, "चीनी।" लडको मे से नारायण नामक एक बालक ने कहा, "बोरियो मे रेत है।" सौदागर ने इस लडके की बात पर कोई ध्यान नही दिया किन्तु ठिकाने पर पहुँचकर उसने देखा कि बोरियो मे तो सचमुच रेत ही था। लौटती बार सौदागर को फिर डमठाल मे लडके के साथ खेलता हुआ नारायण मिला। इस बार नारायण ने कहा, "बोरियो मे चीनी है। यह देखकर सौदागर की खुशी की सीमा न रही कि बोरियाँ सचमुच चीनी से भरी हुई है। इस घटना के बाद यह मशहूर हो गया कि ब्राह्मणो के उस लडके मे कोई शक्ति है। इसी तरह की एक कहानी शेख फ़रीद के बारे मे भी प्रसिद्ध है, तभी उनको फकीर शकर-गज कहा जाता है।

कुछ समय बाद नारायण को मुगल बादशाह जहाँगीर ने शाहदरा बुलवा लिया और उसकी करामात को परखने के लिए विष के छह प्याले दिए। नारायण सारे-के-सारे प्याले, हँसते-खेलते पी गया। यह देखने के लिए कि वह जहर भी है अथवा नही, सातवाँ प्याला एक हाथी को पिलाया गया। हाथी पलक झपकते ही ढेर हो गया। इस चमत्कार की कथा मदिर के अन्दर दीवार पर बने एक चित्र मे दिखाई गई है, जिसमे नारायण विष का प्याला गटागट पी रहा है, और उसकी पीठ पर उसके गुरु भगवान् के दोनो हाथ उसको इस कठिन घडी से पार उतार रहे हैं।

कहा जाता है कि डमठाल मे पानी की बड़ी तगी थी। इस कारण ग्राम-वासियों को बडी कठिनाई होती थी। नारायण एक बार मदिर के पीछे जगल मे तपस्या कर रहा था कि अचानक ही उसने धरती मे चिमटा मारा और बीच मे से जल का स्रोत फूट निकला। इस स्रोत पर अब पक्का तालाब बना दिया गया है। इसके एक ओर एक गुफा है, जिसमें नारायण तपस्या किया करता था।

इस आश्रम का मदिर नूरपुर के राजा जगतसिह ने १६४६ मे बनवाया था। उन दिनों शाहजहाँ का राज था। इस मदिर के कथा-भवन की दीवारों को कागड़ा-कला के चित्रों से सजाया गया है। जब हम वहाँ पहुँचे तो लगता था कि इसकी छत अब गिरी कि अब गिरी। सारे-के-सारे मदिर मे मानो ततैयो का

साम्राज्य था। हर कमरे में उन्होंने डेरा डाल रखा था।

नारायण के चित्रों को छोड़कर बाकी भित्तिचित्र, महाभारत और रामायण के कई दृश्य प्रस्तुत करते है। कहीं कृष्ण, गोपियों के साथ खेल रहे है, कहीं श्री रामचन्द्र का ब्याह रचाया जा रहा है। इसी मंदिर में पहाड़ी राजे, जब कभी उन पर कोई विपत्ति आती आकर आश्रय लिया करते थे। कहा जाता है, राजा वीरसिंह नूरपुरिया, जब महाराज रणजीतसिंह के डर से भाग खड़ा हुआ था तो उसने यहाँ आकर शरण ली थी। एक कोने में, एक स्त्री हिरन के पास खड़ी एक वृक्ष के नीचे इकतारा बजा रही है। कांगड़ा की कला-कृतियों में यह दृश्य बार-बार आता है। इस चित्र का विषय विरहिणी नायिका है, जो अपने नायक की याद में कान्त मृग को दुलरा रही है। इसी भाव को इस पंक्ति में प्रकट किया गया है 'पी मिलन की चाह चित्त, खड़ी बजावत तार।'

आश्रम दोमंज़िला है। चौबारे में एक कमरा है, जिसको रंगमहल कहते है। यह १८५० ई० में बनाया गया था। इस कमरे के भित्तिचित्र, सिख-कला-शैली पर बनाए गए है। प्रायः चित्रों में सुन्दर दाढ़ियाँ, तथा पगड़ियों में मोती और हीरे जड़े हुए दिखाए गए है। रामायण के भी कुछ दृश्य अंकित किये गए है। एक चित्र में एक फिरंगी अपनी पत्नी के साथ बग्घी में बैठा हुआ दिखाया गया है। बग्घी के चार घोड़े खींच रहे हैं। इससे प्रकट होता है कि यह चित्र सिखों के बाद, अंग्रेजी शासन-काल में चित्रित किया गया होगा। आश्रम के मन्दिरों की भी कई तसवीरें है, जिन्हें गेरुए तथा अन्य गोरे रंगों में सजाया गया है।

हरिदास, जो इस आश्रम का १९३४-३५ में महंत था, कांगड़ा के चित्रों का प्रसिद्ध संग्रह अपने साथ ही ले गया। आजकल के महन्त के पास केवल दुर्गा के चित्रों का एक सैट है, जिसे १९४७ में एक जाट फौजी अफसर पेशावर के किसी मंदिर से लाया था। वह अफसर अपने साथ गंधार की मूर्ति-कला के भी कई नमूने लाया, जिनमें कुछ महात्मा बुद्ध की मूर्तियों के शीश थे। एक मूर्ति, ऋषि-मार्कण्डेय की भी है। लछमनदास ने मार्कण्डेय की मूर्ति अपने कमरे में रखी हुई है और मज़ेदार बात यह है कि इस मूर्ति में तथा महन्त लछमनदास की शक्ल में, बहुत ज्यादा समानता है।

महन्तजी बड़े आदर भाव से मिले। इसके बाद हम आश्रम के पीछे के जंगल में चले गए। इसमें शहतूत और आम के असंख्य वृक्ष हैं। हवा में कामनी और बसूहटी के फूलों की महक बसी हुई थी, और धरती पर नीले फूलों का बिछौना बिछा हुआ था। आश्रम के एकान्त और शान्ति का जी भर आनन्द लेकर हमने मंदिर से प्रस्थान किया, और उसे भित्तचित्रों का ध्यान रखने को कहा। लगता था, उसे इन चित्रों के मूल्य का ज़रा भी ज्ञान नहीं था।

डमठाल के आश्रम से, शाम को विदा होकर हमने चक्की नदी को पार किया। सडक की ओर ढलान मे मिट्टी और रेत की कई तहे दिखाई देती है, जिनमे हर तरह के गोल वट्टे जडे है। यह रेत, यह मिट्टी, ये गोल गिट्टे, ये पत्थर, वास्तव मे शिवालक दरिया की यादगार है जिसको इडो-ब्रह्म की महान् नदी भी कहते है। इसमे ब्रह्मपुत्र, गगा और सिंधु, तीनो नदियो का जल बहता था, और शिवालक का यह दरिया पजाब और सिंध के माईओसीन नामक सागर मे जाकर समाप्त होता था, जो टीत्थस महासागर का एक भाग था। कोई दस लाख वर्ष हुए, धरती मे उथल-पुथल मची, और पश्चिमी पंजाब मे पोठोहार का पथरीला धरातल, ऊपर खिसक आया। तभी शिवालक दरिया का बहाव भी रुक गया। शिमला के पश्चिमी ओर हिमालय पर्वत-श्रेणियो के जल का प्रवाह चिनाब, रावी, व्यास और समतल की ओर चला गया, और शिमला के पूर्व की ओर का प्रवाह गगा, यमुना आदि नदियो के प्राचीन जल-मार्गो से बगाल की खाडी तक पहुँचने लग गया। इन नदियो के दिशा पलटने का सबसे बडा प्रमाण यह है कि ये सब-की-सब अपने बहाव के दौरान अग्रेजी अक्षर 'वी' का रूप धारण कर लेती है। और इनके दौर उत्तर-पश्चिम की ओर होते है। शिवालक दरिया के टीले, पत्थर, गिट्टे, रेत, और मिट्टी एक बार उभरी और शिवालक के पहाडो का रूप धारण कर गई। तो वास्तव मे शिवालकके पहाड, पुराने शिवालक दरिया के अवशेषो का नया रूप है।

इस बात का एक और प्रमाण, जल-जीवो के बारे मे भी मिलता है। जो जानवर सिंधु नदी मे मिलते है, वही गगा मे मिलते है और वही ब्रह्मपुत्र मे, किन्तु दक्षिण भारत की महानदी मे नही मिलते। अनेको जल-धाराएँ, सिंधु और गगा की साझी है, और इसी प्रकार कई और जल-जीव भी एक समान है। यह बहुत बडा प्रमाण है कि सिंधु और गगा किसी जमाने मे मिलकर बहती थीं। ये जल-जीव खुश्की से, हजारों मील चलकर एक नदी से दूसरी नदी मे नही जा सकते थे। इससे यह सिद्ध होता है कि ये तीनों नदियाँ किसी समय एक ही धारा के रूप मे बहती थी।

भारत के नदियो की आवारागर्दी बडी मशहूर है। सिंधु और गगा नदियों मे कोई खास ऊँची पहाडी नही, और धरती की सतह मे, मामूली-सा अन्तर एक नदी को दूसरी से मिला सकता है। पहले इण्डो-ब्रह्म नामक नदी, अरब सागर मे जाकर गिरती थी पर धरती के ऊँचा हो जाने के कारण, महानदी, दो धाराओं मे बँट गई। एक अरब सागर की ओर सिंधु के रूप में, और दूसरी बगाल की खाड़ी की ओर गंगा और ब्रह्मपुत्र के रूप मे। भूतत्त्ववेत्ताओ की राय मे, इस बाँट को हुए अधिक समय नही हुआ। अरब सागर में गिरने वाली नदियो का बहाव, धीरे-धीरे बगाल की खाडी की ओर होता रहा होगा, और इसकी आखिरी

कडी, गंगा और यमुना का अलगाव शायद ऐतिहासिक काल मे कभी हो पाया हो। इससे पहले यमुना का पानी पश्चिम की ओर बहना रहा होगा, और फिर कभी गगा मे, कभी सिंधु मे या फिर सूख चुके उस दरिया मे जा मिलता होगा जिसके निशान अभी भी राजपूताना मे मिलते है। दिल्ली के उत्तर मे कही करनाल के पास यमुना नदी, और आजकल की घग्घर नदी, किसी जमाने मे बीकानेर के नगर सूरतगढ़ के समीप मिलकर बहती थी, और हाकरा नाम से बहावलपुर मे से होकर सिंधु मे जा मिलती थी। घाघरा अथवा छोटे घग्घर का सूखा तल अभी भी कहीं-कही देखने को आता है, और उत्तरी राजपूताना और दक्षिणी पजाब के मानचित्रो मे दिखाया गया होता है। यमुना ने अब अपनी तली को मैदानो से बहुत गहरा कर लिया है, और अब इसका रुख और नही बदल सकता तथा मजबूर होकर यह गगा की एक सहायक नदी ही बनी रहेगी।

शिवालक के पुराने जानवरो की हड्डियाँ, आजकल के शिवालक पहाडो की मिट्टी मे पत्थराई हुई मिलती है। कोई दस लाख वर्ष हुए, शिवालक के जगलो और दलदल मे कई प्रकार के जीव-जन्तु होते थे। कोई तीस प्रकार के हाथी, घोडे, ऊंट, बारहसिंगे, जिराफ, गैंडे तथा कई और जानवरो की पत्थराई हुई हड्डियाँ, शिवालक के पहाडो मे मिलती है। जिराफ और दरियाई घोडे, अफ्रीका के वनो मे से, भारत मे, एक धरती के पुल द्वारा आए थे जो बाद मे डूब गया। सिवा थीरियम नामक एक अत्यन्त विचित्र पशु, जो गैंडे से भी बडा था। और जिसके चार सींग और एक थूथनी हुआ करती थी, शिवालक के जगलो मे पाया जाता था। इस जीव की नस्ल अब समाप्त हो चुकी है। मनुष्यो की तरह चलने फिरने, बनमानुष भी इन बनो मे हुआ करते थे, जिनकी मनुष्य से बडी समानता होती थी। इस प्रकार शिवालक, जिसका रेतीला भू-भाग होशियारपुर के किसानो के लिए एक मुसीबत बना हुआ है, किसी जमाने मे एक नदी की तली था, और आजकल के हिमालय की पहाडियों की सबसे नई कडी है।

नूरपुर

शिवालक की पहाड़ियों की सुन्दरता का आनन्द लेते और उनमे पथराई जा चुकी हुई प्रकृति का अनुमान लगाते, हमने चक्की नदी को पार किया और पठानकोट-कांगड़ा सड़क पर पहुँच गए। इस सड़क के दोनों ओर शीशम के पेड़ है और आस-पास सन्तरे और आमो के बाग-ही-बाग दीखते है। यहाँ से हमें नूरपुर का किला दिखाई देने लग गया। यह किला खड्ड के किनारे पर बना हुआ है। इस खड्ड में बहता नाला चक्की दरिया की एक उपनदी है। नूरपुर के वन-विभाग का डाकबंगला शहर से एक मील दूर है। यहां से धौलीधार की बर्फानी चोटियों का दृश्य दिखाई देता है। वृक्षों की ओट में बर्फानी पहाड़ों का एक अर्धगोलाकार-सा बनता है, धौलीधार जिसके दाईं ओर है और जम्बू में पीर पंचाल, बाईं ओर। नूरपुर का इलाका, जो पहाड़ी पर फैला हुआ है, किले पर जाकर ख़त्म हो जाता है।

नूरपुर का डाकबंगला बड़ा रमणीक है। यहाँ से पहाड़ों के बर्फानी शिखरों के दृश्य भी खूब दिखाई देते है। पर यहाँ खाने-पीने को कुछ नहीं मिलता। यह कस्बे से दूर है और कोई मकान-दुकान भी पास नही। अगर मेरा मित्र और सहपाठी पंजाबसिंह पठानिया न मिल जाता तो बड़ी कठिनाई होती। हम बंगले के बरामदे मे से पहाड़ो की ओर देख रहे थे और हमारी आँतें मारे भूख के कुल-बुला रही थी। इतने में क्या देखते है कि एक नौजवान साइकिल पर खाना लादे चला आ रहा है। पास आया तो यह पंजाबसिंह निकला। ऐसे अवसरों पर ही मित्रो की परख होती है। जो प्यार और स्नेह पंजाब के ग्रामीण लोगो में है, शायद ही दुनिया के दूसरे लोगों में हो। अपने कष्ट को तो कष्ट समझते ही नही, और आवश्यकता पड़ने पर सब-कुछ न्यौछावर करने को तैयार हो जाते है। पंजाबसिंह की हिम्मत देखकर मेरा दिल प्यार से भर आया, और मैं उससे कसकर लिपट गया।

नूरपुर शहर का इतिहास बड़ा रोचक है। यह एक पुरानी राजपूत रियासत की राजधानी था। यह रियासत आजकल की नूरपुर तहसील, पठानकोट, गुरुदासपुर में शाहपुर कंडी और रावी के पश्चिम की ओर जम्मू मे लखनपुर तक

फैली हुई थी। नूरपुर का पुराना नाम धरमेडी था जो गूलरनाम के वृक्ष से लिया गया लगता है। नूरपुर में गूलर बहुत पाया जाता है। इस वृक्ष को पहले दुब्बर कहते थे और फिर इसको धरमेडी का नाम दे दिया गया। इससे हमें पुरातन हिन्दुओं के वृक्षों के प्रति प्यार का पता चलता है।

नूरपुर के किले को १५८० से लेकर १६१३ ईसवी तक राजा बासू ने एक पत्थर की चट्टान पर बनवाया। राजा बासू ने भगवान् श्रीकृष्ण का एक मन्दिर भी बनवाया। अब इस मन्दिर की केवल नींव ही बची है। इन नींवों पर श्रीकृष्ण और गोपियाँ चित्रित की गई है। राजा बासु वृक्षों का बड़ा प्रेमी था और उसने दुर्ग के निकट, माओकोट में, आमों का एक बाग भी लगवाया। यह बाग नूरपुर से चार मील की दूरी पर है। इसको अब भी राजा का बाग कहते हैं।

जगतसिंह, जो राजा वासदेव के बाद १६१९ में गद्दी पर बैठा, नूरपुर का सबसे प्रसिद्ध राजा हुआ है। वह बारह साल तक चम्बा के राजा से लड़ता रहा और १६२३ में चम्बा को अपनी रियासत में मिलाकर, बीस वर्ष तक उसने राज्य किया। राजा जगतसिंह ने १६१४ में भूपतपाल को हराकर बसोहली को विजय किया। १६३४ में शाहजहाँ ने इसे मनसबदार की पदवी देकर तीन हज़ार पैदल और दो हज़ार घुड़सवार सैनिक रखने की आज्ञा भी दे दी। १६४० में इसने शाहजहाँ के विरुद्ध बगावत कर दी। और माओकोट, तारागढ़ और नूरपुर के दुर्गों को १६४१ में विजय कर लिया तथा जगतसिंह और उसके पुत्र तारागढ़ के किले में जाकर टिक गए। तारागढ नूरपुर से १२ मील की दूरी पर है। तारागढ का किला एक पहाड़ी पर बना हुआ है, जिसके तीन ओर गहरे खड्ड है। मुगल सेनाओं ने यहाँ भी जगतसिंह का पीछा किया। बड़ा घमासान युद्ध हुआ और आक्रमणकारियों में से बहुत-से मारे गए। नूरपुर और तारागढ के दुर्ग मुगलों ने तोड़-फोड दिए। आखिर जगतसिंह और उसके पुत्रों ने शाहजहाँ से क्षमा माँग ली और बादशाह ने अपने विशाल हृदय का प्रमाण देते हुए जगतसिंह को फिर वहाँ का राजा नियुक्त कर दिया।

१६४५ में जगतसिंह को बदख्शाँ में उजबेकों के विरुद्ध एक अभियान में भेजा गया। इसके पास १४ हज़ार राजपूत सैनिक थे और इन्होंने खूबवीरता का परिचय दिया। नूरपुर के एक कवि गम्भीर राय ने इस अभियान का वर्णन अपनी कविता में किया है, इसे आज तक मेलों में गाया जाता है :

जगत राजा भगता राजा बास देव का जाया
सिन्धु मारे, सागर मारे, हिमाचल रोग लाया
आकाश को अरबा कीला तों जगता कहाया।

बदख्शाँ की विजय के बाद राजपूतों का बड़ा नाम हो गया। इस अभियान के बारे में एलफिनस्टन कहता है, 'राजपूतों की वीरता जैसी इस युद्ध में देखी गई

इससे पहले कभी किसी ने नही सुनी थी । पहाडी नदियो को फलाँगने, बर्फ को रौदते, अपने लिए स्वय ही खाइयाँ खोदकर उन्होने उजबैको के छक्के छुड़ा दिए । लोगो ने इस युद्ध मे राजा जगतसिंह को भाला पकडे, बर्फ को स्वय हटाते देखा । उसकी सेना ने जिस प्रकार उस बर्फानी प्रदेश मे शत्रु पर धावा बोला उसे देखकर हर कोई दाँतो-तले उँगली दबा रहा था ।"

जगतसिंह के राज्य मे बादशाह जहाँगीर कागडा की घाटी मे आया। जहाँगीर के साथ उसकी बेगम नूरजहाँ भी थी । कहा जाता है कि नूरजहाँ को यह स्थान इतना पसन्द आया कि उसने बादशाह को वहाँ एक महल बनाने के लिए कहा । किले के सामने पहाडी पर महल खडा करने के लिए एक जगह चुनी गई और राजा जगतसिंह, जिसने बादशाह को निमत्रण-पत्र भेजा था, महल बनाने की तैयारियो मे जुट गया । पर मन-ही-मन उसे यह बात अच्छी नही लगी । उसने समझा कि अब उसे सदा मुगल बादशाह के साये तले रहना पडेगा । एक दिन नूरजहाँ बेगम जब निर्मित हो रहे उस महल का निरीक्षण करने गई, उसने देखा कि सब मजदूरो और स्त्रियो के गलो पर घेगे है । उसके पूछने पर बताया गया कि नूरपुर का जलवायु कुछ इस तरह का है कि लोगों को यह बीमारी हो जाती है ।

राजा जगतसिंह की चतुराई काम कर गई । बेगम ने वहाँ महल बनवाने का विचार त्याग दिया और बादशाह के साथ कशमीर चली गई । नूरपुर के वासी आज तक खड्ड के पार इस महल की नीवो के खडहरो की ओर इशारा करके यह कहानी सुनाया करते है । महल तो चाहे न खडा हो सका, परन्तु धरमेडी के खडहरो मे अभी तक मुगल बादशाह नूरुद्दीन जहाँगीर की याद गूँज रही है । इस कारण ही इसका नाम धरमेडी से नूरपुर हो गया ।

नूरपुर का अन्तिम राजा वीरसिंह (१७८९ से १८४६ ई०) बडा अभागा था । उस समय महाराजा रणजीतसिंह ने पंजाब मे अपना राज्य स्थापित कर लिया था और धीरे-धीरे अपना साम्राज्य पहाडी प्रदेश की ओर बढ़ा रहा था । किसी-न-किसी बहाने वह पहाडी राजाओं को समाप्त करता जा रहा था और वीरसिंह भी उसकी चपेट से बच न सका । महाराजा रणजीतसिंह ने १८१५ ई० मे स्यालकोट मे एक दरबार बुलाया । वीरसिंह इस दरबार मे नही गया । महाराजा रणजीतसिह ने चालीस हजार रुपया जुर्माना कर दिया । वीरसिंह ने अपना कुल बचा-खुचा रुपया, अपने परिवार के अमूल्य आभूषण और सोने-चाँदी का अन्य सारा सामान इकट्ठा किया, किन्तु दड की रकम फिर भी पूरी न हुई । इस पर रणजीत सिंह ने उससे राज-पाट छीन लिया और एक जागीर देकर अलग होने की आज्ञा दी । वीरसिंह, जिसको आत्मसम्मान का खयाल था, जागीर को ठुकराकर चम्बा के प्रदेश की ओर निकल गया । यहाँ उसने कई लोग अपने साथ मिला लिए पर सिक्खो की विशाल सशस्त्र सेना के मुकाबले मे वह बिलकुल न टिक सका

और वह भेस बदलकर शिमला के निकट अर्की नामक रियासत की ओर भाग खड़ा हुआ। यहाँ वह दस साल तक छिपा रहा।

१८२६ में वीरसिंह भेस बदलकर नूरपुर वापस आया और उसने किले का घेरा डाल लिया। महाराजा रणजीतसिंह ने देसासिंह मजीठिया के नेतृत्व में एक टुकड़ी भेजी और वीरसिंह चम्बा की ओर भाग निकला। चम्बा के राजा ने, जो उसका साला था, उसे पकड़कर रणजीतसिंह के हवाले कर दिया। महाराजा रणजीतसिंह ने अमृतसर-स्थित गोविन्दगढ़ के किले में सात साल तक उसे बन्द रखा। वीरसिंह की पत्नी चम्बा के राजा चढ़तसिंह की बहन थी और वह अपने भाई के पास ही रहती रही। अपनी बहन के कहने पर आखिर चढ़तसिंह ने पच्चीस हजार रुपये दंड भरकर वीरसिंह को छुड़ा लिया।

इतिहासकार बार्नेज राजा वीरसिंह के सम्बन्ध में, पच्चीस हजार की एक और जागीर का भी उल्लेख करता है। यह जागीर राजा ध्यानसिंह के द्वारा दी जानी थी। जम्मू का राजा ध्यानसिंह उन दिनों सिख राज्य का प्रधानमन्त्री था। ध्यानसिंह चाहता था कि वीरसिंह अपने को जयदिया कहे और वह फिर उसे जागीर का प्रमाणपत्र दिलवाए। पर वीरसिंह ने ऐसा करने से इन्कार कर दिया। वीरसिंह खानदानी राजा था। ध्यानसिंह तो महाराजा रणजीतसिंह का बनाया हुआ एक सरदार-मात्र था। एक खानदानी राजपूत अपनी आन को इस प्रकार कैसे मिट्टी में मिला देता। इसे कहते हैं राजपूती हठ। आर्थिक हानि चाहे हो गई, आन पर बट्टा तो नहीं लगने दिया।

विवश होकर उसे फिर जंगलों में वास करना पड़ा और वह डमटाल आश्रम में जा छिपा। इस आश्रम में कई अत्याचार-पीड़ितों को आश्रय मिला था। वीरसिंह और उसका बच्चा चम्बा में ही रहते रहे। उनकी गुजर-बसर के लिए राजा ने पाँच सौ रुपये प्रतिमास का भत्ता बाँध दिया था। १८४६ में जब अंग्रेजों ने सिखों को पहली बार पराजित किया तब वीरसिंह ने एक बार फिर कोशिश की कि वह अपनी रियासत पर अधिकार कर ले। उसने नूरपुर के दुर्ग पर घेरा डाल लिया, पर आयु-भर के दुःखों और कष्टों के मारे वीरसिंह ने किले की दीवारों के बाहर ही प्राण दे दिए।

वीरसिंह के बाद उसका एक नाबालिग बेटा जसवन्तसिंह रह गया। यह बच्चा रामसिंह पठानिया के संरक्षण में था। रामसिंह एक बहादुर राजपूत था, जो नूरपुर की रियासत की पुरानी शान को फिर से स्थापित करने के सपने देखा करता था। १८४४ में रामसिंह ने जम्मू में कुछ सेना इकट्ठी की। इस इस बार उसने नदी पार करते हुए शाहपुर के किले पर अधिकार कर लिया। यहाँ उसने जसवन्तसिंह को नूरपुर का राजा तथा स्वयं को उसका मन्त्री घोषित कर दिया। शाहपुर मंडी का छोटा-सा कस्बा जो आजकल क्षीण हो गया है अठारहवीं और

इससे पहले कभी किसी ने नहा सुनी थी। पहाड़ी नदियों को फलाँगने, बर्फ को गैंदते, अपने लिए स्वयं ही खाइयाँ खोदकर उन्होने उजबेकों के छक्के छुड़ा दिए। लोगों ने इस युद्ध मे राजा जगतसिंह को भाला पकड़े, बर्फ को स्वयं हटाते देखा। उसकी सेना ने जिस प्रकार उस बर्फानी प्रदेश मे शत्रु पर धावा बोला उसे देखकर हर कोई दाँतो तले उँगली दबा रहा था।"

जगतसिंह के राज्य मे बादशाह जहाँगीर कागड़ा की घाटी मे आया। जहाँगीर के साथ उसकी बेगम नूरजहाँ भी थी। कहा जाता है कि नूरजहाँ को यह स्थान इतना पसन्द आया कि उसने बादशाह को वहाँ एक महल बनाने के लिए कहा। किले के सामने पहाड़ी पर महल खड़ा करने के लिए एक जगह चुनी गई और राजा जगतसिंह, जिसने बादशाह को निमत्रण-पत्र भेजा था, महल बनाने की तैयारियो मे जुट गया। पर मन-ही-मन उसे यह बात अच्छी नही लगी। उसने समझा कि अब उसे सदा मुगल बादशाह के साये तले रहना पड़ेगा। एक दिन नूरजहाँ बेगम जब निर्मित हो रहे उस महल का निरीक्षण करने गई, उसने देखा कि सब मजदूरों और स्त्रियो के गलो पर घेंगे है। उसके पूछने पर बताया गया कि नूरपुर का जलवायु कुछ इस तरह का है कि लोगों को यह बीमारी हो जाती है।

राजा जगतसिंह की चतुराई काम कर गई। बेगम ने वहाँ महल बनवाने का विचार त्याग दिया और बादशाह के साथ कशमीर चली गई। नूरपुर के वासी आज तक खड्ड के पार इस महल की नीवो के खडहरों की ओर इशारा करके यह कहानी सुनाया करते है। महल तो चाहे न खड़ा हो सका, परन्तु धरमेडी के खडहरो मे अभी तक मुगल बादशाह नूरुद्दीन जहाँगीर की याद गूँज रही है। इस कारण ही इसका नाम धरमेडी से नूरपुर हो गया।

नूरपुर का अन्तिम राजा बीरसिंह (१७८९ से १८४६ ई०) बड़ा अभागा था। उस समय महाराजा रणजीतसिंह ने पजाब मे अपना राज्य स्थापित कर लिया था और धीरे-धीरे अपना साम्राज्य पहाड़ी प्रदेश की ओर बढा रहा था। किसी-न-किसी बहाने वह पहाड़ी राजाओ को समाप्त करता जा रहा था और बीरसिंह भी उसकी चपेट से बच न सका। महाराजा रणजीतसिंह ने १८१५ ई० मे स्यालकोट मे एक दरबार बुलाया। बीरसिंह इस दरबार मे नही गया। महाराजा रणजीतसिंह ने चालीस हजार रुपया जुर्माना कर दिया। बीरसिंह ने अपना कुल बचा-खुचा रुपया, अपने परिवार के अमूल्य आभूषण और सोने-चाँदी का अन्य सारा सामान इकट्ठा किया, किन्तु दड की रकम फिर भी पूरी न हुई। इस पर रणजीत सिंह ने उससे राज-पाट छीन लिया और एक जागीर देकर अलग होने की आज्ञा दी। बीरसिंह, जिसको आत्मसम्मान का ख्याल था, जागीर को ठुकरा-कर चम्बा के प्रदेश की ओर निकल गया। यहाँ उसने कई लोग अपने साथ मिला लिए पर सिक्खो की विशाल सशस्त्र सेना के मुकाबले मे वह बिलकुल न टिक सका

और वह भेस बदलकर शिमला के निकट अरकी नामक रियासत की ओर भाग खड़ा हुआ। यहाँ वह दस साल तक छिपा रहा।

१८२६ मे वीरसिह भेस बदलकर नूरपुर वापस आया और उसने किले का घेरा डाल लिया। महाराज रणजीतसिंह ने देसासिह मजीठिया के नेतृत्व मे एक टुकडी भेजी और वीरसिंह चम्बा की ओर भाग निकला। चम्बा के राजा ने जो उसका साला था, उसे पकडकर रणजीतसिह के हवाले कर दिया। महाराजा रणजीतसिंह ने अमृतसर-स्थित गोविन्दगढ के किले में सात साल तक उसे बन्द रखा। वीरसिह की पत्नी चम्बा के राजा चड्‌डतसिह की बहन थी और वह अपने भाई के पास ही रहती रही। अपनी बहन के कहने पर आखिर चड्‌डतसिह ने पच्चीस हजार रुपये दड भरकर वीरसिह को छुडा लिया।

इतिहासकार बार्नेज राजा वीरसिंह के सम्बन्ध मे,पच्चीस हजार की एक और जागीर का भी उल्लेख करता है। यह जागीर राजा ध्यानसिह के द्वारा दी जानी थी। जम्मू का राजा ध्यानसिह उन दिनो सिख राज्य का प्रधानमन्त्री था। ध्यानसिह चाहता था कि वीरसिह अपने को जयदिया कहे और वह फिर उसे जागीर का प्रमाणपत्र दिलवाए। पर वीरसिंह ने ऐसा करने से इन्कार कर दिया। वीरसिह खानदानी राजा था। ध्यानसिह तो महाराजा रणजीतसिह का बनाया हुआ एक सरदार-मात्र था। एक खानदानी राजपूत अपनी आन को इस प्रकार कैसे मिट्‌टी में मिला देता। इसे कहते है राजपूती हठ। आर्थिक हानि चाहे हो गई, आन पर बट्‌टा तो नही लगने दिया।

विवश होकर उसे फिर जगलों मे वास करना पड़ा और वह डमटाल आश्रम मे जा छिपा। इस आश्रम मे कई अत्याचार-पीडितों को आश्रय मिला था। वीरसिह और उसका बच्चा चम्बा मे ही रहते रहे। उनकी गुजर-बसर के लिए राजा ने पाँच सौ रुपये प्रतिमास का भत्ता बाँध दिया था। १८४५ मे जब अंग्रेजो ने सिखो को पहली बार पराजित किया तब वीरसिह ने एक बार फिर कोशिश की कि वह अपनी रियासत पर अधिकार कर ले। उसने नूरपुर के दुर्ग पर घेरा डाल लिया, पर आयु-भर के दुखो और कष्टो के मारे वीरसिह ने किले की दीवारो के बाहर ही प्राण दे दिए।

वीरसिह के बाद उसका एक नाबालिग बेटा जसवन्तसिह रह गया। यह बच्चा रामसिह पठानिया के सरक्षण मे था। रामसिह एक बहादुर राजपूत था, जो नूरपुर की रियासत की पुरानी शान को फिर से स्थापित करने के सपने देखा करता था। १८४४ मे रामसिह ने जम्मू मे कुछ सेना इकट्ठी की। इस इस बार उसने नदी पार करते हुए शाहपुर के किले पर अधिकार कर लिया। यहाँ उसने जसवन्तसिह को नूरपुर का राजा तथा स्वयं को उसका मत्री घोषित कर दिया। शाहपुर मडी का छोटा-सा कस्बा जो क्षीण हो गया है अठारहवी आर

उन्नीसवी शताब्दी के आरम्भ मे व्यापार का एक बडा केन्द्र था और बड़े-बडे काफिले इधर से गुज़रा करते थे। रावी के किनारे मुकेश्वर नामक स्थान पर पाडवो से सम्बन्धित कई मदिर है, जो चट्टानो और कदराओ मे बनाए गए है। इनके स्तम्भो और दीवारो मे बने चित्र बहुत प्राचीन जान पडते है। कहा जाता है कि इस स्थान पर गाडीवधारी अर्जुन के चरण पड़े थे।

नदी के ऊपर की ओर पहाडी में एक खाई है जिसको अर्जुन-चूल्हा कहकर पुकारते है। यह जगह डलहौजी की ओर जाने वाली सडक पर से कोई एक हजार फुट की ऊंचाई से दिखाई देती है। शाहपुर का किला जो अब एक खंडहर-मात्र है, रावी नदी के बाएँ किनारे पर है। इसकी बहुत-सी बुर्जियाँ आदि ढह चुकी है, किन्तु एक बुरजी जिसका मुख नदी की ओर है अभी तक वैसी-की-वैसी खडी है। इसमे डाकबगला बना दिया है। डाकबगले के काठ के झरोखे से जो नदी की ओर है, पहाडियों के अद्वितीय दृश्य का आनन्द लिया जा सकता है। यहाँ नदी के टेढे-मेढे घुमाव भी भली प्रकार से दीखते है। वर्षा ऋतु मे यह जगह बडी सुहावनी लगती है, विशेषकर उस समम जबकि ठँडी हवा चल रही हो।

जब अग्रेजी सरकार को रामसिंह के विद्रोह की सूचना मिली तो उसने होशियारपुर से एक सेना शाहपुर के किले का घेरा डालने के लिए भेजी। मत्री रामसिंह और उसके साथियो ने एक रात मे किले को खाली करके नूरपुर से नीचे जगलो मे अपने मोर्चे लगा लिए लेकिन अन्त मे रामसिह पठानिया की पराजय हुई और वह गुजरात की ओर भाग गया। सिख फौजो ने उसको आश्रय दिया। जनवरी १८४९ मे रामसिह दो सिख-सैनिक-टुकड़ियो के साथ फिर लौटा और उसने 'डल्ले दी धार' नामक शिवालक की एक पहाडी पर आकर अपने मोर्चे लगा लिए। यह पहाडी रावी के किनारे शाहपुर के उत्तरपूर्व की ओर है। अग्रेज जरनैल व्हीलर के अधीन लड़ने वाले गोरो की बहुत हानि हुई, किन्तु रामसिह को फिर भागकर कागडा की ओर जाना पडा जहाँ उसे एक ब्राह्मण ने शरण दी। पर कुछ दिनो बाद उसने रामसिंह को अग्रेजो के हाथ बेच दिया। रामसिह को अब देश-निकाला देकर सिंगापुर भेज दिया गया और वही अन्त मे उसकी मृत्यु हुई। रामसिह की वीरता के कारनामो की कविताएँ अभी तक पहाडी भाट गा-गाकर लोगो को सुनाते है कि किस प्रकार रामसिह ने फिरगियो के साथ डल्ले की चोटियो पर युद्ध किया, किस प्रकार ढोल बजे, तोपे गूँजी और किस प्रकार खून से पहाडियाँ रँगी गई।

मियाँ बलरिसिह के पास, जो रामसिह पठानिया का पडपोता है और नूरपुर के वासा-वजीराँ नामक ग्राम मे रहता है, वह जिरहबख्तर है जो रामसिह पठानिया पहना करता था। उसके पास रामसिह के चित्रो का एक सग्रह भी है। जब रामसिह के घर का फिरगियो ने आग लगाई तो यही चित्र जलते हुए घर मे से

कुछ स्त्रियाँ बचा पाईं। कहा जाता है जब रामसिंह को अपने चित्रों की इस बरबादी की सूचना मिली तो वह बहुत रोया और दुखी हुआ।

चित्रों के इस संग्रह में तीन शैलियाँ, बसोहली, राजस्थानी और कांगड़ा दिखाई देती है। सबसे पुराने चित्र बसोहली शैली के है। इनके किनारे गहरे लाल और बाकी रंग बहुत शोख है। ये चित्र अन्य बसोहली चित्रों की तरह कुरूप नहीं है। इन चित्रों का काम बड़ा बारीक है, विशेषकर इनमें बनी स्त्रियों के नयन-नक्श बड़े तीखे है। इस शैली के चित्रों मे राजस्थानी तथा मुगल प्रभाव विशेष रूप से दिखाई देता है। इन चित्रों मे स्त्री पुरुषों के मुँह की बनावट प्राय. अण्डाकार होती है। इस संग्रह में कई चित्र है। एक चित्र में राजा वीरसिंह काले घोड़े पर सवारी करता हुआ दिखाया गया है; उसके दाएँ हाथ पर बाज है। मंत्री रामसिंह तथा मंत्री शामसिंह के चित्र भी है। एक चित्र में रामसिंह के पीछे जोधा नामक उसका वफ़ादार अर्दली जाता हुआ दिखाया गया है। जोधा लाहौर से नूरपुर तक एक दिन में पहुँच जाया करता था।

कांगड़ा-शैली के चित्रों में कुछ तो धार्मिक चित्र है और कुछ ऐसे है जिनको शृङ्गार रस की कृतियाँ कहा जा सकता है। ये चित्र कांगड़ा-शैली के अन्य चित्रों से सर्वथा भिन्न है। इनमें रंगो का चुनाव शोख है और इनके कलाकारों ने लाल, नीले, पीले रंग का बहुत प्रयोग किया है। कुछ चित्र, जो जिन्दगी के शोख पहलुओं को दर्शाते हैं, रंगों के चयन के कारण, शृङ्गार रस के अतिसुन्दर नमूने बन पड़े है। इन चित्रों मे स्त्रियों के पहरावों के रंग लाल या पीले है, जिनमें उनके गुलाबी चेहरे और चमेली के समान कोमल अंग निखर उठते है। इन चित्रों मे पुरुष प्राय: हट्टे-कट्टे और जवान होते हैं और स्त्रियाँ मोहक कामिनियाँ!

धार्मिक चित्रों में कबीर, रविदास, धन्ना और गुरु नानक के जीवन को दर्शाया गया है। कई चित्रों मे कबीर साहब अपनी पत्नी लोई के साथ बैठे है। कबीर साहब खड्डी चला रहे हैं और लोई सूत अटेर रही है। हरिजनों के गुरु रविदास को जूते बनाते हुए दिखाया गया है और उनके पास उनकी पत्नी बैठी हुई कात रही है। राजस्थान के जाटों में उत्पन्न प्रसिद्ध भक्त, धन्ना एक चित्र मे एक तालाब के किनारे बैठा है। उसके सिर और शरीर पर काली कम्बली है, एक हाथ मे मक्की की रोटी और साग है, दूसरे हाथ में लस्सी का कटोरा है और उसके पीछे उसकी भैंस खड़ी है। गुरु नानक के चित्र मे उनके पास मर्दाना बैठा सितार बजाता हुआ दिखाया गया है। गुरु नानक ने पीला चोगा पहना हुआ है और उनके कंधो पर फकीरों वाली कई रंगों की गुदड़ी है। मर्दाना ऐसा लगता है, जैसे ईश्वर के ध्यान मे मग्न हो। उसके चेहरे पर एक मस्ती है और बाबा नानक उसके संगीत को बड़े प्यार से सुन रहे हैं। कहा जाता है कि बाबा नानक संगीत की इन लहरियों के द्वारा अलौकिक प्रकाश में लीन हो जाया करते थे।

बाबा नानक जी के इस चित्र की पृष्ठभूमि में आम का पेड़ है जिस पर लताएँ चढ़ रही हैं इस प्रकार के का चित्रण कांगड़ा के अधिकांश चित्रों मे किया गया है, विशेषकर श्रीकृष्ण जी के चित्रों मे।

मियाँ कर्तारसिंह के चित्रों के संग्रह को देखकर हम नूरपुर के किले की ओर चल पड़े। किले के खंडहरों में एक पाठशाला है जिसकी कक्षाएँ बाहर वृक्षों के नीचे लगाई जाती है। ऐसा लगता है कि पाठशाला मे स्थान बहुत कम है। पाठशाला से आगे जाकर हमने एक चारदीवारी मे प्रवेश किया जिसके चारों ओर मौलश्री के छतरीदार वृक्षों ने घेरा डाला हुआ है। मन्दिर के भित्तिचित्रों पर श्रीकृष्ण की जीवन-लीलाओं के कई दृश्य अंकित किये गए है। द्वारों पर गोपियोंके अति सुन्दर चित्र बनाए गए है। कहा जाता है कि यहाँ पर स्थित श्रीकृष्ण भगवान् की काली संगमरमर की मूर्ति चित्तौड़ से मँगवाई गई है। यह वही प्रसिद्ध मूर्ति है, जिसकी मीराबाई पूजा किया करती थी।

नूरपुर की पहाड़िया खुश्क और वीरान हैं। वर्षा के कारण भूमि कट-कटकर बह गई है और भीतर से लाल चट्टाने नंगी हो गई है। इन पर झाड़ियाँ या चीड़ केपेड ही होते है। यहाँ का वातावरण प्राय रसहीन-सा है, कही-कही चीड, कनेर और शीशम मिलता है।

यहाँ का एक और आकर्षक स्थल पानी का एक चश्मा है। यह चश्मा कोटला से एक मील के अन्तर पर है। यहाँ ट्रकों और लारियों के ड्राइवर इंजन ठंडा करने के लिए पानी लेते है, और आते-जाते यात्री अपनी प्यास बुझाते है। इस चश्मे के पास एक बहुत मनोरम मन्दिर है। चूने के पत्थरों की इस गुफा मे चूने की बनी बत्तियो को लोग शिवलिंग समझ कर पूजते है। गुफा की छत में से चूने का पानी रिसता रहता है। चूने ने बत्तियो का रूप धारण कर लिया है। मन्दिर के बाहर बड़े-बड़े पत्थरो की चट्टानें है, जिनको हाथियो की आकृति मे तराशा गया है। इन हाथियो की सूँडो को किसी बुत शिकन ने तोड़ दिया है। जब हमने गुफा में प्रवेश किया तो क्या देखते है कि एक जटाधारी साधु आलथी-पालथी मारे भाँग के नशे में मस्त बैठा हुआ है। पुल की मेहराब से नीचे खड्ड का अति रमणीक दृश्य देखा जा सकता है। विशेषकर शीशम के हरे कोमल पत्ते बहुत सुन्दर प्रतीत होते है।

नगरौटा

धूप फूट चुकी थी। धौलीधार की पृष्ठभूमि में सूरज का प्रकाश दिखाई देने लगा। धीरे-धीरे सूरज पहाड़ों की चोटियों के पीछे ऊँचा होने लग गया। बरानी किनफ़ारी हल्की सलेटी-जसी हो गई। चीड़ के वृक्ष धुंध में घिरे हुए बड़े प्यारे लगते थे। धुंध में खच्चरों की घंटियों की आवाज़ पहाड़ों के एकान्त की शान्ति को और भी बढ़ा रही थी। मैंने अपने साथियों को जगाया। आर्चर तथा मुल्कराज आँखें मलते हुए बड़ी मुश्किल से उठे, तैयार हुए और हमने कोटला का रास्ता पकड़ा।

शाहपुर से आगे प्राकृतिक दृश्य सुन्दर होते जाते हैं। हमने कांगड़ा की तहसील में प्रवेश किया। सड़क के किनारे शाहपुर नामक एक खासा बड़ा गाँव है। यहाँ का डाक-बंगला ऊँचे-ऊँचे पीपलों में घिरा हुआ है। उत्तर की ओर धौलीधार की चमकीली बर्फ़ से ढकी हुई अद्वितीय दीवार खेतों की सीढ़ियों के लहरों की तरह बिखरे हुए किनारों को एक अतिसुन्दर पृष्ठभूमि प्रदान करती है।

कई कूलें, जिनका जन्म-स्थान धौलीधार है, यहाँ के खेतों को सींचती हैं। खेतों की सीढ़ियाँ एकसार बढ़ती जाती हैं और ऐसा प्रतीत होता है, जैसे घाटी एक प्रकार का खुला मैदान ही हो। खेतों की ढलान साधारण है और किसानों के कोठे जगह-जगह फैले हुए हैं। सड़क की उत्तरी ढलान चट्टानों और टीलों से अटी है। चट्टानों और टीलों का सलेटी रंग नाद-सी झलकार मारता है और कहीं-कहीं ऊपर काई के पीले धब्बे भी पड़े होते हैं। ये आधे के करीब धरती में दबे हुए पत्थर, जिनके गिर्द घास जमी होती है, कांगड़ा की घाटी का एक विशेष दृश्य है। गग्गल एक और सुन्दर गाँव है, जिसके पास से एक टेढ़ी-मेढ़ी नदी गुज़रती है। गग्गल से धौलीधार का अति सुन्दर दृश्य दिखाई देता है। खड्ड के तल पर ऊँचे-ऊँचे टीले और पत्थर हैं और किनारों की ढलानें आमों के वृक्षों से ढकी हुई हैं। पृष्ठभूमि में हैं—धौलीधार की शानदार चोटियाँ।

नगरौटा के आस-पास पहाड़ियों पर पीपल के वृक्ष, छतरियों की तरह फैले हुए हैं। इन पेड़ों को कई साल पहले यहाँ के चरवाहों ने धूप से बचने के लिए

लगाया था। यहाँ की सड़क लगभग सीधी ही चलती है। मोड़ बहुत कम हैं। इससे आगे पहाड़ियाँ चीड़ के सघन जंगलों से भरी पड़ी हैं, जिनमें चाय के बागान हैं। चाय की झाड़ियाँ छँटाई करके चौरस बनाई गई हैं। ओई के शान्त, स्थिर वृक्ष भी अब कहीं-कहीं दिखाई देने लग जाते हैं

नगरोटा में हमारा मित्र विश्वम्भरदास है। उसने कांगड़ा-चित्रकला की खोज में मेरी बहुत सहायता की थी। उसकी बड़ी इच्छा थी कि हम उसके यहाँ खाना खाएँ। हमारा इरादा पालमपुर पहुँचने का था। हमने कहा कि हमें चाय पीकर ही छुट्टी मिल जाय तो बड़ा अच्छा हो, पर वह न माना। साँझ का समय हो गया था और डूबते सूरज की किरणें धौलीधार को सुनहरी रंग में रँग रही थीं। कायस्थवाड़ी के निकट ही नगरोटा का महा खड्ड है, और पीछे धौलीधार।

खड्ड बड़े-बड़े पत्थरों से भरा हुआ है और इसके दोनों ओर हरे-भरे खेत हैं। ऊँची-सी जगह पर मैं एक धान के खेत के किनारे बैठ गया, और खूब जी भर-कर धौलीधार की सुन्दरता का आनन्द लिया।

प्रकृति की सुन्दरता, पहाड़ों का मौन दुनिया के सब झगड़े-झमेले भुला देता है और आदमी महसूस करता है कि वह महान् शक्ति, जिसने यह सारा खेल रचाया है, पहाड़ों तथा वनों की शान्ति में ही बसती है। हमने इस सूक्ष्म आत्मा को, गुरुद्वारों, मन्दिरों से, लाउडस्पीकर के शोर के कारण दूर भगा दिया है, जैसे लोग ताली बजाकर मुँडेर से कव्वे को उड़ा देते हैं। धर्मांध इस पवित्र सुन्दरता को गिरजाघरों, मंदिरों तथा मसजिदों की चारदीवारी में बन्द करने की कोशिश करते हैं पर इसे प्राप्त नहीं कर सकते।

इन विचारों में पहाड़ों की शान्ति का आनन्द लेते हुए मुझे यह भी भूल गया कि रात हो गई थी। पूर्णिमा का चाँद अब आकाश को सुशोभित कर रहा था और चाँदनी में सफेद बर्फ और भी मनमोहक लगती थी।

विश्वम्भरदास मेरे लिए चाय खेतों में ही ले आया। मैं पहाड़ों को देखता जाता और साथ-ही-साथ धीरे-धीरे चाय का मजा भी लेता जाता। जैसे बर्फ से ढकी पहाड़ों की चोटियों की सुन्दरता का आनन्द, एकान्त में ही लिया जा सकता है, वैसे ही चाय का मज़ा भी खामोशी और शान्ति में ही आता है। जब मैं चाय की प्याली पर लोगों को चिड़ियों कव्वों की तरह शोर मचाते देखता हूँ तो बड़ा हैरान होता हूँ। हमारे बड़ों ने गलत नहीं कहा कि खाते समय मूर्ख ही बोला करते हैं। दो काम एक साथ कभी नहीं चल सकते। खाने का स्वाद और बातों का मज़ा। शौक से खाने का स्वाद लो और इससे निवटकर बातें कर लो।

चाय का तो धुन्ध और शान्ति से विशेष सम्बन्ध है। इस बात को हम पंजाबी लोग पूरी तरह नहीं समझ सकते। क्योंकि हम दूध और लस्सी पीने वाले हैं,

और चाय के पूरी तरह अभ्यस्त नहीं हैं। अभी तक हममें से बहुत-से इस भ्रम में हैं कि चाय गर्मी और खुश्की करती है। कोई तीस वर्ष हुए मेरा भी यही विचार था, और मैं भी चाय को शराब और तम्बाकू की तरह एक व्यसन ही समझता था। १६३२-३४ तक, जब कि मैं इंग्लैंड ही में था, जब कभी किसी पार्टी पर जाता, दूध ही माँगता और अंग्रेज दोस्तों को परेशानी में डालता। वे सोचते कि यह कैसा आदमी है जो चाय तक नहीं पीता। मुझे चाय की आदत मेरी धर्मपत्नी ने १६३५ में डाली, और अब तो मुझे चाय बहुत ही अच्छी लगती है। बाहर से थके-हारे आओ, चाय का प्याला पीते ही थकान उतर जाती है और एक सरूर-सा आ जाता है।

जब मैं सफर करता हूँ, विशेषकर दक्षिण तथा उत्तरी भारत का, तो मैं चाय अथवा नारियल का ही पानी पीता हूँ। हरा नारियल गर्मियों में बड़ा स्वादिष्ट लगता है, और किसी बीमारी का भी कोई डर पैदा नहीं होता। यह पानी सूरज ने कशीद करके खोपे में भरा होता है और मोहर लगाकर बन्द किया होता है। सफर खत्म होने पर मैं केवल चाय ही पीता हूँ। गर्म पानी से कीटाणु मर जाते हैं और गले में जो धूल-मिट्टी गई होती है, वह भी साफ हो जाती है।

चाय के पौधे का जन्म स्थान दक्षिणी चीन है। पहले इसको दवाई के तौर पर इस्तेमाल किया जाता था और आम धारणा थी कि यह बुखार दूर करती है, थकान दूर करती है, रूह को ताजगी देती है, और आँखों को लाभ पहुँचाती है। चौथी शताब्दी में ही इसका यंगसिक्याँग की घाटी में आम रिवाज हो गया। टैंग साम्राज्य में आठवीं शताब्दी के मध्य में लूवू नामक सन्त कवि ने चाय पीने का विशेष ढंग निकाला और चाय पर ग्रन्थ लिखा, जिसमें विस्तार से बताया कि चाय कैसे पी जाय, बर्तन कैसे हों और मन को कैसे एकाग्र किया जाय। चाय के छह-सात प्याले पीना कोई बड़ी बात नहीं समझी जाती थी। लोटन नामक चीनी कवि लिखता है, "चाय अमृत है। पहला प्याला मेरे होठों और गले को गीला करता है। दूसरा मेरा अकेलापन दूर करता है। तीसरा मेरी आँतों में जाता है। चौथे से थोड़ा पसीना आता है और सारे पाप धुलकर पसीने के रास्ते बाहर निकल जाते हैं। पाँचवाँ मुझे पवित्र कर देता है तथा छठा मुझको स्वर्ग के देवी-देवताओं में पहुँचा देता है।"

जेन बौद्ध मत ने चाय पीने की रीति शुरू की। अपने गुरु की मूर्ति के सामने सारे सन्त बैठ जाते और एक ही प्याले में से बारी-बारी गम्भीरता और भक्ति भाव से चाय पीते। यही जैन रीति, पन्द्रहवीं शताब्दी में जापान पहुँच गई और शोगन अशीकागा योशी मासा के नेतृत्व में चाय पीना एक रस्म के रूप में चल निकला। फिर यह जीवन-कला का एक अंग बन गया। चाय पीने का कमरा एक शान्ति का मन्दिर बन गया। और जो इसमें दाखिल होता वह जीवन

की चिन्ताओ झगड़े-झमेलो को भुलाकर प्रवेश करता। इसका मतलब यह था कि सब नम्रता से, ऊँच-नीच का विचार छोड़कर अन्दर दाखिल हो। ताक मे केवल एक चित्र होता था फूल-पत्तियों की सादी-सी सजावट।

जेन शब्द, ध्यान से निकला है, और महात्मा बुद्ध 'ध्यान' पर बड़ा जोर देते थे कि इसके द्वारा ही मन को शान्ति मिलती है। यही सन्देश, बौद्ध धर्म छठी शताब्दी मे भारत से चीन लेकर आया, और यही जापान मे पहुँचा। सोलहवी शताब्दी मे रिकीओ ने चाय पीने की रस्म को शान्ति और पवित्रता का नमूना बनाया। अतिथि चुपचाप चाय के कमरे में आते और सिवाय उबलते पानी की आवाज के कुछ सुनाई न देता। सब एकाग्र चित्त से बैठते। मन, मन से बातें करता और सब ताक की तस्वीर या फूलो की, दिल-ही-दिल मे प्रशंसा करते।

चाय पीने का कमरा बड़ा साफ किन्तु सादा होता। इतनी सफाई होती कि क्या मजाल जो जरा-सी मिट्टी भी दिखाई दे जाय। पत्थरों से जड़ा हुआ मार्ग, जो चाय के कमरे को मकान से जोड़ता, खास तौर पर साफ किया जाता। पर इस सफाई मे भी जापानी सन्तो की कलापूर्ण रुचि का परिचय मिलता। जो संत चाय पीने की रस्म का प्रधान होता उसको चाय-गुरु कहा जाता। रिकीओ एक प्रसिद्ध चाय-गुरु हुआ है। चाय पीने की तैयारी हो रही थी और कुछ प्रमुख व्यक्तियो के आने की प्रतीक्षा थी। रिकीओ का लड़का सोआन बाग का रास्ता धोकर साफ कर रहा था। एक घंटा-भर सफाई कर चुकने के बाद पिता के पास आया और कहा "पिताजी अब सब ठीक है। रास्ते के पत्थर तीन बार धोये हैं। पत्थर की लालटेनें और पेड़ो के पत्ते भी फव्वारे से धोये है, और रास्ते में कोई तिनका-पत्ता नहीं है।" "अरे मूर्ख", चाय गुरु कड़ककर बोला, "बाग के रास्ते को साफ करने का यह तरीका नही।" इतनी बात कहकर रिकीओ बाग मे आया, और एक चिनार की शाखा को हिलाया। रास्ता लाल और पीले पत्तों से सज गया, और ऐसा लगा जैसे पतझड का कमख्वाब हो। रिकीओ केवल सफाई ही नही चाहता था, साथ मे प्राकृतिक सुन्दरता का भी इच्छुक था।

चाय मनुष्य को चैतन्य करती है, और चित्त को एकाग्र करती है। इसी कारण ही बौद्ध सन्त भक्ति करते हुए चाय जरूर पीते, जैसे हमारे सन्त ठडाई पीते है। चाय पीने की रस्म ने रहन-सहन और लोगों के जीवन को भी प्रभावित किया और चित्र-कला और बागबानी की कला को बहुत बढावा दिया।

चाय १६१० मे डच ईस्ट इंडिया कम्पनी यूरोप मे लाई। यह १६३८ में फ्रांस, १६३६ में रूस और १६४० में इंग्लैंड पहुँची। जब कोई नई वस्तु किसी देश मे बाहर से आती है तो लोग उसके बारे मे तरह-तरह की बाते करते हैं। १७५६ मे एक अंग्रेज लेखक ने लिखा कि चाय पीने वाले पुरुषो का कद नाटा रह जाता है,

और स्त्रियों की सुन्दरता कम हो जाती है। ऐसी बातों के बावजूद चाय का इस्तेमाल बढता गया, और अठारहवी शताब्दी मे चाय का आम रिवाज हो गया। बड़े-बड़े लेखक,—एडीसन, स्टील, सैमुअल जॉनसन और चार्ल्स लैम्ब सब चाय के प्रेमी थे। लैम्ब ने लिखा कि सबसे मजेदार काम किसी का गुप्त भला करना होता है। जापानी कलाकार ओकाकूरा ने चाय पीने की कला का नाम चायवाद रखा था। वह कहता है—चायवाद सुन्दरता को छिपाने की कला है ताकि आप उसको ढूँढ सके। लैम्ब की गुप्त भला करने की खोज भी चायवाद का ही एक रूप है।

मैं इन विचारो में ही मस्त चाय पी रहा था कि कायस्थ बाड़ी की ओर से एक पहाड़ी गीत की आवाज़ आई—

कुथी ते उगमी काली बदली
ओए मुडिया प्रिथी सिघा
कुथी तो उगमिया ठडा नीर ओ।

गाने वाला ऐसे करुणा से भरे स्वर मे गा रहा था मानो सचमुच वह किसी घायल दिल की पुकार हो।

इतनी देर मे खाने के लिए बुलावा आ गया। हमारे मेजबान ने गद्दी लडके और लडकियो की टोली इकट्ठी की हुई थी। उन्होंने गीतो की एक झडी-सी लगा दी और खूब समाँ बाँधा। हमारे मित्रो का सारा परिवार ही खाना परोस रहा था और उनका स्नेह देख-देखकर मेरे शहरी साथी चकित हो रहे थे।

मैं कई बार सोचता हूँ कि हममे और पश्चिमी लोगो में कितना अन्तर है। हमारे लोग स्नेही है और अतिथि सत्कार मे इनका कोईमुकाबला नहीं कर सकता। कभी भी बाहर के आदमी को गाँव से भूखा नहीं जाने देंगे चाहे स्वय कितने ही गरीब क्यो न हो।

इनके मुकाबले में पश्चिमी गोरे स्वार्थी और कोरे हैं, और पैसा ही इनका माँ-बाप है। चाहे कितने ही धनी हो, बिना मतलब के कभी आँख नही मिलायेंगे। इनके चेहरे गोरे और हृदय वज्र से कठोर। हमारे गरीब किसानो ने चाहे फटे चिथड़े ही पहने हो, पर कितने मिलनसार हैं, और अपना काम छोड़कर भी मेहमान को सिर-आँखों पर बिठाते है।

अपने मित्रो का धन्यवाद करके हमने पालमपुर का रास्ता लिया। ओई के काले वृक्ष चाय-बागानों मे स्थिर और शान्त खड़े थे। सडक साँप की तरह बल खाती हुई धीरे-धीरे ऊँची होती जा रही थी और आधे घंटे मे ही पालमपुर की बस्तियाँ दीखने लग गई। बाजार मे से गुजरते हुए हम सैशन हाउस नामक बगले में पहुँच गए।

पालम घाटी

पालमपुर हिमालय की गोद मे एक अनमोल मोती है। इसके सुन्दर चीड के वृक्ष और देवदार की पक्तियाँ धौलीधार की परछाई मे प्रहरियो की भाँति खडी हैं। यहाँ की चीड के पेडों से घिरी खामोश सडके यहाँ के चाय-बागान, जिनके निकट हिम-जल के निर्झर है, यहाँ के बँगले, जिनके चारो ओर वृक्षो का ऊँचा-ऊँचा घेरा है, बडे खूबसूरत लगते है। पालमपुर, शान्ति और सुन्दरता की एक अनूठी तसवीर है। यहाँ के मकानों और बँगलों मे सबसे सुन्दर सैशन हाउस नामक बंगला है। इसका दृश्य अत्यन्त रमणीक है। इस इमारत की जगह, किसी पर्वतीय दृश्यो के प्रेमी ने चुनी मालूम होती है। इसके बरामदे मे से धौलीधार की सम्पूर्ण झाँकी दिखाई देती है। धौलीधार की तीन चोटियाँ, यहाँ से ऐसी लगती है मानो रौरिक का कोई चित्र हो, और चीडो के वृक्ष उस चित्र का चौखटा। दोपहर को बादल आकर धौलीधार की बर्फानी चोटियो को ढक लेते। बरसात के दिनो मे बिजली चमक-चमक पड़ती और बादल गरजते नही थकते! बादलो की गड़गड़ाहट, बँदला की घाटी मे बार-बार गूँजती और ऐसा लगता जैसे दैवी शक्ति अपने वेग का प्रदर्शन कर रही हो। वर्षा, यहाँ बहुत जोर की होती है। बादल, जैसे बरस-बरसकर थकते नही। बँदला खड्ड का दृश्य बड़ा मनोरम होता है, और यहाँ कोई घटों खडा बर्फानी पहाड़ियों पर काले-नीले बादलों को देखता, अघाता नही! सैशन हाउस का बँगला रंग-बिरगे फूलो से लदा हुआ है और इन फूलो के पीछे चीड के वृक्ष अति मनोरजक दृश्य प्रस्तुत करते है। वैशाख के महीने मे तग्गर के फूलों की सुगन्ध से यह क्षेत्र महक उठता है।

बँदला गाँव तथा निऊगल खड्ड की सैर बडी सुहावनी है। बँदला की ओर जाने वाली पगडडी के दोनो ओर चीड के पेडो ने घेरा डाला हुआ है। हम बँदला खड्ड के दाईओर से होकर गुजरे। रास्ते मे किसी किसान का एक अकेला मकान था। इसमे सरू का पेड़ लगा हुआ था। खड्ड के दोनों ओर मक्खण के वृक्ष लगे हुए हैं, जिनके पत्ते वैशाख मे ताबे के रग के हो जाते है। सीढियो की तरह बने हुए खेतो में गेहूँ और जौ की फसले लहलहा रही थी, जिन्हे ज्येष्ठ मास मे काटा जाना था। ज्येष्ठ के मध्य मे खेतो मे फिर हल जोता जाता है। हल चलने के बाद

किसान और उस के परिवार के सब लोग, स्त्रियो और बच्चो सहित मिलकर खेतों मे मिट्टी के ढेलो को तोडने का काम करते है। हर किसी ने हाथ मे लकड़ी के लम्बे-लम्बे हथौड़े उठाए होते है। ज्येष्ठ, आसाढ के महीनो मे खेतो मे पानी-ही-पानी होता है, जिसको नालियो के द्वारा बाहर निकाला जाता है। पानी के हजारो झरने सुबह की धूप में चमकते दिखाई देते है। पानी से भरे खेत दर्पण की तरह दमक-दमक पड़ते हैं, और ऐसा प्रतीत होता है मानो सारी-की-सारी पालम घाटी कोई स्वप्न-लोक हो ! फिर किसान धान की खेती में जुट जाते हैं, जो आश्विन मे तैयार होने लगती है।

गाँव से जरा बाहर की ओर चमारो के घर हैं, बीच में सूदों के ! यही लोग यहाँ के साहूकार और दुकानदार हैं। गाँव के दाएँ हाथ पर एक मदिर है, जिसकी दीवारो पर शिव और पार्वती के चित्र हैं। ये चित्र कागडा-कला के चितेरे गुलाबू राम के बनाए हुए हैं। गाँव की गली पत्थरों की बनी है। इसके एक ओर पानी का झरना बहता है। निर्मल जल का यह निर्झर, गाँव को एक अनोखी सुन्दरता प्रदान करता है। गाँव के उत्तर की ओर पनचक्कियाँ लगी हुई हैं, जिनके निकट गद्दी लोगों की बस्ती है। खेतो के किनारो पर लगे वृक्षो को, ढोर-डगरो के चारे के लिए, बडी बेरहमी से काटा-छाँटा जाता है। इन पेडों के ठूँठ गद्दियो के घरो पर पड रही एक भयानक परछाई के समान दीखते हैं। गद्दी किसानो के घर बडे साफ है उनकी दीवारें बाहर से हल्के नीले 'गोल्' और हल्की पीली 'गाचनी' से रँगी हुई है। यह मिट्टी धौलीधार मे से लाई जाती है। कुछ और ऊँचाई पर जाकर निग्गल नामक खड्ड आता है। यह ग्बड्ड बहुत गहरा है और इसमें पहाड से टूटकर गिरी बड़ी-बडी चट्टानो के टुकडे है। खड्ड के बीच मे साफ-सुथरे पानी की एक नदी बहती है। यह नदी धौलीधार से निकलती है। खड्ड के दाईं ओर एक झरना है, जिससे बँदला के चाय-बागानो को पानी दिया जाता है। दूर से देखे तो ऐसे लगता है जैसे यह झरना निचान मे ऊचान की ओर बह रहा हो। निग्गल खड्ड के नीचे एक पनचक्की लगी हुई है, और दारू निकालने की एक भट्टी है। यहाँ गद्दी-लोग 'लुगड़ी' पीने के लिए इकट्ठे होते हैं। खड्ड के दूसरी ओर गद्दियो का एक और गाँव है, जिसके डिब्बियो-जैसे पीले घर बड़े सुन्दर दीखते है।

तहसील पालमपुर के गाँव दो भागो मे बँटे जा सकते हैं: एक भाग मे वे गाँव आते है, जो धौलीधार के दामन मे, पालमपुर-बैजनाथ सडक के उत्तर की ओर है; और दूसरे मे वे गाँव, जो इस सड़क के दक्षिण की ओर हैं। धौलीधार के आँचल मे देऊल, लन्नाद, कंदम्बड़ी, बँदला, पकदी और चचिया नामक ग्राम हैं। ये सारे-के-सारे गाँव पहाडी टीलो पर बसे हुए है। देऊल के निकट, आवा और बँदला के निकट निग्गल नामक खड्ड है। इन ग्रामो मे, बर्फ के ठंडे पानी से खेतो

की सिचाई की जाती है इन गाँवो के निवासी या तो खेती-बाड़ी करते है या फिर रेवड पालते हैं, और शिकार करते हैं । ये लोग बाज और शिकरे पकड़कर पश्चिमी पंजाब मे बेचने के लिए भेजा करते थे। पंजाब के बँटवारे का एक यह भी प्रभाव हुआ है कि शिकरो और बाजो का व्यापार अब बन्द हो गया है। बड़े-बड़े जमीदार, जो पहले शिकरे और बाजो के शौकीन हुआ करते थे, आजकल धीरे-धीरे खत्म होते जा रहे है, इसलिए इन शिकारी पक्षियो को अब पकड़ा नही जाता। बाज शिकारो की सख्या बढ जाने के कारण, धौलीधार के क्षेत्र मे शिकार बहुत कम हो गया है। मुनाल आदि पहाडी पक्षी और बर्फ़ानी मुर्गे बहुत कम हो गए है, और बाज तथा शिकरे सख्या मे उतने ही बढ गए है।

पालमपुर घाटी के चाय उगाने वाले क्षेत्र मे प्रसिद्ध गाँव बनूरी, सलिआना, पट्टी, दिउगराऊँ, मनिआरा, तिक्कड़, डरोह आदि है। चाय की झाडियो की खेती इस क्षेत्र में १८४९ में डाक्टर जेगसन ने पहली बार की थी। उसने चाय के पौधे अल्मोड़ा और देहरादून के जखीरो से यहाँ लाकर लगाए थे। आजकल इस क्षेत्र मे चाय खूब उगाई जाती है। किसान भी अपने खेतो मे चाय उगाते है। चाय की पत्तियों को ये लोग छोटी-छोटी भट्ठियो मे सुखाते है और इनकी यह चाय घरेलू उद्योग-धधो को प्रोत्साहन देने वालो को बहुत पसन्द आती है। यहा के ग्रामो के मकान आमतौर पर दोमंजिले होते है, और उनकी छते सलेट के पत्थर की होती है। कई मकानों के दरवाजो और खिडकियो पर बेल-बूटे बने होते है। गत बीस वर्षों से स्वास्थ्य के नियमो की ओर ध्यान दिया जाने लगा है, और प्राय. घरो मे खिडकियाँ और रोशनदान दिखाई देने लगे हैं। घरो के साथ ही चरागाहे है, जिनमे छोटी-छोटी काले रग की गऊएँ चरती हुई नजर आती है।

सलियाना नामक ग्राम बड़ा खूबसूरत है। इसमे डोगरा ब्राह्मण रहने हैं। खेतो के किनारे जगली गुलाब की बाड लगी होती है और बैशाख मे इनके सफेद और गुलाबी रंग, पालम की घाटी को एक अनोखी छवि प्रदान करते है। जगली नाशपातियो के वृक्ष, जो जगह-जगह पर उगे हुए है, अर्ध चैत में सफेद फूलो से लद जाते हे। इन दिनों मे धौलीधार की चोटियाँ भी बर्फ से ढकी हुई होती है, और पालम की घाटी सफेद वस्त्रो मे लिपटी, किसी गोरी के समान दिखाई देने लगती है।

जंगली गुलाबो के सफेद और गुलाबी फूलो को देखकर मुझे बडी खुशी हुई। यहाँ बहुत से खेतो की बाड इन फूलो से सजी हुई है। कैथ के सफेद फूल देखकर जी और भी खुश हुआ। सफेद रग पवित्रता का प्रतीक है, जैसे गुलाबी रग मनुष्य की प्रेम-भावनाओं का चिह्न है।

केवल मनुष्यो मे नही, वनस्पति, पशु, पक्षियों और मछलियों तक मे खुशी की उमंग करवटें लेती है। खुशी की यह उमग एक बहती नदी की तरह है। जैसे

शरीर को भोजन की आवश्यकता है, ऐसे ही प्रकृति की सुन्दरता, खुशी की इस उमग का आधार है।

जब गडरियो के बालकों को मैंने गुलाब के फूल तोड़ते देखा तो दिल को बडी ठेस पहुँची। हमारे विपरीत, जापानी कितने सहृदय है। वे अपने देश के फूलो और वनस्पतियो से कितना प्यार करते है। कहते हैं कि एक जापानी लडकी सुबह सवेरे अपने घर की कुइया पर पानी भरने गई। क्या देखती है कि रस्सी के गिर्द इश्कपेचे की बेल लिपटी हुई है, और उस पर एक जामुनी रग का फूल खिला हुआ है। लडकी को फूल और बेल की सुन्दरता इतनी भाई कि उसका कुए से पानी निकालने का हौसला न हुआ, और पानी निकालने की रस्सी को वैसे ही छोडकर एक पड़ौसी से पानी माँग लाई।

इसी तरह की कहानी, जापान की रानी कोमीओ के बारे मे भी प्रसिद्ध है। पूजा का समय था और कोमीओ फुलवारी मे फूल चुनने गई। फूलो की सुन्दरता देख, तोडने का हौसला न हुआ और बोली, 'अगर मैं इन फूलो को तोडती हूँ तो मेरे हाथो के स्पर्श से ये अपवित्र हो जायँगे। जैसे ये फुलवारी मे लगे है, मैं ऐसे ही इनको महात्मा बुद्ध की सेवा मे भेंट करती हूँ।''

बाशो, जापान का सत कवि, प्रकृति का प्रेमी था। जब चैरी के हल्के गुलाबी फूल खिलते है, तो जापान के लोग बडी खुशियाँ मनाते है, और फूलो से लदे वृक्षो के नीचे बैठकर इनकी सुन्दरता का आनन्द लूटते हैं। पवन का हल्का-सा झकोरा भी आय, ज़रा-सा ऊँचा शोर हो तो चैरी के फूल झडने लग जाते है। भिक्षु बाशो घटी बजाता हुआ गुजर रहा था। जब चैरी के बाग के पास से गुज़रा तो घंटी बजानी बन्द कर दी कि कही शोर से चैरी के फूल झड़ न जायँ।

फाल्गुन के महीने मे फाख्ताओ के जोड़े की घूँ-घूँ, कैथ के वृक्षो मे से आती सुनकर मैंने सोचा कि ये जोडे अवश्य ही फूलो की बाते कर रहे होंगे! कैथ के दूध-से सफेद फूल, शबनम से भीगे हुए ऐसे लगते थे, जैसे तारो के ढुलकने आँसू हो।

कई लोग पूछते है, फूलो से क्या लाभ हैं? फूलों से न केवल फल और अन्न उत्पन्न होता है, अपितु ये फूल ही है जिन्होंने हमें वनमानुष से मनुष्य बनाया है। कोई पाँच-छह लाख वर्ष हुए, जब वनमानुष की मादा ने ऊपर नजर उठाकर चम्पे के फूलो से लदे वृक्ष की ओर देखा तो उसने सोचा कि वह भी वृक्ष की सुन्दरता का कुछ भाग ले सकती है; और उसने फूलो के गुच्छे उतारकर अपने सिर के बालो मे खोस लिये। नर वनमानुप ने अपनी फूलों मे सजी सगिनी की प्रशसा की, और उस दिन से ही वे इसानो की श्रेणी मे सम्मिलित हो गए। अब भी जब हम अपनी सूक्ष्म भावनाएँ अपनी प्रेमिका को दर्शाना चाहते है तो हम फूलों के द्वारा ही अपने प्रेम को प्रकट करते हैं। अगर ईश्वर के प्रति अपनी श्रद्धा व्यक्त करते हैं तो यह

भी फूलों के चढ़ाये से ही

गाँव के बाहर कई मकान इधर-उधर बिखरे हुए हैं। अधिकतर किसान अपने खेतों मे ही रहना पसन्द करते है, और कोई ऐसी जगह चुनकर झोपडियाँ डाल लेते है, जहाँ धूप भी लगे और वर्षा से भी बचाव हो सके। राजपूतों के मकान, दूसरे मकानो से स्पष्ट रूप से अलग दीखते है। राजपूत प्रायः कोई विशेष, अथवा अलग-सी जगह चुनते है ताकि उनकी स्त्रियाँ पर्दे मे रह सके। पुराने जमाने मे राजपूत अपने इन घरो में अपने-आपको अधिक सुरक्षित भी समझते थे, क्योकि ये घर अधिकतर ऊँची पहाडियो की चोटियो पर बनाए जाते थे जिन तक पहुँचने के लिए तग, लम्बी-लम्बी पत्थर की सीढियाँ चढनी पडती थी। इन सीढियो मे, कई स्थानो पर से एक घोड़े के निकलने की जगह भी नही होती थी।

गाँव के बीच मे एक बावड़ी है, जिसको पत्थरो से चिना गया है। इस बावडी के पत्थरों पर पुरुषो, स्त्रियो और बैलो के चित्र अकित किये गए है। जब किसी विवाहित पुरुष की मृत्यु हो जाती है तो उसकी स्मृति में एक पत्थर इस बावडी मे लगा दिया जाता है। इस पत्थर पर उस पुरुष का चित्र होता है। जब कोई कुँआरा मर जाता है तो उसकी याद मे वहाँ एक बैल का चित्र अकित किया जाता है।

घिरतो के घर आम तौर पर बाँस, कचनार तथा तून के झुरमुटो मे छिपे हुए होते है। ऐसे घर सम्पूर्ण घाटी मे पाए जाते है। जरा नीचे, नगरोटा के पास, केले और आम के वृक्ष भी दिखाई देते हैं। उससे परे बड़े-बड़े सेमल के वृक्ष अपने अजुली भर-भर लाल-सुर्ख फूलो के साथ सिर उठाए खड़े दिखाई देते है। इन वृक्षो के पत्ते झड जाते है, और शाखाओ पर केवल फूल-ही-फूल रह जाते है।

सलिआना ग्राम मे मेरा मित्र परमेश्वरीदास बडी उत्सुकता से हमारी बाट देख रहा था। अभी हम गाँव से आधा मील दूर ही थे कि क्या देखते है कि ढोल बजाते हुए गद्दियो की टोलियाँ हमारी ओर आ रही है। बच्चो की भीड़ का तो कहना ही क्या! ऐसा मालूम होता था कि सारा गाँव ही उमड पडा हो! उन्होने हमे गेंदे के फूलो से लाद दिया। नरसिंघे और तूतनियाँ बजाते हुए वे हमे स्कूलकी ओर ले गए, जहाँ पालम के सब सुघड़-सयाने मौजूद थे। उन्होने अपने स्वागत-भाषण मे मेरी तथा आर्चर साहब की, कागड़ा-कला पर लिखने की प्रशंसा की। इन सादा, छल-कपट रहित, सच्चे इसानों के प्रेम और प्रशसा से हमे बड़ी खुशी हुई। हमे यह अनुभव करके और भी प्रसन्नता हुई कि मेरे कांगड़ा-कला-प्रेम की बात केवल पढ़े-लिखे लोगो तक ही सीमित नही, बल्कि जो काम मैंने कांगडा घाटी की कला, लोक-गीतो और संस्कृति की खोज के बारे मे किया है, उसको साधारण जनता भी जानती है। एक खोजी और लेखक के लिए इससे बडी खुशी की बात और क्या हो सकती है!

सलियाना, अदरेटा, अजौगर, परिहाल, अंडपुरी तथा पपरोला—ये सभी ग्राम प्राकृतिक सुन्दरता से भरपूर हैं। सलियाला से जरा आगे जाकर एक बगीचा-सा आता है, जिसके आगे-पीछे मकान और दुकाने बनी हुई है। इस जगह बैशाख में प्रतिवर्ष मेला लगता है। मेले के दिनों मे यहाँ कई दुकानदार आकर मिठाई, चूड़ियाँ, ताँबे के बरतन और घड़े आदि बेचते हैं। पालम घाटी के ब्राह्मणो, राजपूतों और घिरतो के अतिरिक्त गद्दी पुरुष तथा स्त्रियाँ भी इस मेले मे शामिल होते है। ये लोग गधेरन क्षेत्र से आते है, जो धौलीधार के दामन में है। इनके आने से मेले में बडी चहल-पहल और रौनक हो जाती है। नक्कारे की चोट पर गद्दी लोग झूम-झूमकर नाचते हैं। गद्दी स्त्रियाँ, चाँदी के गहनो से लदी उनके पास खड़ी होकर उन्हे नाचते हुए देखती है। मेला उठ जाने पर यह जगह सुनसान हो जाती है, और यहाँ कुछ काली गऊएँ ही चरती हुई नजर आती हैं।

अंदरेटा

सलियाना से अदरेटा की ओर जाते हुए हमे रास्ते मे एक बारात मिली। सबसे आगे नरसिंघे थे। उनसे पीछे ढोल वाले और बाद मे बाराती बडी सज-धज से जा रहे थे। एक सपाट से चौडे पत्थर पर दूल्हे को अपने साथियो के साथ बिठाकर मैंने उनकी फोटो खीची। बातचीत करते हुए जब उसको पता चला कि हम कौन है, तो उसने हमे बारात के साथ दोपहर का खाना खाने का निमंत्रण दिया। हम कुछ हिचकिचा रहे थे और बहाने बना रहे थे कि लड़की वाले भी आ गए। वे मेरे परिचित ही निकले और उन्होने भी खाने के लिए ज़ोर दिया। हमे पहले ही भूख लगी हुई थी, और बारात मे शामिल होकर हमने भी खाना खाया। घर की छत पर बैठी हुई स्त्रियो की सिठनियाँ सुनकर भी खूब मजा आया। मैं जब पजाब के ग्रामीण किसानो का अतिथि-सत्कार और प्रेम देखता हूँ तो यूरोप याद आ जाता है। हममे और पश्चिमी लोगो मे कितना अन्तर है। इगलैंड मे तो मुझे याद है कोई पानी का गिलास भी मुफ्त नही पिलाता और हमारे पजाबी किसान कितने उदार चित्त है। अगर किसी के पास दूसरो से चार पैसे ज्यादा हे तो उसकी यही इच्छा रहती है कि मेहमानो की जी भरकर सेवा करे। मैने तो यही देखा है कि हमारा और पश्चिमी लोगो का बडा फर्क यही है कि हम खुले दिल वाले लोग हैं और बाँटकर खाना अच्छा समझते है, किन्तु ये पश्चिमी लोग स्वार्थी हैं। उनमे बाप-बेटे का हिसाब अलग है; माँ-बेटी का अलग। जिधर देखो 'मैं' 'मै' की आवाज आती है। यही पश्चिम की बडी बीमारी है, और यही उनको तबाही की ओर धकेल रही है। विज्ञान ने आराम तो बहुत मुहैया किए है, पर इसानी दिलों को और भी सकुचित कर दिया है। तभी तो पश्चिमी देशों मे इतनी बेचैनी है। उनमे सुखी और सन्तोषी कोई बिरला ही दिखाई देता है।

कई बार मैं सोचता हूँ कि यह खुदगर्ज़ी की बीमारी पश्चिम वालो को ही नहीं, बडे-बडे शहरो मे रहने वाले हमारे लोगो को भी लग गई है। मुझे याद है कि १९२५ मे जब मैं मिशन कालेज लाहौर के न्यूटन होस्टल में रहता था, मैंने अपने एक लाहौरी मित्र को खाना खिलाया— उडद की दाल, तथा बकरे का महाप्रसाद और उन पर तैरता-तैरता घी। उसे खाना बडा स्वादिष्ट लगा।

कुछ दिनों बाद अचानक ही वह फिर मिल गया। छूटते ही उसने कहा, "यार महिन्दर तू फिक्र मत करना। मैंने तेरी रोटी खाई है, तुझे भी एक दिन घर बुलाकर खिला दूँगा।" मुझे याद तक नही था कि मैंने कब किसे रोटी खिलाई थी और बदला उतारने की कौन-सी बात थी? मुझे उसकी यह बात बडी अजीब लगी। असली बात यह है कि हमारे ये ग्रामीण किसान धरती के बेटे है, प्रकृति मे इनका गहरा सम्बन्ध है, और धरती की उदारता उनके खून मे बस गई है। वे इसी कारण अतिथियो तथा मित्रो को खिले चेहरे से मिलते हैं और अगर कोई मित्र उनके पास खाना खाए तो वे फूले नही समाते।

एक चढाई नीचे उतरकर हमने फिर ऊपर चढ़ना शुरू कर दिया और कुछ बागो मे से गुजरकर सामने अदरेटा नामक ग्राम, कैथ तथा धान के खेतो की सामूहिक सुन्दरता से सुसज्जित दिखाई देने लग गया। कैथ और पद्म के वृक्ष गुलाबी तथा सफेद फूलों से सजे हुए, चैत-वैशाख मे अपनी छटा दिखाते है।

अदरेटा गाँव अकेली-सी जगह पर है और यहाँ के चश्मे का पानी बडा निर्मल है। इसी कारण इस गाँव मे कई एकान्तप्रिय कलाकार आकर बसे हुए हैं। पिछले बीस वर्षो से यहाँ नोरा रिचर्ड्स रह रही है। यहाँ नोरा का 'वुडलैंड एसटेट' नामक एक आश्रम है, जो पन्द्रह एकड़ में फैला हुआ है। अब यह आश्रम गाव का एक अग बन गया है। नोरा, दयालसिह कालिज लाहौर के प्रोफेसर रिचर्ड्स की विधवा पत्नी है। कुछ दिन सडक के किनारे बनूरी ग्राम में रहकर नोरा ने अदरेटा को अध्ययन और जीवन की खोज के महान् प्रयोग के लिए चुना। ये प्रसिद्ध अमरीकी कवि वाल्ट विटमैन की बडी श्रद्धालु हैं। उसके काव्य-संग्रह 'लीव्ज ऑफ ग्रास' को ये अपनी बाइबल समझती है। शुरू-शुरू मे नोरा ने अपने आपको ग्राम-निर्माण के काम मे लगाये रखा। ग्रामवासियो को ये नाटकों द्वारा शिक्षित करती है। उन्होंने हमारे ग्रामीण जीवन के सम्बन्ध मे कई नाटक लिखे हैं, जिनको रंगमंच पर गाँव के स्कूलो के अध्यापक प्रस्तुत किया करते थे। बेनीप्रसाद नोरा का बडा प्रशसक है और उसीके पास रहता है। नोरा ने एक छोटा-सा ओपन एअर थियेटर भी बनाया हुआ है, जिसके मच का काम एक साधारण झोपड़ी से लिया जाता है।

अदरेटा से धौलीधार की अद्वितीय सुन्दरता का आनन्द लिया जा सकता है। एक दीवार की तरह पहाड़ खडे है। इन पहाडों की चोटियों पर चम-चम चमकती बर्फ आँखो को चुँधिया देती है। इस बर्फ मे से बर्फानी नदियाँ ढलकर पहाडियो से नीचे धारा की तरह चल पड़ती हैं। दोपहर के समय बादल आकर इस सारी सुन्दरता को अपने आँचल में समेट लेते हैं। धूप और बादलों की आँख-मिचौनी, पहाड की चोटियो पर अद्वितीय दृश्य प्रस्तुत करती हैं। यह नाटक धौली-धार पर सारा दिन चलता रहता है और कहीं सन्ध्या को जाकर समाप्त होता है।

सूर्यास्त के समय पहाडी चोटियाँ ऐसी लगती हैं जैसे पिघला हुआ सोना हो . फिर ये रग हल्का गुलाबी या भूरा-सा होकर रहजाता है। रात को चॉदऔर चॉदनी मे पहाडी चोटियो का खुरदरापन अति कोमल प्रभाव देने लग जाता है और धौली-धार के कदमो मे सोई हुई पालम की घाटी किसी स्वप्न-सुन्दरी की तरह प्रतीत होने लगती है।

नोरा के नाटकों मे धौलीधार का जिक्र आता है। वुडलैंड के सामने खड्ड से पार एक किसान ने अपनी झोपड़ी डाल ली है, जिसके कारण घाटी का दृश्य जरा बिगड गया है। नोरा ने सफेदे के पौधो की एक पक्ति लगाई है ताकि किसान की वह झोपडी आँखो से ओझल हो सके। नोरा अस्सी से ऊपर की हो चुकी है और उन्हे आशा है कि सफेदे के इन पेडो के बडे हो जाने पर वह किसान की झोपडी को उनकी ओट मे छिपा हुआ देख सकेगी। नोरा स्वय एक दुमजिले मे रहती है, जिसकी छत सलेट के पत्थरो की बनी है। यह मकान उन्होनेभवन-निर्माण के अपने विशेष सिद्धान्तो पर निर्मित किया है। दीवारो को अन्दर-बाहर मिट्टी से लीपा गया है और वे बडी साफ-सुथरी दिखाई देती है। बाहर वृक्षो के नीचे बैठने का प्रबन्ध किया गया है, जहाँ सन्ध्या को इस आश्रम मे ठहरने वाले लोग इकट्ठे बैठ-कर चाय पीते है। निचले कमरों मे मिट्टी के कई बर्तन और अनाज भरने की मिट्टी की कोठियाँ हैं, जिनमे गेहूँ और बासमती जमा की जाती है। दीवारो पर पत्तो के बने छाते टँगे हुए है। गर्मियों मे वह निचले कमरे में रहती है, जिसका द्वार बाहर बगीचे की ओर खुलता है। इस कमरे के दरवाजे और इसके सामने बांसो के छप्पर विसटेरिया की लताओ से ढके हुए है। ग्रीष्म ऋतु में इन बेलो पर गुच्छो की तरह लटकते हुए हल्के जामुनी रग के फूल खिलते है। कही-कही गुलाब और दूसरे जंगली फूलो के पौधे भी इस बगीचे मे लगे हुए है। इसका प्रभाव बड़ा सुखद और शान्तिदायक है। सर्दियो मे नोरा चौबारे में रहती है। इस कमरे मे उन्होने अपनी आवश्यकता की सब वस्तुएँ इकट्ठी की हुई है। आम तौर पर वह पलग पर लेटी रहती हैं। दुर्बल और वृद्ध नोरा, लगता है मानो पर्वत की कोई आत्मा हो। पर जब वह उठकर बैठती और बातें करती है, उसकी आँखो मे एक अनोखी चमक आ जाती है और उसके मुखड़े पर उसके रेशम-जैसे बिखरे बाल बड़े सुन्दर लगते है। प्राय: वह संस्कृति तथा शक्ति के सिद्धान्तो पर वाद-विवाद करती है। तथा शक्ति की होड मे दीवानी हो रही इस दुनिया मे संस्कृति के गुण गाती है। जहाँ वह बैठती है उसके पीछे एक नीले फूलदान मे पीले रग के सूरजमुखी के फूल सजाए गए होते है। इस जगह नोरा का जयदयाल नामक एक साथी भी रहता है। जयदयाल भी पहले कालेज मे ही पढाता था और उसे भी नाटक का बडा शौक है। बहुत देर आराम कर चुकने के बाद, जब नोरा को मिल बैठने की आवश्यकता होती है तब वह जयदयाल को भौंपू से "जयदयाल! जयदयाल!" कहकर

पुकारती है।

छज्जे के एक ओर नोरा का पढ़ने का कमरा है। इस कमरे के पर्दे टाट के हैं। फर्श पर चटाइयाँ बिछी हुई हैं और फर्नीचर के नाम पर यहाँ केवल एक मेज और कुर्सी है। रोशनदानो मे शीशो की जगह खादी का कपड़ा लगा हुआ है। टाट के पर्दे मिट्टी की दीवारो से खूब मेल खाते हैं। कई लोग मिट्टी के कच्चे घरो को पसन्द नही करते। अगर कोई कच्चे घरो की सुन्दरता को देखना चाहता है तो वह अंदरेटा मे नोरा का घर देखे। साफ-सुथरे मिट्टी से लिपे-पुते घर ऐसे लगते हैं जैसे धरती माता के बेटे हो। पक्की ईंटों की कुरूपता यहाँ कही दिखाई नही देती।

अपने घर के चारो ओर नोरा ने कई और भवन, झोपड़ियाँ भी बनाई हुई है। एक ओर बादामी निवास है। यह नाम एक वफादार घोड़े की याद मे रखा गया है। बादामी निवास मे वे अध्यापक रहते है जो यहाँ नाटक तथा संस्कृति के अल्पकालीन कोर्स के लिए आते हैं। उसी ओर एक और कुटिया है, जिसमें एक आइरिश लेखक और उसकी भारतीय पत्नी कुछ दिन हुए रहकर गए है। पहाड़ी के नीचे बेदियो की कुटिया है। इसको बी० पी० एल० बेदी और फरीदा बेदी ने बनाया था। किन्तु अब यह ढह गई है। बेदियो के जाने के बाद यह कुटिया नोरा के लिए बहुत देर तक एक सिरदर्द बनी रही है। छत के एक शहतीर को गिरने से बचाने के लिए नोरा ने एक और कमरा बनवाया है और 'धेले की बुढ़िया टका सिर मुँडाई वाली' बात हो गई है। इसके साथ ही इस आश्रम की चारदीवारी मे एक जगह से बाड टूटी हुई है, जिसमे से गाँव के पशु वुडलैंड की शान्ति को भग करने अन्दर आ जाते है।

पंजाब के श्रेष्ठ चित्रकार सोभासिंह ने भी अंदरेटा को ही अपनाया और यहाँ अपनी कुटिया बनाई। ऐसा कौन पंजाबी होगा जो सोभासिंह के नाम से परिचित न हो। उसका गुरु नानक का चित्र, जिसके नीचे 'नाम खुमारी नानका' लिखा हुआ है, हर सिख-घराने मे मौजूद है। उसका सोहनी-महीवाल का प्रसिद्ध चित्र तो उत्तरी भारत के हर कला-प्रेमी के पास है। सोभासिंह को पर्वत-प्रेम तथा कांगड़ा का एकान्त और शान्ति ही अंदरेटा में लाई है। वह सारा दिन अपने काम मे मग्न रहता है। उसने अपने चित्रों मे पहाड़ी सुन्दरियो की सुन्दरता लज्जा और भोलापन बड़ी सुन्दरता से चित्रित किया है। उसने वहाँ मेरी भी एक मूर्ति बनाई है जो एक खिड़की के पास रखी हुई है। क्योकि वह मूर्ति भूरे-से सीमेंट की है, इसको कई भोले पहाड़ी किसान श्रीकृष्ण की प्रतिमा समझकर फूल चढा जाते है। सोभासिंह ने मकान के सामने एक गोल तालाब बनाकर उसमे एक ऊँचा बाँस रखा है। स्वतंत्रता दिवस के अवसर पर वह इस बाँस पर राष्ट्रध्वज लहराता है। सोभासिंह ने अंदरेटा मे खूब रौनक लगा रखी है और उसका घर कला-प्रेमियो का एक क्लब ही बना हुआ है पढे लिखे ही नही सीधे-सादे किसान भी काफी

सन्ध्या मे उसके घर चित्रो को देखने आते है

सोभासिंह ने कागड़ा की सुन्दरियो के बड़े सुन्दर चित्र बनाए है एक नवेली वधू कलीरा पहन रगीन डोले मे बैठी पर्दा उठाकर बाहर झाँक रही है। उसके सामने पिटारी है, जिस पर पख फैलाए कलोल करता एक पक्षी ऐसा प्रतीत होता है मानो सुन्दरी पर मोहित होकर अपना प्यार प्रकट कर रहा हो। यह चित्र देखकर कागडा का लोकगीत ''भाभी कुक्कू कीहाँ बोलदा'' याद आ जाता है। सोभासिंह के कागडा की सुन्दरियों के चित्र, भारतीय कला मे विशेष स्थान रखते है।

अदरेटा की शान्ति और सुन्दरता का हमने खूब आनन्द लिया। मैंने वहाँ अपने मित्र वसन्तसिंह के मकान के ऊपरी बरामदे मे डेरा डाल लिया और वहाँ लेटकर धौलीधार के दृश्य जी-भरकर देखे। चोटियो पर बादलो की आँख-मिचौनी और धूपछाँव बड़े अच्छे लगते थे, और खेतों मे गऊओ तथा भेडो के रेवड बड़े मनभावन।

रात को बेनीप्रसाद ने हमें अपने यहाँ खाने पर बुलाया। पहाडी घरो मे सामने बाँसों का झुरमुट और पिछवाडे केले के पेड लगाने का आम रिवाज है। मैंने बेनीप्रसाद से पूछा कि केले पिछवाडे मे क्यों लगाते है। उसने बताया कि जब हवा चलती है तो केले के पत्ते बाहर की ओर झुककर कहते है "जाओ जी।" पर इसके उलट कागडा वाले महमान-नवाज है, इसीलिए सामने बाँस लगाते हैं और पीछे केले। बाँसो की शाखाएँ अन्दर की ओर झुककर कहती हैं, 'आओ जी।"

बाँसो के झुरमुट मे से निकलकर हम आँगन मे आए और हाथ धोकर खाना शुरू किया। भटूरे, उर्द-माश की दाल, भात और देऊबदल का अचार बहुत स्वादिष्ट लगा। और हाँ, साथ मे आमो की लौजी भी थी। खट्टी लौजी चखकर खाना शुरू करने का रिवाज विज्ञान के उसूल के अनुसार भी है। खटाई जिह्वा की स्वाद-ग्रन्थियो को, जिनके कारण हमे स्वाद का भास होता है, साफ कर देती है।

इससे मुझे राजा प्रकाशचन्द तथा ससारचन्द की बात याद आती है। एक बार राजा ससारचन्द ने गुलेर के राजा प्रकाशचन्द को ननौग मे खाने पर आमत्रित किया। राजा के रसोइए भी साथ आए। वे नही चाहते थे कि ससारचन्द के रसोइयो का मान बढ़े। उन्होने प्रकाशचन्द को सबसे पहले मालपुए खिला दिए। इसके बाद सारा खाना बेस्वाद लगने लगा और राजा को पसन्द न आया। जब ससारचन्द के रसोइयो को पता चला तो उन्होने राजा को म्हानी दिया और इसके बाद खाना उसको फिर स्वादिष्ट लगने लगा। जब प्रकाशचन्द को ससारचन्द के रसोइयों की इस चतुराई का पता चला, तो उन्हें खूब इनाम दिया।

कागड़ा के राजाओ की बाते करते हुए जगली जानवरों की चर्चा शुरू हो गई बेनीप्रसाद ने बताया कि ये सर्दियों मे कई बार घरों मे भी घुस

आते है। पिछले साल उनके पडोसी के घर आधी रात को एक बाघ घुस आया था। पड़ोसी हौसले वाला था। उसने द्वार बन्द कर लिया और अपने भाई के साथ मिलकर लाठियो और कुल्हाडियो से ही बाघ का काम-तमाम कर दिया।

कुछ दिन वहाँ रहकर हमने सोचा कि दूसरे गाँवो की भी सैर की जाय। और हम वहाँ से चल दिए।

बाजार मे से गुजरते हुए हम अदरेटा ग्राम से बाहर आ गए। बास के जगल को पार करके एक नदी आती है, जिसके एक किनारे पर शिवालय बना हुआ है। इसके बाद तरेल नामक गाँव पड़ता है। इस गाँव की विशेषता यह है कि यहाँ पनचक्कियो से धान कूटा जाता है। इस क्षेत्र के ग्रामों को तुन के वृक्षों के झुड, जिनके पत्ते ताँबे-जैसे होते हैं, एक अनोखी छटा प्रदान करते हैं। यहाँ बॉस के लचकीले वृक्षो के भी अनगिनत झुरमुट दिखाई देते है। आवा और पुन्न नामक खड्डों के किनारे सेमल के पेड है, जिन पर लाल रग के फूल लगते है। सेमल के वृक्षो के नीचे प्रायः पत्थर के चबूतरे बने होते है, इन पर कहीं-कहीं सिंदूर लगाकर लोग पूजा करते है।

बैजनाथ

'बाजार मे गुजरते, सूदों की दुकाने देखते हम अदरेटा से निकलकर एक ओक के जंगल मे घुस जाते है। इसके बाद एक कल-कल करती नदी के दर्शन होते हैं।

इस नदी के किनारे पर भगवान् शिव का मन्दिर है। यहाँ से चलकर हम तरेहल पहुँच जाते है। इस गाँव मे धान कूटने की पनचक्कियाँ लगी हुई है। तून के वृक्ष, जिनके पत्ते ताँबे-जैसे चमकते हैं; कोमल तथा लचकीले बाँसो और केलों के झुड, इस गाँव को एक अनूठी सुन्दरता प्रदान करते है।

कांगड़ा घाटी की सुन्दरता इस बात मे भी है कि यहाँ के वृक्ष और झाड़ियाँ कांगड़ा-कला के समान, विपरीत वस्तुओं का समन्वय दर्शाती है। जिस प्रकार कांगड़ा-कला में मुगल तथा हिन्दू शैलियो का मेल है उसी प्रकार कांगड़ा मे उष्ण तथा शीत जलवायु के क्षेत्रो की वनस्पतियाँ एक साथ पाई जाती है। ऐसा लगता है मानो यूरोप और एशिया का सगम हो रहा हो। यहाँ दोनो प्रकार के वृक्ष मिलते है—ऐसे पेड जो अधिक गर्म प्रदेशो मे होते है और ऐसे भी जो ठडे प्रदेशो में पाये जाते है। यहाँ बाँस, पीपल और आम के वृक्ष तथा ओक चेरी और जंगली गुलाब पास-पास उगे हुए हैं। आवा और पुन्न नामक खड्डो के किनारे सेमल के वृक्ष है, जिन पर लाल फूल लगते हैं इन सेमल-वृक्षो के आलवाल पर बड़े-बड़े चबूतरे बने हुए है। इनमे से कई एक की दरारें, जिनको देवता समझकर पूजा जाता है, सिन्दूर से रँगी हुई होती है।

खड्डे से पार हम पपरोला जा निकले यह गाँव सडक के किनारे पर है। इसके बाजार मे बड़ी चहल-पहल रहती है और हम जी भरकर पहाड़ी रहन-सहन की झाँकी देख सकते है। अब यहाँ बिजली भी लग चुकी है। पपरोला से बैजनाथ तक चढाई है। रास्ते मे बिन्नू नामक खड्ड पड़ती है। इस खड्ड को पुराने आर्य, बिन्दुक के नाम से पुकारते थे। बिन्नू से बैजनाथ तक कठिन चढाई है।

बैजनाथ की बाहरी सीमा पर स्थित मन्दिरों से ही पता चल जाता है कि अब हम एक प्राचीन कस्बे मे कदम रख रहे हैं। बायें हाथ को यहाँ का डाक बगला है, जहाँ से बिन्नू खड्ड का दृश्य दिखाई देता है। इस जगह हर समय ठंडी और तेज

हवा चलती रहती है। जिस स्थान पर डाक-बंगला बना हुआ है, यहीं पर कभी बैजनाथ के राजा का दुर्ग था। यह जागीरदार त्रिगर्त्त के राजा के अधीन था। कोई सौ वर्ष हुए, इस कस्बे मे महल, मंदिर और तालाब था। इनके निशान अब भी मिलते है। तांबे के छोटे-छोटे पैसे कई बार दबे हुए मिल जाते हैं।

बैजनाथ का पानी हाजमे के लिए बड़ा उपयोगी है। कहा जाता है कि महाराजा संसारचन्द अपने पीने के लिए पानी यहीं से मंगवाया करता था।

शहर के बाहर खुले मैदान मे हमने एक अद्भुत दृश्य देखा। कुछ नौजवान लड़कियाँ रोती-सुबकती नदी की ओर जा रही थी और कई नौजवान लड़के नदी के किनारे खड़े तमाशा देख रहे थे। आखिर लड़कियो ने नदी में कुछ मूर्तियाँ बहाई। ऐसा करते हुए मानो उन्हें बहुत दु:ख हो रहा था। सब-की-सब विलाप करने लग गई। नदी के किनारे खड़े लड़के यह देखकर जोर-जोर से हँसने लगे। हमने इस अनोखे मेले का अभिप्राय जानना चाहा तो पता चला कि यह मेला स्त्री जाति की इस हार्दिक आकांक्षा की ओर इंगित करता है कि उसे अच्छा वर प्राप्त हो। दुनिया-भर की स्त्रियाँ अच्छे पतियों के लिए याचना करती हैं और कांगड़ा-घाटी की युवतियों की यह कामना रली की पूजा में अभिव्यक्त होती है।

फाल्गुन के अन्त मे लड़कियाँ एक कौड़ी को घर में दबा देती हैं और अगले दिन से इस स्थान को पूजने लग जाती हैं। कोई पन्द्रह दिन तक लड़कियाँ यहाँ इकट्ठी होकर पूजा करती रहती हैं। फिर पहली बैशाख को रली का शंकर से विवाह हो जाता है। आधी लड़कियाँ शंकर की ओर तथा आधी रली की ओर हो जाती हैं। रली और शंकर की मूर्तियों को ब्याहे जाने वाले लड़के-लड़की की तरह उबटन मला जाता है। फिर एक ब्राह्मण हवन करता है और लड़कियाँ शंकर और रली की मूर्तियों के सिर में तेल डालती है। शंकर को दूल्हे के समान लाल कपड़े पहनाए जाते हैं। फिर दोनों को एक पालकी में डाल कर नदी की ओर ले जाया जाता है और इन्हें नदी में प्रवाहित कर दिया जाता है।

इस अनोखी किन्तु सुन्दर प्रथा की जड़ें इतिहास में हैं। कहा जाता है कि एक बार एक ब्राह्मण ने अपनी भरपूर जवान लड़की रली का ब्याह शंकर नामक एक छोटे से बालक से कर दिया। जब फेरे पड़ चुके और नववधू अपने बालपति तथा अपने भाई बस्तू के साथ जा रही थी कि मार्ग मे एक नदी के किनारे उसने डोली को रुकवा लिया। फिर उसने अपने भाई बस्तू से कहा, मेरी किस्मत में एक नाबालिग लड़के से ब्याह होना लिखा था, लेकिन अब मैं ऐसी जिन्दगी और जीना नहीं चाहती। पर मेरी याद में आगे से लड़कियों को तीन मूर्तियाँ बनानी चाहिएँ। एक मेरी, एक मेरे पति की और एक तेरी—मेरे भाई बस्तू की। लड़कियों को चाहिए कि इन मूर्तियों को चैत्र के महीने में पूजती रहें। फिर इनमें से दो का बैशाख की पहली तारीख को विवाह रचाया जाय, जैसे मेरा ब्याह हुआ था। उसके बाद

दूसरे या तीसरे दिन डोली मे डालकर इन मूर्तियो को नदी के किनारे लाया जाय और उसमे प्रवाहित कर दिया जाय। ये सब-कुछ मेरी याद मे किया जाय, मेरे भाई। और जो कोई भी ऐसा करेगी उस लडकी का मेरी तरह अनमेल ब्याह नही होगा।" ये कहते हुए रली ने दरिया मे छलॉग लगा दी और देखते-ही-देखते डूब गई। तब से आज तक रली, शकर और बस्तू की पूजा कांगडा के समस्त जिले मे हर जगह होती है।

रली का मेला देखकर हमने बैजनाथ के मन्दिर के दर्शन किए। व्यास की घाटी का सबसे सुन्दर ऐतिहासिक भवन बैजनाथ का मन्दिर है। बैजनाथ, वास्तव मे यहाँ के सबसे बडे मन्दिर का नाम है, जो शैव बेदान्त के निमित्त बनाया गया था। इसी मन्दिर के नाम पर नगर का नाम भी पडा मालूम होता है।

इस कस्बे का पहला नाम कीड ग्राम था। यह बात दो शिला-लेखों से प्रकट होती है, जो यहाँ से प्राप्त हुए हैं। यह लेख काव्यमयी और सुन्दर सस्कृत कविता मे लिखा है। इनमे इस मदिर के निर्माण का इतिहास बताया गया है। इस मन्दिर को यहाँ के दो व्यापारियो ने बनवाया था। इनमे कहा गया है

त्रिगर्त मे कीडग्राम नामक एक सुन्दर गाँव है। इस गाँव मे कई खूबियाँ है। यहाँ बिदुक नामक नदी पहाड़ की गोदी में से कूदती हुई निकलती है और अठखेलियाँ करती हुई गुजर जाती है। इस गाँव मे राजा लक्ष्मण का राज्य है। यहाँ दो भाई मनुक और आहुक रहते थे। इनके पिता का नाम सिद्ध था। इन भाइयो ने अपनी जायदाद बाँटी नही थी। दोनो ही बडे भले-मानस थे और इन्होने शिव का यह मन्दिर बनवाया। इस मन्दिर के द्वार पर गगा-यमुना और अन्य देवी देवताओ की प्रतिमाएँ है आसीक का पुत्र मदिर को बनाने वाले मिस्तरियो का सरदार था और सुशर्मण ग्राम से आया था। इसी प्रकार समान का पुत्र थोडक भी उसके साथ काम करता था। इन दो निपुण राज-मिस्तरियो के निरीक्षण मे शिव का यह मन्दिर बनाया गया। इस मन्दिर का निर्माण शामू के विचारो के अनुसार किया गया और उनमे रखी कई गण देवताओ की मूर्तियाँ चमक-चमक पडती हैं। यह बात बड़ी रोचक है कि इस मदिर को बनाने वाले दोनो राज-मिस्तरी कागड़ा नगर से आए थे।

बैजनाथ के मन्दिर की रचना कुछ इस प्रकार है। इसके बीच आठ वर्ग फुट का एक पूजा-स्थान है, जिसका रहस्य हर किसी को नही बताया जाता। इसके गिर्द एक मडप है। इस मन्दिर की छत ढलवाँ है। इस विशेष पूजा स्थान मे बेदान्त नाम का लिग रखा हुआ है। इसके अन्दर जाने के लिए एक बहुत- तग खिड़की है जिसके चारो ओर स्तम्भ हैं। मंडप की छत चार स्तम्भो पर खडी है। इन स्तम्भो पर बनी मेहराबे छत को नौ भागो में बाँट देती हैं। छत पत्थरो से चिनी गई है। मडप के सामने एक शानदार ड्योढी है। यह ड्योढी भी सात स्तम्भो

पर खड़ी है। ये खम्भे सीधे-साधे है और इनकी बनावट से पता चलता है कि पुराने जमाने के खम्भो से इनमे कोई अधिक अन्तर नही है। इनका चौरस तला, उन पर बढे हुए दो दायरे, इनमे खाली जगह, ये सब-कुछ पुरानी कला के नमूने हैं चाहे इनको हिन्दुओ की सजावट ने बाद मे ढक लिया प्रतीत होता है। मन्दिर की बाहरी दीवारे बहुत सुन्दर बनी हुई है,। इनमे खम्भे लगे है। और दो खम्भो के बीच खाली जगह में सूर्य आदि देवो की मूर्तियां रखी हुई है। सूर्य देव की एक मूर्ति, जैसा कि १२४० ई० के एक नागरी लेख से पता चलता है, भगवान महावीर की मूर्ति थी। मन्दिर की छत नई बनी मालूम होती है। और यहाँ के पुजारियो के कथनानुसार राजा समारचन्द के समय इसकी मरम्मत की गई थी। बड़े सौभाग्य की बात है कि बैजनाथ के मन्दिर जो १६०५ के भूकम्प मे कुछ अधिक हानि नही पहुँची इसके पास ही सिद्धनाथ जी का मन्दिर बिलकुल मलियामेट हो गया था।

बैजनाथ से जुगिन्दरनगर तक का प्राकृतिक सौन्दर्य बेजोड़ है। बैजनाथ से जरा ऊपर जाकर पालम की घाटी का अवलोकन किया जा सकता है। धान के लहलहाते खेतो मे किसानो की झोपड़ियाँ, तुन्न और बांसो के झुंड, उत्तर की ओर धौलीधार का पर्वत, दक्षिण मे अदरेटा की ढलान, और फिर दक्षिण पश्चिम की ओर जा रही छोटी-छोटी अनगिनत पहाड़ियां।

आसापुरी का मन्दिर यहां से बहुत अच्छी तरह दिखाई देता है। ऐसा प्रतीत होते है जैसे यह मन्दिर विपत्ति और दुःख मे पर्वतवासियो को आशा बंधाता रहा हो। चीड के एक जंगल मे से निकलते हुए हम एक सुन्दर घाटी में कदम रखते हैं, जिसके दोनो ओर पहाड़ियाँ है। यहाँ न तो कोई खड्ड है और न गड्ढे। पहाड़ियाँ धीरे-धीरे सड़क तक आ जाती है। दक्षिण मे एक सुन्दर जगल है और उत्तर मे धान के खेत। खेतो मे किसानो के घर सीढियो के समान ऊपर चढते जाते है। बिजली के तार पहाड़ों की सुन्दरता पर धब्बे के समान प्रतीत होते हैं।

उल्ल नदी के बिजलीघर के तार प्राकृतिक दृश्य मे बाधक बने हुए हैं। ऐसे लगता है कि नई सभ्यता की ये बलाएँ इस घाटी की सुन्दरता को नष्ट करके रहेगी।

सड़क के किनारे दुकानें बड़ी सजी हुई है। दुकानदारो ने अपनी दुकानों के बाहर सफेद गुलाब की बेलें लगाई ह जिनके फूल चांदनी रात मे चमकते है।

जब हम कोई दो मील और आगे गये तो देखा कि एक गद्दी भेड़ो का रेवड़ चरा रहा था। भेड़े घास चर रही थी और वह चकमक पत्थर से आग सुलगा रहा था। पत्थरों के चूल्हे पर उसने पानी गर्म किया और तांबे के मोटे गिलास मे चाय डाली। हमे देखकर उसने कहा, "आओजी तुम भी चाय पियो!" चाय पूछने के लिए

उसका धन्यवाद करके मैंने कहा, 'भई तेरी जिन्दगी ता बड़ी अच्छी है। न कोई चिन्ता, न कोई गम। भेड़-बकरियाँ चराना, उनका दूध पीना और मजे लूटना।" चाय का गिलास होठो से लगाते हुए वह बोला, "वाह भई वाह। जिन्दगी तो आपकी है, जो मोटरो मे उड़े फिरते है। आज कही और कल कही। हमारी क्या जिन्दगी है? भालुओं की तरह कन्दराओ में सोते हैं। कभी भेड़े खो गईं और कभी बाघो का सामना।" मैंने पूछा, "तुम रात को कहा रहते हो?" उसने एक गुफा की ओर इशारा करके कहा, "उसमे।"

बैजनाथ के ऊपर की ओर फौजी धार के आँचल मे बीड़ नामक एक ग्राम है। इस गाँव के बाहर ओक का एक बहुत घना वन है। इस वन मे एक नदी है। ऊपर जाकर, यहाँ के रईस पृथीपाल का घर है। पृथीपाल यहाँ का जमींदार है और इसने चाय बागान लगाये हुए है। आए-गए की खातिर करके पृथीपाल बहुत खुश होता है।

होली के दिनो मे बीड़ गाँव के जंगल मे मेला लगता है, जिसमें धौलीधार से गद्दी और कनेर आते है। लुगड़ी पीकर ये लोग सारा दिन नाचते-गाते रहते हैं।

कुल्लू के मेले की तरह इस क्षेत्र के लोग भी अपने देवताओ की पालकियो पर मेले मे लाते है और बीड़ का जगल इन दिनो मे कुल्लू के दशहरे का दृश्य उपस्थित कर देता है। इस मेले मे हम, लोगो के पहरावे में रगो के चुनाव को देख सकते है तथा गहनो से सजी हुई यहाँ की स्त्रियों को अपलक देखते हुए कागड़ा के पुराने कलाकारों की भूरि-भूरि प्रशसा कर सकते है जिन्होने अपने चित्रो मे स्थान-स्थान पर स्त्री की सुन्दरता को जी भरकर चित्रित किया है। और इस प्रकार न केवल अपनी कला को चमकाया है अपितु आने वाली पीढियो के लिए वे अपनी तूलिका द्वारा पहाड़ी सौन्दर्य और सहजस्वाभविक प्रेम को सुरक्षित कर गए है। मेले मे सज-धजकर आए लोग अपने खिलखिलाते कहकहो से कदम-कदम पर हमारा ध्यान अपनी ओर आकर्षित करते है और हमे इसी प्रदेश मे रुके रहने की प्रेरणा देते है।

कागड़ा घाटी की प्राकृतिक सुन्दरता का अवलोकन करके और वहाँ के जन-जीवन की सुन्दरता का आनन्द लेकर अब हम वापस अम्बाला के लिए रवाना हुए। मैंने अपने पेशकार से, जो हरियाना का एक सीधा-सादा जाट था और सफर में साथ जा रहा था, पूछा, "चौधरी साहब। पहाड़ और जंगल कैसे लगे?" कहने को तो उसने कह दिया, कि बहुत सुन्दर है जनाब, पर जब सध्या को हम पालमपुर पहुँचे और परमेश्वरीदास को जो कागड़ा में मेरा बड़ा मित्र और सहायक है मैंने पूछा कि हमारे चौधरी साहब का क्या हाल है तो उसने बताया कि चौधरी कहता था, "जान-बची लाखों पाए।"

जहाँ हमारा ध्यान बर्फ़ानी चोटियों और शान्त जंगलों की ओर था, चौधरी

का ध्यान गहरे खड्डों और खतरनाक मोड़ों की तरफ था। प्राकृतिक प्रेम बहुत थोड़े लोगों में होता है। कांगड़ा घाटी की सुन्दरता का रस कोई रसिया अथवा प्रकृति का पुजारी ही ले सकता है।

मेरे गाँव का एक वृद्ध यह किस्सा सुनाया करता था कि एक शहर पर से गिद्धों का झुंड गुजरा तो उनको केवल शव-ही-शव दिखाई दिये। एक मुर्गाबियों की पंक्ति निकली तो उन्हें सरोवर ही दीखे। तितलियाँ और मधुमक्खियाँ उधर से उड़ती हुई गईं तो उन्हें बस फूल-ही-फूल नजर आये।

जैसा जिसका स्वभाव हो वैसी ही वस्तुएँ उसको दिखाई देती हैं। मेरा चौधरी साथी गहरे खड्डों से बहुत भयभीत हो गया था, पर मैंने यह यात्रा सुन्दरता की खोज में की और कांगड़ा के पर्वतों में मानवीय सौन्दर्य, चित्र-कला-सौन्दर्य, और प्राकृतिक सौन्दर्य को जी भरकर निहारा।

महाराजनगर

हमारे अदरेटा के मित्रो ने बताया कि महाराज ससारचद के दुर्लभ चित्र-सग्रह का बडा भाग लबागाऊँ के राजा ध्रुवदेवचद के पास है और राजा आसापुरी के पहाड के नीचे एक जगह रहता है, जिसका नाम महाराजनगर है। हमने चाहा कि इन चित्रो को देखें, इसलिए परमेश्वरीदास को साथ लेकर घोडियो पर चढ, हम सूरज निकलते ही अदरेटा से चल पड़े। रास्ते मे एक छोटा-सा गॉव दत्तल आता है। दोनो ओर गुलाब और जगली चमेली की बाड महक रही थी। बसन्ती और पीले फूल मुँह खोले हुए से लग रहे थे मानो जमुहाइयाँ ले रहे हो। जगली गुलाब और चमेली की प्रशसा करते हुए हम पाड्डा नामक ग्राम मे पहुँचे। पाड्डा एक सुन्दर गॉव है। यहाँ कूले बहती हैं, और बड के बहुत वृक्ष है। इनके नीचे न केवल यात्री विश्राम करते है बल्कि गॉव की गाय-बछियो और भेड-बकरियो को भी छाया मिलती है।

पाड्डा से आगे भौरा नामक गाँव आता है। यहाँ इलाका बिलकुल बदल जाता है। न कूले दिखाई देती है, न हरियाली। चारो ओर खुश्क पहाडियाँ ही नज़र आती है। इस क्षेत्र को चगर कहते है। हौले-हौले चलते, आसापुरी के मदिर को दूर से देखते हुए हम दरमन नामक गॉव मे पहुँचे। यहाँ पॉच-सात दुकानो का छोटा-सा बाजार है। सोचा कि यहाँ कुछ सुसताया जाय। एक दुकान-दार ने चारपाइयाँ दी, और बड़ के नीचे लेटकर हमने आराम किया। स्त्रियो की एक टोली भी बड के नीचे चबूतरे पर बैठी थी। औरते आम के अचार से रोटी खा रही थी, और साथ ही एक कुत्ते को, जो बार-बार पास आता था, दुतकारती जाती थी। दुकानदार मेरे लिए खट्टी लस्सी, नमक और काली मिर्च डालकर लाया और मैंने इसको पतला करके बडे स्वाद से पिया।

दुकानदार का धन्यवाद करके हमने रास्ता पकडा, और कोई आधे घटे मे नागवन पहुँच गए। यहाँ हमे कोई नाग दिखाई नही दिया। पर कहते है कि बरसात मे यहाँ बहुत साँप होते है। यह बडा घना जंगल है। बेले चारो ओर रस्सियो की तरह पेडो पर चढी हुई है। अमलतास के वृक्ष पीले फूलो से लदे हुए थे, और कॉटेदार बबूलो और पलाशों पर लिपटी हुई लताओं के सफेद फूल

उन्हें एक अलग ही रूप प्रदान कर रहे थे। कांगड़ा-चित्रों में प्राय: वृक्षों से लिपटी लताएँ दिखाई देती हैं। लता स्त्री का प्रतीक है और वृक्ष पुरुष का। पुराने ज़माने में माधवी लता साधारणतः आम के वृक्ष पर चढ़ाई जाती थी, और माधवी तथा आम का ब्याह भी रचाया जाता था। संस्कृत और हिन्दी कविता में स्त्री की लता से तुलना की जाती है। यही कलाकारों ने अपने चित्रों में भी दिखाया है।

अब हम महाराजनगर पहुँच गए। दिल में सोच रहे थे कि यह कोई बड़ा गांव होगा, पर यहाँ केवल राजा तथा उसके कर्मचारियों के ही घर थे, और चारों ओर बाँसों का जंगल। मकानों के उत्तर की ओर लौकाट और नाशपातियों का बाग है। हम यह दृश्य देख ही रहे थे कि राजा ध्रुवदेवचन्द और उसका डोगरा मैनेजर हमें मिलने आ गए। वे हमें एक मकान में ले गए, जहाँ हमारे विश्राम के लिए पलंग बिछे हुए थे और तकियों पर अंग्रेज़ी अक्षरों में 'वैलकम' कढ़ा हुआ था। खाना खाकर हमने कोई घंटा-भर विश्राम किया।

तीन बजे के लगभग राजा का मैनेजर हमें फिर मिलने आया। उसने बताया कि राजा के पिता स्व० जयचन्द ने नौ विवाह किये थे। उनके अठारह बच्चे पैदा हुए, पर उनमें से एक भी न बचा। एक साधु ने राजा को बताया कि वह लम्बागाऊँ के महल को छोड़ दे और जंगल में वास करे—तभी उसकी सन्तान बच सकती है। राजा जयचन्द ने इस कारण ही इस स्थान पर आसापुरी के मंदिर के चरणों में मकान बनवाए और इस जगह का नाम महाराजनगर रखा। यहाँ उसके दो लड़के पैदा हुए। उनमें से ध्रुवदेवचन्द बड़ा है।

हमने डोगरे से कहा कि हमें पुराने चित्र दिखाए। पहले वह नायिका-भेद की, शीशे में जड़ी हुई, दो तस्वीरें लाया। ये दोनों ही बहुत सुन्दर थीं, और पुस्तक में छापने योग्य थीं। तभी राजा भी आ गया और हमने बातें करनी शुरू कीं। मैंने बताया कि हम केवल चित्र के फोटो ही खींचना चाहते हैं और माँग-कर अपने साथ कुछ नहीं ले जाना चाहते। इससे उसकी शंका दूर हुई। कहते हैं, दूध का जला छाछ को फूँक-फूँककर पीता है। कुछ वर्ष हुए, इस जिले में एक कला-प्रेमी अफसर नियुक्त था। जब भी किसी राजा के पास कोई पुराना चित्र देखता, उससे माँग लेता, और फिर लौटाने का नाम न लेता। राजाओं को भी चित्र वापस माँगने का साहस न होता क्योंकि वह अफसर वक्त का हाकिम था। आखिर परिणाम यह हुआ कि सारे राजाओं ने अपने चित्र-संग्रह छिपा लिए। और अब तक भी सब पहाड़ी राजाओं पर उस कला-प्रेमी का आतंक छाया हुआ था। बातचीत से मैंने राजा को विश्वास दिलाया कि मैं केवल कांगड़ा-कला के इतिहास की खोज करना चाहता हूँ, और इसमें उसकी भी नेक-नामी होगी। राजा को मुझ पर भरोसा हो गया और उसने बहुत सारे चित्र दिखाए। इनमें

से कुछ तो महाराज और अन्य पहाड़ी राजाओं के थे और कुछ और नायिका भेद के कोई बीस चित्र तो और सुन्दर थे ये चित्र बाल-बच्चों की हिफाजत से बँधे हुए थे और इससे पूर्व, राजा-रानियाँ और इनकी सन्तान ही इन्हें देख सकती थी। इन राजाओं को चित्र-कला से बड़ा प्रेम था। वे जब चित्रों को देखते अत्यन्त आदर भाव दर्शाते। देखने के बाद, चित्र वस्त्रों में लपेटकर, लकड़ी के सन्दूकों में, मोम के पत्ते डालकर बन्द कर देते। भारत मे इन चित्रो को शीशे मे मढ़वाकर दीवारो पर टाँगने का रिवाज नहीं था। यह रिवाज उन्नीसवी शताब्दी मे इंग्लैण्ड से हमारे देश मे आया। क्योकि ये चित्र वस्त्रो मे लिपटे, तथा सन्दूको मे बन्द रहते थे, और रोशनी मे, दीवारो पर टाँगे नही जाते थे, इस कारण इनके रंग वैसे ही चमकीले थे मानो अभी-अभी चित्रित किये गए हों।

मैं नूरपूर के वर्णन मे बता चुका हूँ कि मियाँ रामसिंह अपने चित्रो के जलाए जाने का समाचार सुनकर कितना रोया था, यह पुराने राजपूत भी जापानी समूराई की तरह अपने चित्रो से बड़ा प्रेम करते थे। जापानियो के अपनी चित्र-कला से प्यार के बारे मे जापानी कलाकार और लेखक उकाकूरा, इस घटना का वर्णन करता है। राजा होसोकावा के महल में सैशन कलाकार का बनाया बोधिसत्व का प्रसिद्ध चित्र सँभालकर रखा हुआ था। लकड़ी के महल को आग लगाई। समूराई पहरा दे रहा था, वह यह देखकर बड़ा परेशान हुआ। जलते हुए मकान मे फुरती से घुस गया और चित्र को उतार लिया। अपना कुरता तलवार से चीरकर चित्र के इर्द-गिर्द लपेट लिया। जब देखा कि आग मे से निकलना असम्भव है, तो तलवार से अपना पेट चीरकर उसने कपड़े मे लिपटे चित्र को उसमे डाल दिया और मुँह के बल लेट गया। जब आग बुझाई गई तो समूराई का झुलसा हुआ शव मिला। शव टटोला गया, और बोधिसत्व का महान् चित्र साबुत ही उसके पेट मे से मिला। यह कहानी है तो बड़ी करुणाजनक, पर बताती है कि कला-प्रेमी जापानी अपनी कला की कितनी कद्र करते थे। जहाँ जापानी और हमारे राजपूत राजा, कला और कलाकारो का जितना आदर करते थे, उसकी तुलना मे हमारे आजकल के उच्चवर्ग का क्या हाल है! खास तौर पर हमारे पूरी-कचौरी, कोरमा, कीमा, कोफते और पुलाव खाने वाले पंजाबियो का! मैं पकौड़े, आलू-कचालू और गोल-गप्पे खाने वालो का जिक्र नही कर रहा, जिनका जीवन ही, दूकानो मे बैठे, मक्खियाँ मारते गुजर जाता है, बल्कि उस ऊँचे वर्ग की बात कर रहा हूँ जिसके पास पैसा है, और जो शाम को व्हिस्की की बोतल खोलकर बैठता है, तथा रात्रि को क्लबो मे रमी और ब्रिज खेलता और विलायती नाच नाचता है। जितना पैसा ये लोग अपनी औरतो की सज-धज, गहने-लत्तों पर खर्च करते हैं यदि उसका चौथाई हिस्सा भी किताबों और चित्रों पर खर्च करे तो न

केवल साहित्य और कला फूलने-फलने लगे अपितु इनकी आत्माएँ भी कोमल कल्पनाओं को ग्रहण करने लगीं।

जब रात को मैं चारपाई पर लेटा तो नायिका-भेद के चित्रों का ही ध्यान आता रहा और काफी देर तक नींद न आई। नींद आई, तो भी इन चित्रों के ही सपने आते रहे।

अगले दिन हमें राजा ने जीप द्वारा जयसिंहपुर और लवगाऊ की सैर कराई। उसने बताया कि वहाँ पहाड़ में बहुत बड़ी गुफा है, जिसमें मार-धाड़ के दिनों में सिख आकर छिपते थे। जब सिखों का पंजाब पर अधिकार हो गया, तो उन्होंने पहाड़ों को जीतकर वहाँ के निवासियों को तंग करना शुरू किया। उस समय पहाड़ी लोग इस गुफ़ा में सपरिवार शरण लिया करते थे। अब यह गुफ़ा चमगीदड़ों का अड्डा बनी हुई है।

जयसिंहपुर में महाराज संसारचंद का जन्म हुआ था, और यह जगह बीजापुर से दिखाई देती है। बीजापुर एक बड़ा-सा बाजार है, और यहाँ जानकीनाथ का पत्थर का बना हुआ मन्दिर है। मन्दिर के पास एक बड़ा चौड़ा कुआँ है। इस कुएँ को देखकर डर लगता है। कुएँ के पास एक चौरस मैदान है, जिसमें राजा घोड़ों को कवायद करवाते थे। कहते हैं, राजा कीरतचन्द का घोड़ा बेकाबू हो गया, और कुएँ की ओर दौड़ा तथा एक छलाँग में ही कूदकर, कुएँ को पार कर गया।

ग्वाल टीला

महाराज ससारचद के शानदार चित्र देख चुके तो हमने टीरा सुजानपुर की ओर प्रस्थान किया, जो कटोच राजाओं की राजधानी थी। कांगडा-कला, जिसने हरिपुर गुलेर मे जन्म लिया, इसी जगह फूली-फली और अपने चरमोत्कर्ष पर पहुँची। सुजानपुर टीरा की कच्ची सड़क, पालमपुर से तीन मील नीचे, पठानकोट-मडी की सडक को काटती है। यह सडक भवारना नामक एक कस्बे मे से गुज़रती है, जिसके बाजार में बडी रौनक होती है। इस बाजार मे अधिकांश दूकाने सूदो की हैं। इन दुकानों में कांच की चूडियाँ, दर्पण, साबुन कंघियाँ तथा आधुनिक जीवन का और छुट-पुट सामान बिकता है। पहाडी लोग, इन चीजों को आजकल बहुत पसन्द करने लग गए हैं। सडक के बाईं ओर भवारना की कूल बहती है। इसके किनारो पर बैंद-मजनूँ के वृक्ष लगे है। इस कूल से पालमपुर के बहुत-बड़े क्षेत्र को पानी मिलता है। इसको राजा भीमचन्द के छोटे भाई कृपालचद ने १६९० मे बनवाया था। यह कांगडा घाटी की सबसे पुरानी कूल है। इसमे बदला गाँव के ऊपर से धौलीधार का हिमजल आकर गिरता है। कृषको के लिए यह कूल वरदान है, और इस घाटी के लोग कृपालचद को आज तक बड़े प्रेम और श्रद्धा से स्मरण करते है।

सड़क पर कोई सातवें मील पर जयम्बिका देवी का मन्दिर है, जिसके गिर्द पाँच वट-वृक्ष लगे हुए हैं। इससे कोई एक मील नीचे जाकर, धौली धार का मनोरम दृश्य दिखाई देता है। सामने चिबलहार की घाटी है, जिसमे धान की खेती होती है। खेतो के पीछे धौलीधार के बर्फ से ढके पहाड सूरज की किरणो मे दमक-दमक उठते है। सडक के किनारे प्राय. आम के वृक्षों के झुड, तथा किसानो के घरो के पास केलो के झुरमुट दिखाई देते है।

धान के खेतो मे सारस के जोडे बैठे थे। बार-बार ये पक्षी सडक पर चल रही हमारी मोटर को जैसे सन्देह की दृष्टि से देख रहे थे। सडक नीचे उतरती हुई मोहल खड्ड तक पहुँच जाती है, जिसके परली ओर रुड-मुड खुश्क पहाड़ियाँ हैं। इनमे सबसे प्रसिद्ध ग्वाल टीला है। कहा जाता है कि यहाँ एक चरवाहा अपनी गऊएँ चरा रहा था कि उधर से लाल दुपट्टे वाली एक सुन्दरी गुजरी लडकी की

सुन्दरता पर मोहित होकर चरवाहे ने कहा, 'आर जरागी, पार जरागी, लाल घड़े वाली मेरी लाड़ी।'' यह सुनकर कि एक अजनबी उसको अपनी दुलहन की सजा दे रहा है युवती ने उसके प्रेम की परीक्षा लेनी चाही। उसने कहा, "ए बहादुर जवान! अगर तू मेरा वर बनाना चाहता है तो इस टीलेसे छलाँग लगा-कर दिखा।' नए प्यार के नशे मे चरवाहा पहाड़ी की उस चोटी से कूद पड़ा और खड्ड मे गिरते ही प्राण त्याग दिए। लाल दुपट्टे वाली सुन्दरी प्रेम की इस अपूर्व अभिव्यक्ति से इतनी प्रभावित हुई कि उसने भी उसी टीले पर चढ़कर नीचे छलाँग लगाकर जान दे दी।

इन प्रेमियो की वही समाधि बना दी गई। जो लोग ग्वाल टीला के पास से गुजरते है, उनको मुहब्बत की दीवानगी की यह कहानी हमेशा याद आती है, जिसमें दो अनजान पहली बार एक-दूसरे से मिले और पहली मुलाकात मे ही एक-दूसरे पर कुर्बानी हो गए। पहली नजर मे प्यार की यह एक अजीब कहानी है,और कांगड़ा घाटी के लोग इसको अभी तक याद करते है— कभी सहानुभूति से, कभी सराहना करते हुए, और कभी उपहास से।

इससे कुछ मील दूर थुरल नाम का एक गाँव है। इस गाँव के बाजार मे भी बड़ी रौनक थी। थुरल के बाद सड़क और भी खराब थी, जिस पर चलते हुए हम आलमपुर पहुँच गए। यह जगह राजा आलमचद ने १६५७ मे बसाई थी। यहाँ लक्ष्मीनारायण का पत्थर का बना एक मन्दिर है, जिसको राजा अभयचंद ने १७४७ मे बनवाया था। मन्दिर के सामने गरुड की एक मूर्ति है, जिसकी नाक तोते जैसी है, और जो घुटने टेककर विष्णु भगवान् को प्रणाम कर रही है।

राजा संसारचद के महल के खंडहर व्यास के दाएँ किनारे पर है। इनके गिर्द अमराइयो के झुरमट और धान के खेत है।

व्यास नदी और उसका मोतियों-जैसा चमचम करता पानी —अब हमारे सामने बहता हुआ नजर आने लगा। व्यास का जल समीपवर्ती कई पहाड़ियों के रग-रूप को और भी निखार देता है। पजाब के दरियाओं मे, चिनाब और व्यास से कई किस्से जुडे है। हीर-रांझा और सोहनी-महिवाल का प्यार भी चिनाब के निकटवर्ती गाँवो मे ही परवान चढा।

व्यास नदी का कांगड़ा के राजपूत-इतिहास से विशेष सम्बन्ध है। इस नदी या इसकी उपनदियो के किनारे ही कटोच राजाओं ने अपने किले और महल बनवाए, जिनके अवशेष अब तक दिखाई देते हैं। ये किले राइन नदी के किनारे जर्मनी के सम्राटो के सुन्दर किलो की याद दिलाते है। व्यास के तटवर्ती गाँवो मे ही महाराजा ससारचन्द ने अपना जीवन बिताया। इन्ही गाँवों मे कांगड़ा के प्रसिद्ध चित्र, जिनमें प्रेम की विविध भावनाएँ व्यक्त है, चित्रित किये गए। कई चित्रो मे महल की खिड़कियों मे से बाहर बह रही व्यास नदी दिखाई देती है।

इसमे रत्ती मात्र भी सन्देह नहीं कि ये चित्रकार प्राकृतिक दृश्यो के बड़े प्रेमी थे और इस नदी के अपूर्व सौन्दर्य का इन पर बड़ा प्रभाव था।

प्यार और मुहब्बत की कहानियो वाला यह दरिया कुल्लू मे रोहतांग दर्रे की बर्फ मे से निकलता है, और भयानक खड्डो और खाइयो मे से होता हुआ, मनाली के स्थान पर कुल्लू की घाटी में प्रवेश करता है। मनाली से लेकर सुलतानपुर तक यह नदी दुनिया-भर मे बेजोड़ प्राकृतिक दृश्यो से होती हुई गुजरती है, और इसके किनारो पर देवदार तथा आलडर नाम के शहतूत-जैसे पत्तो के वृक्ष के जगल हैं। मडी के जिले से निकलकर यह नदी राजगिरि के ताल्लुके मोलग और कागड़ा के जिले मे प्रवेश करती है, बिन्नूँ नामक नदी, जो बैजनाथ के ऊपर पहाडियो मे से निकलती है, इसमे आकर मिल जाती है। बिन्नूँ नदी मे आवा नाम की एक नदी भी मिलती है। इस जगह के दाएँ हाथ, बीजापुर नाम का एक कस्बा है, जहाँ संसारचन्द का जन्म हुआ था। इससे कुछ नीचे, लबागाऊँ नामक एक गाँव है, जिसमें ससारचन्द की सन्तान मे से सर जयचन्द नाम के एक प्रसिद्ध रईस ने आमों के बाग में अपनी हवेली बनवाई थी। नदी के किनारे आमो के कई बागीचे हैं। लंबागाऊँ के सामने महलमोरी नाम की रुड-मुड पहाडियाँ है, जिनकी चोटियाँ विकराल लहरो की तरह एक-दूसरे पर चढती जाती है।

दूर से देखने पर जब इन पहाडियो की केवल चोटियाँ ही दिखाई देती है तब यह क्षेत्र नीरस-सा प्रतीत होता है। इन पहाडियों के आस-पास का क्षेत्र खुश्क और वीरान है। इस सारे क्षेत्र मे कोई जगल दिखाई नही देता, पर इन पहाडियो के बीच मे धरती के हरे-भरे खण्ड है, जिनमे लोगो ने अपने घर बसाए हुए है। अनाज की पैदावार भी होती है। इन खेतो तक वे खुश्क हवाएँ भी नहीं पहुँच सकती, जो किसी हद तक ऊपर की पहाडियो की वीरानी का कारण हैं।

इससे कुछ मील नीचे आलमपुर नामक गाँव है,जिसके सामने सुजानपुर शहर है। सुजानपुर मे किला है, महल है, मंदिर हैं। इस जगह बँदला गाँव से निकली निऊगल नाम की नदी व्यास मे आकर मिल जाती है।

सुजानपुर की ओर जाने से पहले एक नजर दरिया पर डालना लुत्फ से खाली नही होगा। दक्षिण-पश्चिमी मार्ग अपनाकर यह दरिया ज्वालामुखी की पहाड़ियो से होता हुआ नदौण मे, घाटी मे प्रवेश करता है। इसी जगह पर कुनाह और माण नाम की नदियाँ इसमे आकर मिलती है। अमतर में राजा संसारचद के वशजो के कई महल है। नदौण के बाद जसवान नामक पर्वत-श्रेणियो से अव-रुद्ध यह नदी, उत्तर-दक्षिण की ओर पहाडियो के साथ वहने लगती है। कुछ मील नीचे, दाईं ओर ज्वालामुखी शहर है, जिसमे ज्वलादेवी का प्रसिद्ध मदिर है। नदी के दाईं ओर डेहरा गोपीपुर है। यह एक तहसील है। यहाँ दरिया के किनारे एक बहुत प्यारा सा डाक-बँगला बना हुआ है कुछ मील नीचे जाकर दरिया

ं दाहिनी ओर, हरिपुर गुलेर का शहर है, जिसके पास बान गंगा आकर व्यास से मिलती है। यहाँ गज्ज नाम की नदी भी देहर नाले को लेकर व्यास में आकर प्रवेश करती है।

तलवाडा मे पश्चिमी सुराँ व्यास मे आकर गिरती है, और फिर दरिया पहाडो मे से बाहर निकल आता है। सर्दियो मे यहाँ दरिया का पानी बिलकुल साफ होता है। ककड-पत्थरो मे से गुजरती पानी की धारा एक सुहाना सगीत उत्पन्न करती है। कही-कही पानी ताल-तलैयो मे विश्राम-सा करने लगता है। इन तलैयो मे माहसीर मछली बहुत मिलती है। रेह से नीचे यह दरिया तीन धाराओ मे बँट जाता है, और मीरथल के पास जाकर फिर एक हो जाता है। मीरथल पर पहाडियो से छुटकारा पाकर दरिया अतिवेग से बहता है, मानो मैदानो की स्वतत्रता का आनद ले रहा हो।

मानसून के दिनो मे जब दरिया पानी से भरा होता है, तब तट के सारे छोटे-बडे पत्थर डूब जाते है, और किनारो से बाहर छलकता हुआ दरिया एक-सार बहता जाता है। यहाँ नदी का वेग बहुत अधिक होता है, और इसमे नाव भी नही डाली जा सकती। नदी के आवेग से खडित पहाड बहकर नीचे चले जाते है। इन दिनो कई निर्भीक पहाडी युवक मश्को पर दरिया पार करते है।

आलमपुर का रास्ता बडा कठिन है। इसमे बडे उतार-चढाव आते है। हमारी जीप का ड्राइवर रसीलसिह, जो हमीरपुर गाँव का रहने वाला है, चाहे था नाटा-सा आदमी, लेकिन बडा बहादुर और हौसले वाला था। रास्ता जितना बीहड और खतरनाक था, वह उतने ही साहस से गाडी आगे बढाता जाता। घाटियो को लाँघता, नदियो को चीरता, वह शेर की तरह गाडी के स्टीयरिंग से साथ जमकर बैठा था, और उसने तभी दम लिया जब हम आलमपुर के समतल मैदान मे जा पहुँचे।

सुजानपुर

व्यास को नौका से पार करके, पत्थर की सीढियाँ चढते हुए हम टीरा-सुजानपुर पहुँचे। यह नगर राजा घमडचद ने १७६१ ई० मे बसाया था, और उसने यहाँ कई सुन्दर भवन बनवाए थे। फिर इसके पोते ससारचद ने इस नगर को और भी चार चाँद लगाए। नगर के बाहर, व्यास के किनारे, नरवदेश्वर नामक शिव और पार्वती का मदिर है। इस मदिर को राजा संसारचद की सुकेतकी रानी ने बनवाया था। इस मदिर की दीवारो पर चित्र बने हुए है, जिन्हे ससारचद के दरबारी कलाकारों ने चित्रित किया बताते है। कई चित्र संसारचद और उसकी सुकेतकी रानी के है। कइयो मे रामायण, महाभारत और भागवत के दृश्य प्रस्तुत किये गए है। हाथी, बारहसिंघे, घोडे और अन्य कई प्रकार के पशुओं के चित्र भी इन दीवारो पर अकित किये गए हैं। छत और दीवारो के चित्रो मे, जिन तक मनुष्य का हाथ नही पहुँच सकता, उसका स्वाभाविक रग ज्यो-का-त्यो बना हुआ है। निचले चित्र, यात्रियो के स्पर्श से मैले हो चुके है। यात्री प्राय: चित्रो को उँगलियो से छूकर अनुभव करने का प्रयत्न करते है। मदिर के पीछे लाल पत्थर की बनी दुर्गा की मूर्ति है। इस मूर्ति मे दुर्गा महिषासुर का मर्दन कर रही है। जब हमने इस मदिर मे प्रवेश किया तब एक ब्राह्मण-पुजारी, अपनी सफेद टोपी मे मोरपंख सजाकर, देवी की पूजा कर रह था।

सुजानपुर टीरा की एक विशेषता, वहाँ का खुला मैदान है। इतना बडा समतल मैदान पहाडो मे नही मिलता। यहाँ पुराने राजाओ की फौजे कवायद किया करती थी। इस मदिर के एक कोने मे राजा ससारचद का बनवाया हुआ श्रीकृष्ण भगवान का मदिर है। यह एक बहुत सुन्दर भवन है। इसमे रखी हुई कृष्ण और राधा की मूर्तियाँ, वशी और वस्त्र धारण किये हुए बहुत सुन्दर लगती हैं। एक पत्थर की शिला पर, नदौण के मिसरू और बकरू, दो मिस्तरियो के नाम अकित हैं, जिन्होने इस मंदिर को बनाया था।

राजा ससारचद का महल नगर के ऊपर की ओर एक पहाडी पर है। इस पर पहुँचने के लिए एक टीले पर मे चढना पडता है, जिसका मार्ग बडा पथरीला है। महल की ड्योढी के दोनो ओर प्रहरियो के आकार की खिडकियाँ बनी हुई

है। दाईं ओर दरबार-हाल है, जिसके बाईस द्वार हैं। यहाँ से व्यास नदी, और सुजानपुर के बाकी इलाके का सुन्दर दृश्य दिखाई देता है। इस महल की छतें ढह चुकी हैं, और ऐसा लगता है जैसे कुछ ही वर्षों में यह भवन बिलकुल नष्ट हो जायगा।

कहा जाता है कि दरबार हाल के हर द्वार पर एक राजा बैठता था। इस प्रकार बाईस राजा, संसारचन्द को सम्मानित करने के लिए, एकत्रित हुआ करते थे। दरबार-हाल के नीचे एक छोटा-सा तालाब है, जो होली के दिनों में रंग से भर दिया जाता था, और सुजानपुर टीरा के लोग यहाँ राजा के साथ होली खेला करते थे। बाएँ हाथ पर गौरीशंकर का मंदिर है, जो १८१० में बनाया गया था। यहाँ शिव और पार्वती की आदमकद अष्टधातु की मूर्तियाँ हैं, जिनकी संसारचन्द पूजा किया करता था। कहा जाता है कि शिवजी की मूर्ति, राजा संसारचन्द की आकृति पर बनाई गई है। इस मंदिर के भित्तिचित्र अति सुन्दर हैं। मगर खेद से कहना पड़ता है कि यहाँ भी किसी मूर्ख श्रद्धालु ने बहुत-से चित्रों पर सफेदी पोत दी है। मंदिर के पुजारी ने हमें राजा संसारचन्द के चाँदी के पूजा-पात्र भी दिखलाए।

दक्षिण की ओर चामुण्डादेवी का मंदिर है, जिसके कलश पर त्रिमूर्ति का चिह्न है। यह चित्र कांगड़ा के बहुत-से प्राचीन मंदिरों में देखने को मिलता है। सूर्य के प्रकाश में यह मंदिर खूब चमकता है। यहाँ से पूर्व में, मंडी की निर्जन पहाड़ियों, और दक्षिण में, हमीरपुर के शुष्क इलाके का दृश्य देखा जा सकता है। यह मंदिर सबसे पहला भवन है, जिसको राजा घमंडचन्द ने बनवाया था। इसकी दीवारों पर ऊँटों की कतार-जैसा, ऊँची-नीची पहाड़ी धरती का एक दृश्य है। शायद संसारचन्द के चित्रकारों को यह दृश्य कैलाश से मिलता-जुलता दिखाई देता हो।

चामुण्डा देवी के मंदिर के नीचे रानियों के महल थे, जो अब ढह चुके हैं। खंडहरों में अब घास उगी हुई है।

कटोच राजाओं का इतिहास भी, बाकी राजपूतों की तरह, जो अपना वंश चंद्र और सूर्य से जा मिलाते हैं, पुरानी कथाओं में खोया हुआ है। कटोच राजपूत अपने-आपको सुशर्मण के वंशज समझते हैं। सुशर्मण का उल्लेख महाभारत में आता है। यह वंश, शुरू में, मुलतान में था। कुरुक्षेत्र के युद्ध के बाद इन्हें मुलतान की भूमि से हाथ धोना पड़ा और ये लोग जालंधर के जिले में आ बसे, जहाँ रहते हुए इन्होंने कांगड़ा का किला बनवाया। कांगड़ा के पश्चिम की ओर का क्षेत्र भी कटोच कहलाता था। कांगड़ा की घाटी में तब इसके अतिरिक्त दो और जिले थे चंमर और पालम चंमर और पालम के दक्षिण की ओर वह क्षेत्र है जो शुष्क पहाड़ियों की केवल एक लड़ी-सी है पालम के पूर्व की ओर, कांगड़ा और

के बीच एक उपजाऊ क्षेत्र है जिसमे चाय बागान हैं और चाय की खेती होती है

महाराज ससारचद, कागडा का सबसे प्रसिद्ध राजा हुआ है। उसके पिता तेगचन्द ने केवल एक वर्ष ही राज्य किया । उसके राज्य मे कोई विशेष घटना नही हुई, पर महाराजा ससारचन्द का पडदादा घमडचन्द एक बडा बहादुर राजा था। मुगल साम्राज्य उस समय पतन की ओर जा रहा था। अहमदशाह दुर्रानी ने, जिसका पजाब पर अधिकार था, घमडचन्द को जालधर दुआबे का गवर्नर बना दिया । चम्बा के राजा से उसने पालमपुर का ताल्लुका भी छीन लिया। एक चित्र मे, जो लबागाऊँ के राजा ध्रुवदेवचन्द के पास है, राजा घमड-चन्द व्यास के किनारे पूजा करता हुआ दर्शाया गया है। एक कोने में गाने-बजाने वाले ढोल और तूतियाँ बजा रहे है। राजा के सामने उसके परिवार के लोग तथा उसके दरबारी बैठे है, जिनकी दाढियाँ मुसलमानी ढंग से कटी हुई है। इनमे उसका पोता ससारचद भी खडा है। घमंडचन्द का चेहरा बडा निर्दयी बनाया गया है; और कलाकारों ने इस राजा के कठोर स्वभाव और दृढता को बडी खूबी से व्यक्त किया है। इन सबकी पृष्ठभूमि मे व्यास नदी बह रही है। यह चित्र सुजानपुर में मिलता है और कागडा-कला का सबसे पुराना नमूना है।

जब संसारचन्द सिंहासन पर बैठा, तब वह दस वर्ष का था। पजाब मे उस समय गडबड मची हुई थी। दुर्रानी अपना आतंक कभी भी जमा नहीं सके थे। सिख मिसले पजाब के मैदानो मे खुदमुख्तियार हो रही थी, और उनकी नजरे अब पहाडी रियासतो की ओर लगी हुई थी। ससारचन्द ने रोहेलो, अफ़गानो और राजपूतो की एक बडी-सी सेना इकट्ठी की और सब पहाडी राजाओ पर अपनी धाक जमा ली। एक चित्र में, जो लम्बागाऊँ के राजा के पास है, ससारचद अपने भाइयो के साथ घोडे पर चढा हुआ दिखाया गया है। फतहसिंह, उसके बाईं ओर है, और उससे छोटा, मानसिंह दाईं और एक छोटे-से टट्टू पर सवार है। ससारचन्द और उनके भाइयो के पीछे उनके अर्दली है, जिनके हाथो मे मोरपखो के चँवर हैं। संसारचन्द, जो बहुत जवान और बहादुर आदमी था, अपने भाइयो और अर्दलियों के बीच, सरलता से पहचाना जा सकता है।

राजा संसारचन्द कागडा घाटी का सबसे शूरवीर राजा माना जाता है। इति-हासकार बार्नेस कहता है कि जो नाम राजा ससारचन्द ने कमाया, उसके उत्तरा-धिकारियो मे से कोई भी उसकी बराबरी नही कर सका। वह बीस साल तक, जो मन मे आया, करता रहा। जब भारत मे मुगलों का राज्य समाप्त हो गया था, उसने पहाडी प्रदेश में व्यवस्था और शान्ति को बनाए रखा। उसके राज्य मे, सुख-चैन होने के कारण, कई बुद्धिमान वहाँ आ बसे और ललित कलाओं मे विशेष वृद्धि हुई। गुलाम महीउद्दीन पंजाब के इतिहास मे लिखता है कि ससारचन्द एक बडा भाग्यशाली राजा था वह रहमदिल और अपनी प्रजा से प्यार करने वाला

लोग, नौशेरवाँ की तरह उनका आदर करते थे। गुणी लोगो की कद्र करने मे वह दूसरा अकबर था। हर प्रकार की योग्यता रखने वाले, कलाकार और कथाकार कागडा मे जमा हो गए और महाराज उन सबमे खुशियाँ बाँटता रहता। वे लोग, जो खुश रहते थे और दूसरो को खुश रखते थे, वे महाराज खास निकटवर्ती गिने जाते थे, और महाराजा उन्हे लाख-लाख बखशीशे देता रहता था। गायको और भाटो की, उसके दरबार मे बहुत बडाई होती थी। कई लोग उसे 'हातिम' कहकर याद करते थे, और कई 'रुस्तम' कहकर पुकारते थे।

कागडा घाटी की इस शान्ति को १८०४ मे गोरखो के आक्रमण ने भंग कर दिया। अमरसिंह थापा ने चालीस हजार सैनिक लेकर घाटी पर चढाई की। गोरखों ने ससारचन्द को महल मोरिगा नामक स्थान पर पराजित किया और राजा ससारचन्द अपने परिवार को लेकर कांगडा के किले मे जा छिपा। गोरखो के आक्रमण मे इतनी गडबड फैली कि सारे क्षेत्र मे अनाज का एक दाना भी किसी ने नही बोया। नगरो की गलियों मे घास उग आई, और नदौण के बाजारो में बाघ आकर दहाडने लगे। संसारचन्द ने महाराजा रणजीतसिंह की सहायता माँगी। १८०९ मे सिखो की सेनाओ ने गोरखो को मलियामेट कर दिया। इसके बाद कागड़ा के दुर्ग मे ससारचन्द की सेना के साथ, सिख फौज भी रहने लगी और ससारचन्द, रणजीतसिंह को खिराज देने लग गया। वर्ष मे एक बार वह लाहौर जाकर, महाराजा से मिल आता था। किले पर अधिकार करने पर वहाँ के कई चित्र सरदारो के हाथ लगे। इनमे से कुछ आजकल अलावलपुर के सरदार सन्तप्रकाशसिंह के पास है। इनमे से एक चित्र मे, राजा ससारचन्द महाराजा रणजीतसिंह के दरबार मे बैठा दिखाया गया है। ससारचन्द की दाढी अब सफेद हो गई है और उसके चेहरे पर, वह पुरानी शान नजर नही आती।

एक अंग्रेज सैलानी विलियम क्राफ्ट ने उन्नीसवी शताब्दी के आरम्भ मे कागडा घाटी का मनोरंजक वर्णन लिखा है। विलियम मूर क्राफ्ट पशुओ का चिकित्सक था। इसको ईस्ट इडिया कम्पनी ने, बगाल मे फौजी घोडों की देख-भाल के लिए नियुक्त किया था। १८२० मे वह रणजीतसिंह के दरबार मे आया और उसने महाराजा को कुछ अग्रेजी पिस्तौल भेट किए। महाराजा को ये हथियार बहुत पसन्द आए, और मूरक्राफ्ट को हिमालय की सैर करने की आज्ञा दे दी। मूर क्राफ्ट, टीरा सुजानपुर मे कुछ काल तक रहा, और फिर मडी तथा कुल्लू से होता हुआ लद्दाख की ओर निकल गया। उसने सुजानपुर टीरा मे महाराजा संसारचन्द के साथ सन् १८२० ई० मे काफी समय बिताया। ससारचन्द के छोटे भाई फतहचन्द को उसने एक भयानक रोग से बचाया, और ये दोनो इतने कृतज्ञ हुए कि मूर क्राफ्ट को उन्होने सरोपा दिया, और उसके नाम एक जागीर लगा दी। यही नही, बल्कि फतहचन्द, मूर क्राफ्ट का 'पगड़ी-बदल' भाई बन गया।

मूर क्राफ्ट इस घटना का उल्लेख इस प्रकार करता है जब फतहचन्द स्वस्थ हो गया तो उसने मेरे हाथ से अपनी पगड़ी बदल ली उसने अपनी पगड़ी, मेरे सिर पर रखी और मेरे टोप को अपने सिर पर ओढ़ लिया। फिर हम दोनों ने हाथ मिलाए। फिर हमने एक-दूसरे के सिर पर से कुछ रुपये वारे, जो नौकरों में बाँट दिए गए। उसने मुझे थोड़ी-सी दूब भी दी, और इस प्रकार जात-पाँत और रंग-रूप की परवाह न करते हुए मुझे संसारचन्द के परिवार का ही एक सदस्य बना लिया। इस सबका अर्थ और चाहे कुछ भी न हो, पर इतना अवश्य है कि उसने अपनी कृतज्ञता का प्रमाण अनुपम ढंग से दिया।"

मूर क्राफ्ट ने संसारचन्द के वंश और उसके दैनिक जीवन के बारे में बहुत कुछ लिखा है : "सन्ध्या को, बुलाने पर मैं उससे मिलने गया। राजा अपने पुत्र और पोते के साथ एक खुले बाग में सैर कर रहा था। राजा संसारचन्द लम्बा और हृष्ट-पुष्ट है। उसकी आयु कोई साठ वर्ष के लगभग होगी, रंग साँवला है पर नक्श बहुत ही तीखे और कोमल है। उसका पुत्र राय अनुरूपचन्द बहुत खूबसूरत है। उसके चेहरे का रंग गोरा है और उसका शरीर कुछ अधिक मोटा है। कुछ काल तक, संसारचन्द सतलुज से लेकर रावी तक सबसे अधिक शक्तिशाली राजा था। सतलज नदी से लेकर कश्मीर तक के सब राजा इसे खराज देते थे। इसके धन का कोई ठिकाना नहीं था। कोई पैंतीस लाख रुपया, इसको वार्षिक करों से मिलता था। अब यह राजा गरीब हो गया है और डर है कि महाराजा रणजीतसिंह इसके पूरे राज्य को हड़प कर जायगा। इसकी सब मुसीबतें, इसकी अपनी खड़ी की हुई हैं। जैसे-जैसे इसका ह्रास हो रहा है, वैसे-वैसे इसके पड़ौस में महाराजा रणजीतसिंह जोर पकड़ता जा रहा है।"

राजा के दैनिक जीवन के बारे में लिखते हुए मूर क्राफ्ट कहता है - "राजा संसारचंद प्रभात का समय पूजा-पाठ में बिताता है। फिर कोई दस से बारह बजे तक अधिकारियों और दरबारियों से मिलता है। मेरे लौटने से कई दिन पहले एक छोटे-से बंगले में यह समय काटता रहा, जिसे उसने मेरे रहने के लिए खाली किया था। यह बंगला बाग के बाहरी ओर है। दोपहर को राजा, दो या तीन घंटे के लिए आराम करता है। इसके उपरान्त वह कुछ देर के लिए शतरंज खेलता है और फिर रात्रि को नाच-गाने की महफ़िल गर्म होती है। गाने वाले प्रायः ब्रज-भाषा में श्रीकृष्ण भगवान् की स्तुति के गीत गाते हैं। संसारचंद स्वयं भी चित्रकला का शौकीन है और उसने अपने दरबार में कई कलाकार रखे हुए हैं। उसके पास चित्रों का एक बहुत बड़ा संग्रह है। इनमें कुछ चित्र अर्जुन के भी हैं, और कुछ दूसरे चित्रों में महाभारत के दृश्य प्रस्तुत किये गए हैं। इस संग्रह में पड़ौसी राजाओं और संसारचंद के पूर्वजों के भी चित्र हैं। इनमें दो चित्र सिकन्दर के भी थे, इनमें से एक चित्र, राय अनुरूपचंद ने मुझे दिया है। चित्र में सिकन्दर बहुत

सुन्दर नयन-नक्शों वाला सेनापति दिखाया गया है। उसकी लाल, भूरी घुँघराली लटें उसके कंधों को छू रही है और सिर पर लोहे का टोप है, जिसके गिर्द मोती लगे हुए हैं। सिकन्दर का बाकी पहरावा एशियावासियों-जैसा है। राजा को यह मालूम नहीं कि उसके पास यह चित्र कहाँ से आया? ऐसा लगता है कि यह चित्र उनके यहाँ पीढ़ी-दर-पीढ़ी चला आ रहा था।"

राजा संसारचंद के महलों के निशान आलमपुर में अब तक मिलते हैं। नदी के किनारे एक चबूतरा, जिस पर बैठकर राग-रंग होता था, अभी तक मौजूद है। महल लगभग गिर चुके हैं। वह बंगला, जिसका जिक्र मूर क्राफ्ट ने किया है, अभी तक खड़ा है।

यह बात अभी तक समझ में नहीं आई कि महाराजा संसारचन्द का चित्रों का इतना बड़ा संग्रह इतनी देर कहाँ पड़ा रहा? महाराजा रणजीतसिंह ने जब कांगड़ा घाटी को जीता तो संसारचंद के दरबार की सारी शान जाती रही। संसारचंद की मृत्यु के बाद उसका चित्र-संग्रह, तीन परिवारों में बाँट दिया गया। कुछ चित्र संसारचंद के भाई फतहचन्द के हिस्से में आए, जो लम्बा-गाऊँ में रहने लग गया था। कुछ चित्र संसारचंद के पुत्र जोधबीर को मिले। जोधबीर, संसारचंद का एक गद्दी सुन्दरी से जन्मा पुत्र था। नदौण वालों ने अपने चित्रों को अमृतसर और बम्बई के कई व्यापारियों के हाथ बेचा, और वहाँ से ये चित्र हिन्दुस्तान से बाहर के देशों के अजायबघरों में पहुँच गए। डॉक्टर कुमार स्वामी ने इनमें से कुछ बहुत बढ़िया चित्र अमृतसर के व्यापारी राधाकिशन भरामी से खरीदे, और अब ये चित्र बास्टन के कला-संग्रह में रखे गए हैं। इनमें से कुछ बनारस के भारतीय कला भवन में, कुछ इलाहाबाद के नगरपालिका अजायबघर में, कुछ लाहौर के अजायबघर में, कुछ लन्दन के विक्टोरिया एण्ड एलबर्ट म्यूजियम में और कुछ पेरिस में पहुँच गए हैं।

कुछ चित्र कई व्यक्तियों के घरों में भी हैं। इनमें से बम्बई के जे० डी० मोदी, अहमदाबाद के कस्तूर भाई लालभाई पटना के राधाकृष्ण जालान, कलकत्ता के गोपीकृष्ण कनोडिया आदि कुछ प्रसिद्ध नाम हैं। कांगड़ा के एक प्रमुख वकील श्री मानचन्द उप्पल ने नदौण के घराने से कुछ चित्र प्राप्त किए। श्री उप्पल के संग्रह में एक ईरानी ढंग का छोटा चित्र है, जो अपनी सुन्दरता और कोमलता के लिए अपना उदाहरण स्वयं है। इससे प्रतीत होता है कि संसारचंद के चित्रकार मुगल कलाकारों के काम से परिचित थे।

कांगड़ा-चित्रों का सबसे बड़ा संग्रह मियाँ रामसिंह के पास है। मियाँ रामसिंह रणवीरसिंह का पड़पोता है। कांगड़ा की पराजय के बाद संसारचंद अधिकतर आलमपुर की बारहदरी में रहा। कहा जाता है कि पहाड़ी की चोटी पर बने सुजानपुर वाले महल को, उसने अपने हाथों से गिरवाया था ताकि रणजीतसिंह

उस पर अधिकार न कर सके महाराज रणजीतसिंह ने इस महल की शान की बडी प्रशसा सुन रखी थी। यह बात ज्यादा समझ जचती है कि ससारचद ने टीरा के महल को इसलिए छोडा कि वहाँ की चढाई बडी दुर्गम थी, और वहाँ आना-जाना कठिन था। यही कारण है कि ससारचंद, व्यास के किनारे आलमपुर में, एक समतल से स्थान पर रहने लग गया। ससारचद का १८२३ मे स्वर्गवास हुआ और उसका उत्तराधिकारी अनिरुद्धचद बना। महाराजा रणजीतसिंह का प्रधान मत्री राजा ध्यानसिंह अपने पुत्र हीरासिंह के लिए अनिरुद्धचंद से उसकी बहनो का रिश्ता माँगता था। चाहे जान बचाने के लिए अनिरुद्धचंद ने हाँ कर ली, पर इस बात मे उसने अपनी बडी हेठी समझी और नदौण लौटते ही वह अपना तथा बहन का साज-सामान और कुटुम्ब को लेकर सतलुज पार अग्रेजो के क्षेत्र मे चला गया। अपने साथ वह बहुत सारे चित्र भी ले गया। आखिर वह टिहरीगढवाल पहुँचा, जहाँ उसने अपनी दोनो बहनो को राजा से ब्याह दिया।

चार साल हरिद्वार मे रहने के बाद अनिरुद्धचद का टिहरी गढ़वाल मे स्वर्गवास हुआ। उसके बाद उसके दो पुत्र रणबीर चद और प्रमोदचद रह गए। अग्रेजों के लुधियाना-स्थित एजेंट के कहने-सुनने पर महाराजा रणजीतसिंह ने रणबीरचद और प्रमोदचद को पजाब बुला लिया और महलमोरियाँ मे उनको पचास हजार की जागीर बख्श दी। ये दोनो भाई कस्हिन नामक गाँव मे रहने लगे। यही उनको १८३५ मे एक अग्रेज यात्री वीन मिला। प्रमोदचद बिना किसी सन्तान के मर गया, किन्तु रणबीरचद के एक 'सिर तोडा' था। सिर-तोडा, राजा का वह पुत्र होता है, जो दासी के पेट से जन्म ले। इसका नाम प्रधानचद था। कागड़ा के सबसे अधिक चित्र, प्रधानचद के पोते रामसिंह के पास है। कहा जाता है कि जब बार्नेज को उनकी जागीर का फैसला करना था तो प्रधान-चन्द ने कहा, मुझे ससारचद का हुक्का, पूजा-पात्र और चित्र दे दें, फिर चाहे जागीर दूसरे पक्ष को सौंप दी जाय। रामसिंह का पिता भवानीसिंह आलमपुर मे ससारचन्द के महल मे रहने लग गया। पर गरीबी के कारण उसके पुत्र रामसिंह और देवीसिंह वहाँ से, भुदारना चले आए, क्योंकि ससारचद के महल की मरम्मत भी इनसे नही करवाई जा सकती थी। रामसिंह बड़ा गम्भीर और समझदार आदमी था। उसको अपने खजाने की कीमत की पूरी जानकारी थी। उसने अपने चित्रों को बहुत सँभालकर रखा था। उसके पास कोई ११० चित्र, 'कुमारसंभव' पर आधारित, शिव और पार्वती के थे। १७४ चित्र 'दुर्गा सप्तशती' पर आधारित थे तथा २६ चित्र राजा ससारचद के दरबारी जीवन के बारे में थे। इस सग्रह के बारे में मुझे प्रमुख पजाबी कलाकार सरदार सोभासिंह ने बताया।

रामसिंह के पास, रामपुर के नवाब कलबअली खाँ का एक चित्र भी है,

जिसका दा । गुलाम मुहम्मद खाँ, महाराजा संसारचंद के पास पनाह लेने आया था। नवाब कलबअली खाँ ने मियाँ प्रधानचंद को २०० रुपये मासिक की एक जागीर बख्शी थी, यह जागीर अभी हाल ही में टूटी है। जागीर के टूटने के बाद मियाँ रामसिंह अपने चित्रों के संग्रह को बेचने पर मजबूर हो गया था। शिव-पार्वती और दुर्गा के चित्र, पंजाब सरकार ने चंडीगढ़ के कला-केन्द्र के लिए खरीद लिए हैं। इस प्रकार कांगड़ा-कला का सबसे बड़ा संग्रह पंजाब में ही रहा, ताकि पंजाबी इससे उत्साहित हों और कांगड़ा-कला का जी भरकर आनन्द ले सकें।

हम सुजानपुर में वापस आ रहे थे कि हमने देखा कि सारी सड़क ही बारातों से भरी हुई है। रास्ते में हमें कोई पन्द्रह बारातें मिलीं। डोलियों का यहाँ अब भी रिवाज है, और नथों वाली बहुएँ, बड़े ध्यान से हमारी ओर देख रही थीं, विशेष-कर आर्चर साहब की ओर कि यह विदेशी कौन है ? रंग-बिरंगे कपड़े पहने, अपने सुन्दर मुखड़ों को नथों से सजाए, स्त्रियों की टोलियों से सारी सड़क भरी पड़ी थी। ऐसे लगता था, जैसे कांगड़ा घाटी की युवतियों की सुन्दरता इकट्ठी होकर बाढ़ की तरह हमारे सामने आ गई हो। कई सुन्दर चेहरे, तीखे नाक, गोल ठोडियाँ और शर्मीली आँखें तथा सरू-जैसे कद देखकर कांगड़ा-कला की सुन्दर नायिकाएँ याद आ जाती हैं। इन-जैसी सुन्दरियों को देखकर ही कांगड़ा के चित्रकारों ने नारी-सौन्दर्य के मन को आकर्षित करने वाले चित्र बनाए होंगे। कांगड़ा की बाँकी नारियों ने न केवल घाटी को ही सजाया है, अपितु कला को भी वह देन दी है जो रहती दुनिया तक अमर रहेगी।

गुलेर चित्र-कला की खोज

अभी पौ फूट ही रही थी कि पठानकोट के स्टेशन से हम छोटी मीटर-गेज रेलगाडी मे सवार हो गए। गाड़ी ने धीरे-धीरे मैदानो को छोड़कर कागडा की सुन्दर घाटी मे प्रवेश किया। पक्की सडक का सफर सुहाना है, किन्तु रेल-मार्ग का कुछ और ही मजा है। दोनों का आनन्द लेना चाहिए। दोनो ओर नाटी-नाटी पहाड़ियो और ढलानो पर खेत है। किसी-किसी खेत मे सतरे और गलगल के बाग हैं और अधिकाश मे मक्की और ज्वार की फसल खडी है, ढाडे (पौधे) खडे है। दोनो मे मचानो पर लडके और लड़कियाँ गोफिये से कव्वे और तोते उडा रहे थे, जो मक्की की फसल को बड़ी हानि पहुँचाते है। यही मार्ग, जिस पर अब रेल की पटरी है, किसी जमाने मे एक कच्ची सड़क थी, और मुगल तथा सिख सेनाओं ने इसी रास्ते से इस क्षेत्र पर आक्रमण किया था।

रेल के डिब्बे की सीखचों वाली खिडकियो मे से कभी-कभार धौली की बर्फ का भी दृश्य दिख जाता था। यदि इस प्रकार के सुन्दर दृश्य यूरोप के किसी देश मे होते तो वहाँ का रेल-विभाग अवश्य ही बड़े-बड़े कॉच के डिब्बे बनाता, जिनमे से पहाड स्पष्ट दिखाई देते। यहाँ न कोई चोर, न डाकू, फिर भी मालूम नही, किस अफसर ने अंधाधुंध मैदानो की नकल करते हुए सब डिब्बो की खिडकियो मे सीखचे क्यों गाड दिए है।

रेल की पटरी धीरे-धीरे ऊँची होती जा रही थी, और गाड़ी साँस खींचती, हाँफती हुई, गुलेर के छोटे-से स्टेशन पर पहुँची। एक बार तो मन मे अचरज हुआ कि क्या यही गुलेर का प्रसिद्ध स्थान है, जहाँ कांगडा-कला का जन्म हुआ? गाड़ी से उतरकर देखा तो हरिपुर का किला अपनी पूरी आन-बान और शान से, पहाडो की चोटी पर, बान गंगा नदी के किनारे, पूरे क्षेत्र पर छाया हुआ प्रतीत होता था। किले को देखते ही यह अनुभव होता है कि पिछले जमाने में यह स्थान अवश्य ही अत्यन्त प्रभावशाली रहा होगा।

बान गगा एक नाले की तरह चौडी है। बरसाती नदी है, और इसमे पानी नही था। बड़े-बड़े पत्थरो को लाँघते हुए हम हरिपुर के कस्बे में पहुँच गए। गुलेर का राजा बलदेवसिंह जरी का चोगा, सफेद चूड़ीदार पाजामा और सिर पर

बनारसी पगड़ी बाँधे हमारी प्रतीक्षा कर रहा था।

उसके पीछे दस-बारह नौकर खड़े थे। विश्वम्भरदास ने मेरा तथा आर्चर साहब का परिचय राजा से करवाया। हमने उससे मिलकर प्रसन्नता प्रकट की। आर्चर ने उसकी तरफ देखकर कहा कि उसकी शक्ल राजा गोवर्धनचन्द से मिलती है। यह बात बिलकुल ठीक थी। राजा गोवर्धनचन्द उसका पूर्वज था, यह सुनकर राजा बड़ा खुश हुआ।

अब हम गोल पत्थरों की पगडंडी पर चलते हुए कस्बे की ओर बढ़ रहे थे। चारों ओर पीपल और वट वृक्षों ने खूब छाया की हुई थी, और हर पेड़ के इर्द-गिर्द पत्थरों का गोल चबूतरा बना हुआ था। मकानों की दीवारें भी गोल, सफेद और सलेटी रंग के पत्थरों की बनी हुई थीं। हरिपुर एक बड़ा खामोश-सा कस्बा लगता है, जैसे रिप वैन विंकल का स्वप्निल वातावरण लिये हुए हो। एक बड़ा-सा तालाब आता है और इसके बाद बाजार की दुकानें। मार्ग में कई पुराने मन्दिर भी आए। बाजार में से गुजरकर हम सब चौड़े मैदान में पहुँच गए, जहाँ राजा लोग पोलो खेला करते थे। इस मैदान के एक कोने की ओर डाक बंगला है और तीन कोनों में प्राचीन मन्दिर है।

अब हम किले के पास पहुँच गए। इस किले की दीवारों में बड़ी-बड़ी दरारें पड़ी हुई थीं, जिनमें पीपल के पौधे उग आए थे। यह भी पता चला कि १६०५ ई० के भूकम्प ने किले को बड़ी क्षति पहुँचाई। किला चाहे काफी ढह चुका है, पर अब तक भी ऐसा लग रहा था मानो हरिपुर के कस्बे पर राज कर रहा हो। हमने थोड़े खड़े करके, यहाँ से कस्बे का दृश्य देखा। सामने पहाड़ की चोटी पर दुर्गा का मन्दिर है। मंदिर के बाहर एक शेर की मूर्ति है। मंदिर तक बड़ी कठिन चढ़ाई है, और जीवट वाले व्यक्ति ही मंदिर तक पहुँचते हैं। प्रायः नव विवाहित जोड़े या वे लोग जिन्होंने कोई मन्नत मानी हो, अपनी आकांक्षाओं की पूर्ति होने पर यहाँ चढ़ावा चढ़ाने आते हैं।

किले के बाहर एक द्वार है, जहाँ से बान गंगा का दृश्य बहुत अच्छा दिखाई देता है। इस किले के ध्वस्त महलों को देखकर हम लोग उन मकानों में पहुँचे जहाँ आज-कल राजा बलदेवसिंह रहता है। राजा ने हमारे ठहरने का एक खुले से कमरे में प्रबन्ध किया था। फर्श पर कालीन बिछा हुआ था और ऊपर गाव तकिए और सफेद चाँदनी (चादरें)। हम जूते उतारकर कालीन पर बैठ गए और विश्वम्भरदास से कहा कि राजा से चित्रों का संग्रह मँगवाए। राजा ने कहला भेजा कि खाना खाइये फिर चित्र दिखाए जायँगे। खाना खाकर हमने कुछ देर आराम किया, पर मन में पुराने चित्रों को देखने की बड़ी उत्कंठा थी। तीन बजे के लगभग राजा ने चार बड़े से लाल बस्ते भेजे। राजा कला का प्रेमी है, और चित्रों के इतिहास के बारे में अच्छी जानकारी रखता है। हर चित्र के पीछे उसने उर्दू में सबसे और

चित्र के विषय का उल्लेख किया है बहुत सारे चित्र राजाओ और रानियो के हो थ इनमे राजा गोवर्धनचन्द के सबसे अधिक थे इससे प्रतीत होता था कि इस कला को बढ़ाने प्रोत्साहित करने मे इस राजा का काफी हाथ था। इस प्रोत्साहन से ही कलाकारो को इतना काम करने की प्रेरणा मिली। कुछ चित्र राधाकृष्ण की रासलीलाओं के भी थे। हम ये चित्र देख ही रहे थे कि विश्वम्भर दास टिक्का साहब का सन्देश लेकर आया कि कुछ चित्र ऐसे भी है, जिनमे मनुष्य के उन्मुक्त और निर्बाध प्रेम की झाँकियाँ प्रदर्शित की गई है और ये भी हमे अवश्य देखने चाहिएँ। टिक्का साहब स्वय तो मदिरा के नशे मे औंधे पडे एक अलग कमरे मे बन्द थे, और राजा नही चाहता था कि हम उसे इस दशा मे मिले। कुछ देर बाद राजा ने एक और बस्ता भेज दिया जिसमे वे चित्र थे जिनके बारे मे कुँवर साहब ने सूचना भेजी थी। जितने चित्र कला की दृष्टि से सुन्दर थे, उतने चुनकर मैंने आर्चर को पकडाए और उन सब चित्रो के दाम का हिसाब जोडकर हमने राजा को बताया। राजा ने ये दाम स्वीकार कर लिए और हमने वे चित्र पजाब म्यूजियम के लिए खरीद लिए।

इन चित्रो को देखने से पता चलता है कि वैष्णव धर्म के अतिरिक्त पजाब की प्रेम-कथाओ ने भी चित्रकारो को बडा प्रभावित किया है। इनमे हीर-राझा, मिर्जा साहिबाँ और सोहनी-महिवाल सबके चित्र मिलते है। मिर्जा हाथ मे नेजा थामे घोडे पर सवार आ रहा है और साहिबाँ सखियो मे बैठी चरखा कात रही है। मिर्जा को देखकर पूनी सखियों के हाथ मे ही रह जाती है और वह मिर्जा को देखकर इस तरह मुग्धा हो जाती है जैसे सपेरा साँप को वश मे कर लेता है। सोहनी चनाव मे तैरती दिखाई गई है और दरिया के दूसरे किनारे पर महिवाल भैंसे चरा रहा है और अलगोजा बजाकर अपना जी खुश कर रहा है। एक बडे सुन्दर किन्तु करुणाजनक चित्र में एक प्रेम-कथा अकित है। पार्श्व मे बर्फ से ढके पहाड है, और सामने एक राजकुमारी चादर के पर्दे की ओट मे नहा रही है। चादर बारीक है और राजकुमारी का सुन्दर शरीर उसमे से दीख रहा है। एक कोने मे डोमो का लडका राजकुमारी की ओर टकटकी लगाए देख रहा है। कहा जाता है कि डोम लड़के और राजकुमारी में प्रेम हो गया, और वह राजकुमारी को भगाकर ले गया। उस डोम पर फिर क्या बीती, यह सब चित्र के दूसरी ओर दिखाया गया है। राजा के सिपाहियो ने प्रेमियो का पीछा किया और तीरो से दोनो का अन्त कर दिया। राजा एक चबूतरे पर बैठा यह करुणाजनक दृश्य देख रहा है, और अपनी बेटी की मृत्यु पर उसके मन मे शोक भी है, लेकिन उसकी करतूत पर क्रोध भी है। क्षोभ और क्रोध के मिले-जुले भावो को चित्रकार ने बडी निपुणता से चित्रित किया है।

हमने राजा से पूछा कि क्या इससे पहले भी किसी ने उनका चित्र-सग्रह देखा

है ? उसने बताया १८२६ ई० मे मिस्टर फ्रैंच यहाँ आया था और वह पहला कलापारखी था जिसने कला-प्रेमियो को इन गुलेर-चित्रों के बारे मे अपनी पुस्तक-'हिमालयन आर्ट' द्वारा जानकारी दी । उसके बाद पंजाब का एक फाइनेंशल कमिश्नर लनीफी यहाँ आया और राजा ने कुछ चित्र उसको भेंट किये । फिर तो ये चित्र लकडी के बडे सन्दूको मे बद कर दिए गए और किसी आदमी को नही दिखाए गए । यही कारण था कि ये अभी तक गुलेर मे मौजूद थे ।

चित्रो को देखकर हम ऊपर की बस्ती देखने चले गए । यहाँ घरो मे केले उगाने का आम रिवाज है और गुलेर के अधिकतर चित्रो मे केले के पेड प्राय: चित्रित होते है । ऊपर जाकर एक बडा तालाब है जिसके किनारो पर मन्दिर और चारो ओर बड और पीपल है । यहाँ से घाटी का अच्छा दृश्य दिखाई देता है । पहाडी की गोद में सलेटी रंग के मकान और नदी के किनारे पनचक्कियाँ है ।

सूरज डूब चुका था और पहाड अधकार मे छिप गए थे । रात को विश्राम के लिए हम डाक-बँगले मे पहुँच गए । हमारे हरिपुर आने का समाचार कस्बे मे पहुँच चुका था और बहुत-से आदमी और स्कूल के लडके बरामदे मे बैठे हमारी प्रतीक्षा कर रहे थे । उन्होने हमे कहा कि किसी जमाने मे हरिपुर के कस्बे को पहाड का काशी माना जाता था—और यहाँ विद्वान् पडित और कलाकार राजाओ की सरपरस्ती मे रहते थे । अब यह कस्बा दिन-प्रतिदिन उजड रहा है । कला के बारे मे तो इन्हे कोई दिलचस्पी नही थी, पर अपने कस्बे की माँगे अवश्य मेरे सामने रखना चाहते थे । उनकी माँग यह थी कि यहाँ एक कालिज खोला जाय और बान गंगा पर पुल बनाया जाय, क्योंकि बरसात मे दूसरी ओर जाने मे बडी कठिनाई होती है । इतनी छोटी जगह मे कालिज तो असम्भव था, पर इतना ध्यान मुझे अवश्य आया कि एक अच्छा पुस्तकालय और एक छोटी-सी आर्ट गैलरी यहाँ होनी चाहिए । पुस्तकालय मे कागडा से सम्बन्धित जितनी पुस्तके निकल चुकी है रखी जानी चाहिएँ । और आर्ट गैलरी में जो चित्र किताबो मे छप चुके है, फ्रेम कराकर लगाने चाहिएं । इस प्रकार यहाँ की जनता को भी पता चले कि कागडा-कला है क्या !

इनकी माँगे सुन चुके तो हमने भी उनसे पहाडी गीत सुनाने का अनुरोध किया । एक लडके ने गीत गाया, जिसमे एक माँ अपने मुन्ने को जागने के लिए कहती है कि सूरज निकल आया है और वह जी लगाकर पढे । पढकर वह मंत्री बने या विमानचालक । स्वतन्त्रता ने लोगो के मन मे क्या क्या उमगे और आकाक्षाएँ सँजोई है । आजादी से पहले तो यहाँ लोग फौज मे भरती होने के अतिरिक्त और कुछ सोच भी नही सकते थे । अनपढ लडके बरतन माँजने या रोटियाँ पकाने के धधे को छोडकर और कुछ कर-धर भी नही सकते थे ।

न शिक्षा और ज्ञान तथा बहुत-से नये काम धन्धों का माग

प्रशस्त किया इसके कारण अब कागड़ा की जनता भी विकास-योजनाओं का पूरा लाभ उठा रही है।

हरिपुरवासियो से अवकाश पाकर हमने खाना खाया और सोने की तैयारी की। गर्म पानी की बाल्टी में पैर डुबोकर दिन-भर की थकावट दूर हो गई, और मै पॉव और टॉगे पोंछकर रजाई ओढकर लेट गया। कितनी गर्मी और आराम पहुँचा। रजाई ! कम्बलो के बीच सोने वाले भला क्या जाने रजाई का मजा ! मुझे तो कम्बल बहुत चुभते है, और जो गर्मी और आराम रजाई मे मिलता है कम्बलो मे कदापि नही, चाहे वे किसी भी देश के बने हुए हो। दो वर्ष लन्दन की सर्दी मे मुझे रजाई बहुत याद आई।

मुझे अग्रेज़ो पर भी बड़ी दया आती थी। मै सोचता था कि ये कितने मूर्ख है जो कम्बलों के साथ चादर जोडकर और उनको गद्दे के नीचे दबाकर एक लिफाफे-से मे घुसकर सो जाते है। मुझे तो पूरा विश्वास है कि हम पजाबी ग्रामीणो का इन लोगो से खाना और सोना तो अवश्य ही अच्छा है। इन विचारो मे खोया, तथा चित्रो के बारे में सोचता विशेषकर उस चित्र के—'डोम और राजकुमारी' की कल्पना करता हुआ मैं गहरी नीद में सो गया।

गुलेर चित्र-कला इतिहास

इन चित्रों को समझने के लिए गुलेर के इतिहास को जानना आवश्यक है। राजा हरिचन्द ने १४०५ ई० में गुलेर की राजधानी को स्थापित किया। राजा हरिचन्द कांगडा का राजा था जहाँ से वह बडी विचित्र-परिस्थितियों में चल दिया। कहा जाता है कि राजा अपने साथियों के साथ शिकार खेल रहा था। एक जंगली सुअर का पीछा करते हुए वह बहुत दूर निकल गया। अंधेरा होने पर वह रास्ता भूल गया और अपने घोडे सहित एक अंधे कुए में जा गिरा। कुछ दिन बाद, खच्चरों का काफिला लिये एक व्यापारी उधर से गुजरा, उसने उसे कुए से बाहर निकाला। राजा के इस प्रकार अलोप हो जाने पर राजा के छोटे भाई ने सिंहासन सँभाल लिया और राजा की रानियाँ सती हो गईं।

जब हरिचन्द को यह सब मालूम हुआ तो उसने लौटकर कांगडा जाना उचित नहीं समझा। वह सीधा हरिपुर आ गया और नई राजधानी का निर्माण किया। कहा जाता है कि जहाँ किला है, वहाँ एक ग्वाला गउएँ चराता था। एक बार ग्वाले ने देखा कि एक चश्मे पर एक बाघ और बकरी एक साथ पानी पी रहे हैं। हरिचन्द वहाँ पहुँचा तो ग्वाले ने वह स्थान उसे दिखाया। जब कोई बडा भवन या विशेषकर किला बनाया जाता तो बलि अवश्य दी जाती। कहा जाता है कि वहाँ ग्वाले की बलि दी गई और नींव में उसका सिर दबाया गया। इसी कारण गुलेर का पहला नाम ग्वालेर पडा।

हरिचन्द के बाद उसके कई उत्तराधिकारी हुए, जिनके राज्य में कोई विशेष घटना नहीं घटी। सत्रहवीं शताब्दी के आरम्भ में हम फिर गुलेर तथा उसके राजाओं के बारे में सुनना शुरू करते हैं। रूपचन्द से विक्रमसिंह तक गुलेर राजाओं का मुगल सम्राटों से बहुत अच्छा सम्बन्ध रहा। रूपचन्द (१६१० ई०) ने सम्राट् जहाँगीर की मुगल सेना की कांगड़ा के दुर्ग पर आक्रमण करने पर सहायता की। मुगल सम्राट् ने एक हाथी तथा एक घोडा उपहारस्वरूप उसे भेंट किया। इसके पश्चात् इस राजा ने जहाँगीर की नौकरी कर ली और उसने उसे दक्षिण की ओर एक अभियान में भेज दिया। जहाँगीर के बाद शाहजहाँ ने रूपचन्द को १६३४ ई० में गढवाल पर चढाई करने के लिए भेजा और इसी हमले में उसकी मृत्यु हो

गई। रूपचन्द के पुत्र मानसिंह (१६३५ ई०) ने भी शाहजहाँ की नौकरी की, और उत्तर-पूर्वी क्षेत्र के अभियानों में लड़ता रहा। फिर वह औरंगजेब की सेना में भी रहा और १६४७ ई० में कंधार के आक्रमण में उसने भाग लिया। इसका पुत्र विक्रमसिंह बड़ा हृष्ट-पुष्ट था। कहा जाता है कि वह नारियल को उँगलियों से दबाकर तोड़ देता था।

दिलीपसिंह के काल में हिन्दू कलाकार, जो पहले मुगल दरबार में काम करते थे, नादिरशाह के हमले के कारण इधर-उधर बिखर गए और उनमें से कई पहाड़ी रियासतों में भी आ गए। मुगल साम्राज्य जर्जर हो चुका था। नादिरशाह के हमले ने १७३२ में राजधानी दिल्ली में बड़ी अशान्ति फैला दी। हजारों नागरिकों की हत्या कर दी गई। बहुत-से राजस्थान और पंजाब के पहाड़ों तथा दूसरी ऐसी ही जगहों पर भाग गए। इनमें कुछ हिन्दू कलाकार भी थे। इन प्राचीन कलाकारों में से पंडित सेऊ और उसके पुत्र नैनसुख तथा माणिक के चित्र मिलते हैं। यह अनुमान लगाया जाता है कि कांगड़ा-कला का शुभारम्भ इन्हीं कलाकारों ने हरिपुर गुलेर में किया। नैनसुख १७६८ ई० में जम्मू चला गया। वहाँ उसने राजा बलवन्तदेव की नौकरी की। एक चित्र में राजा विक्रमसिंह मुगल काल के अनुरूप हाथी पर सवार है। यह चित्र आजकल 'पंजाब म्यूजियम' चंडीगढ़ में है। एक और चित्र है जिसमें राजा दिलीपसिंह पोलो खेल रहा है। राजा और उसके साथी मुगलों के पहरावे में दिखाये गए हैं। उन्होंने चोगे पहने हुए हैं और उनकी पगड़ियाँ सीधी हैं। इस चित्र में राजा अकबर-जैसा लगता है।

पुरुषों तथा घोड़ों के चित्र बड़ी कुशलता से बनाये गए हैं। ये चित्र पोलो के खेल का एक उत्कृष्ट नमूना हैं। खिलाड़ियों के चेहरे पर आगे बढ़कर गेंद को पीटने की कोशिश स्पष्ट झलकती है तथा घोड़ों के पुट्ठों से यही प्रतीत होता है जैसे उनमें बड़ी फुर्ती और शक्ति है। इस चित्र में वे सब विशेष गुण हैं जो मुगल काल में पाए जाते हैं।

एक और चित्र राजा गोवर्धनचन्द का है जिसमें राजा मुगलिया अन्दाज में हाथी पर सवार है। हाथी को बहुत बढ़िया ढंग से सजाया गया है और महावत की दाढ़ी मुगलिया ढंग से कटी हुई है। यह चित्र विषय-वस्तु तथा चित्रण दोनों दृष्टियों से मुगल काल का एक उत्कृष्ट उदाहरण है।

गवर्धनचन्द (१७८०-१७७३ ई०) के जमाने में गुलेर में जो चित्र बनाए गए उनमें कांगड़ा-कला का विकास स्पष्ट दृष्टिगोचर होता है। गुलेर का मैदानी क्षेत्र के निकट होना तथा यहाँ के राजाओं का मुगलों से सम्बन्ध इस काम में बहुत सहायक हुआ। इसलिए कांगड़ा-कला का जन्म-स्थान गुलेर ही है, और कांगड़ा के सबसे पुराने चित्र गुलेर में ही चित्रित किये गए। मि० विलियम आर्चर

ने ठीक कहा है, "गुलेर पहाडी-कला के अडतीस केन्द्रो मे केवल एक नही बल्कि पजाब की पहाडी-कला की एक विशेष शैली का जन्म-स्थान भी है।" गुलेर ने स्थानीय कला मे कोमलता पैदा की उसे समर्थ बनाया और १७६० ई० मे जब यही कला अपने चरमोत्कर्ष पर पहुँची तो कागडा-कला के नाम से प्रसिद्ध हो गई।

अब हम उन चित्रो का उल्लेख करेंगे जिनको कागडा-कला के चित्र कहा जाता है। एक तस्वीर राजा गवोर्धनचन्द की है। राजा केसरी रंग के कपड़े पहने हुए अपने प्रसिद्ध घोडे पर बैठा हुआ है। चित्र की पृष्ठभूमि लाल रग की है। गोवर्धनचन्द के इस घोडे को जालन्धर के नवाब अदीना बेग ने बहुत पसन्द किया। गोवर्धनचन्द ने घोडा देने से इन्कार कर दिया। दोनों मे युद्ध हुआ, जिसमे अदीना बेग की हार हुई और यह घोडा गोवर्धनचन्द के पास ही रहा। उस जमाने मे घोडों की बड़ी क़द्र होती थी। रणजीतसिंह अपनी घोडा लैली को जान से भी प्यारा समझता था। उसने तीस लाख के हीरे-जवाहरात से उसकी काठी को सुसज्जित किया था।

राजा गोवर्धनचन्द का एक और सुन्दर चित्र है, जिसमे राजा संगीत की महफिल मे बैठा है। इस चित्र की विशेषता है रगो का सुन्दर चयन और चित्रण की कोमलता। इसकी चित्रण-शैली में सादगी है। राजा बाण गगा के किनारे एक चबूतरे पर बैठा हुक्का पी रहा है। दरबारियो मे से एक तिब्बत के भिक्षुओं-जैसा लगता है। राजा बलदेवसिंह के कथनानुसार यह दरबारी पिंडोरी का महन्त था। राजा ने केसरी रंग का चोगा पहना हुआ है और दरबारियो के चोगे अलग-अलग रगो के है। शहनाई और नगाड़े बजाने वालो के पहरावे भी रगीन हैं। नगाडो पर भी रग-बिरगे गिलाफ़ चढे हुए हैं। चबूतरे के नीचे हरे वृक्षो का झुरमुट इस चित्र को एक अनूठी सुन्दरता प्रदान कर रहा है। राजा सगीत सुन रहा है और ऐसा प्रतीत होता है मानों हवा मे एक मादकता-सी छा रही हो। यह चित्र मुगलकालीन चित्रो के सर्वोत्तम नमूने से टक्कर ले सकता है। इसमें एक कोमलता है, एक आध्यात्मिक रग है—जो मुगल-कला मे कही दिखाई नहीं देता। इस जमाने के कागडा-चित्रो मे रंगों का चुनाव बहुत आकर्षक है। कागड़ा-कला के हाथों मे जैसे उषा की स्वर्गीय लालिमा और इन्द्रधनुष के आकाशीय रग छलक-छलक पड़ रहे हों।

एक और चित्र मे राजा गोवर्धनचन्द ज़रा बडी उम्र का है। उसके पास उसकी रानी और बच्चे है। राजा अपने बच्चे कँवर प्रकाशचन्द को मिठाई देता हुआ दिखाया गया है। दरी पर दो सिरतोड़े बैठे हैं। सिरतोडा वह बच्चा होता है जो किसी दासी की कोख से जन्म लेता है। राजा गोवर्धनचन्द की रानी बसोहली रियासत की थी, यह बात कांगडा-कला के विकास की दृष्टि से बहुत महत्त्वपूर्ण है, क्योंकि बसोहली १६७८ ई० से राजपूत-कला का केन्द्र था। वहाँ यह कला

राजा कृपालचन्द के समय (१६७८ ई०) मे आरम्भ हुई और मेदनीपाल (१७२५ ई०) के काल मे अपने चरम शिखर पर पहुँची। गुलेर के शुरू-शुरू के चित्रों मे बसोहली-कला का रंग-ढंग प्रधान है।

कांगड़ा-कला तथा मुगल-कला की पहचान क्या है? रेखाओं की बारीकी तो दोनों मे एक-जैसी है, किन्तु कांगड़ा-कला मे पहाड, नदियाँ और जगल दिखाये गए है और मुगल-कला मे उत्तरी भारत के समतल मैदान ही दीखते है। जो प्रकृति-प्रेम कागडा-कला मे दिखाई देता है वह मुगल-कला मे नही। कागडा-कला का मुख्य लक्षण यह है कि यह हिन्दू-कला है। इसमे वैष्णव धर्म और श्रीकृष्ण की रास-लीलाओ की झलक पाई जाती है। श्रीकृष्ण के प्रति प्रेम और भक्ति-भाव ने कागडा-कला को बहुत आकर्षक बना दिया है। मुगल-कला मे मुगल-सम्राट् और उनके दरबारी ही नजर आते है। दरबारी-कला कभी भी ऊँची कला नही हो सकती, क्योंकि इसमेखुशामद की गन्ध आती है। कलाकार तभी ऊँचे दर्जे की कला को जन्म दे सकता है जब उसका मन स्वतन्त्र हो और सिवाय अपना जी खुश करने के दिल मे दूसरा कोई मतलब न हो। गुलेर की चित्र-कला मे यह सुन्दरता स्पष्ट दिखाई देती है और इन चित्रों की रेखाएँ ऐसे बनती है मानो सगीत की सृष्टि कर रही हो।

प्रकाशचन्द १७७३ ई० मे गुलेर का राजा बना। एक चित्र मे जो, कदाचित् गोवर्धनचन्द के राज से सम्बन्ध रखता है, प्रकाशचन्द अपने भाई रूपचन्द के साथ दिखाया गया है। प्रकाशचन्द के राज्य मे गुलेर की कला बहुत विकसित हुई और इस काल के चित्रो का स्तर बहुत ऊँचा है। कई चित्रो मे राजा के घरेलू जीवन को दर्शाया गया है। एक चित्र राजा प्रकाशचन्द की चम्बा की रानी श्रीमती अनन्तीदेवी का है। रानी अपने पुत्र भूपसिंह को खिलौना दे रही है। सरोवर के किनारे दो मीरज़ादियाँ (मिरासिने) सितार और ढोलक बजा रही हैं। फव्वारे से एक बन्दर पानी पीता हुआ दिखाया गया है। सफेद और पीले फूल तथा स्त्रियो के रगीन परिधान इस चित्र को एक विशिष्ट सौन्दर्य प्रदान कर रहे हैं। राजा प्रकाशचन्द बड़ा फिजूलखर्च था। कहा जाता है कि उसका मुख्य मनोरंजन कपडो के टुकडे फाड कर प्रजा मे बाँटना था। उसको कपडो के चिर से फटने की आवाज़ मे बडा मजा आता था। उसका व्यय आय से सदा अधिक होता और उसे प्रायः साहूकारो से उधार लेना पडता था। हरिपुर का अवतार नामक ब्राह्मण उसका एक प्रमुख ऋणदाता था। एक चित्र मे राजा प्रकाशचन्द अवतार साहूकार के सग बैठा दिखाया गया है। सफेद दाढी वाला राजा हुक्का पी रहा है और अवतार का बेटा राजा प्रकाशचन्द के पुत्र भूपसिंह को लड्डू दे रहा है। कहा जाता है कि राजा तथा साहूकार का हिसाब करते हुए झगडा हो गया। राजा ने निर्णय किया कि उसे तथा साहूकार को पीपल के तने से बाँधा

जाय। दोनों पीपल के तने से बाँधे गए। रात के समय पीपल की एक भारी शाखा टूटकर साहूकार के सिर पर गिरी और वह वहीं ढेर हो गया। इससे यह सिद्ध हो गया कि राजा सच्चा था और साहूकार बेईमान।

राजा प्रकाशचन्द का मंत्री ध्यानसिंह विवेक और कार्यकुशलता के लिए बड़ा प्रसिद्ध था। राज-पाट का काम उसने सँभाला हुआ था। प्रकाशचन्द के राज्य के अन्तिम काल में बहुत-से चित्रों में ध्यानसिंह ही मंत्री दिखाया गया है। एक चित्र में ध्यानसिंह धनुष उठाये भूपसिंह के साथ जा रहा है। भूपसिंह ध्यान-सिंह के साथ अपने पिता की रियासत के दौरे पर निकला है। जुलूस के आगे-आगे चोबदार झंडे उठाये हुए चल रहे हैं। राजा एक ग्राम के निकट पहुँचा है और नगारची नगाड़े पीट-पीटकर इस सूचना का एलान कर रहे हैं। भूपसिंह के पीछे एक कर्मचारी मोर-पंखों का चँवर लिये खड़ा है। उसके पीछे भी कई कर्मचारी हैं, जिनके हाथों पर बाज हैं।

एक और चित्र में मंत्री ध्यानसिंह भूपसिंह के साथ शिकार खेलता हुआ दिखाया गया है। ध्यानसिंह ने एक मृग के पीछे बाण छोड़ा है और भूपसिंह का साला नौरंग पटियाल एक जंगली सुअर का अपने खड्ग से बध कर रहा है। पृष्ठ-भूमि में कई नौकर जंगली सुअरों को मारकर अपने कंधों पर डाले फिर रहे हैं। यह चित्र बड़ा मनोरंजक है।

राजा प्रकाशचन्द से कोई बदमजगी हो जाने के कारण मंत्री ध्यानसिंह ने १७८५ में गुलेर छोड़ दिया। कोटला के दुर्ग पर इस मंत्री ने अधिकार कर लिया और खुदमुख्तार होकर राज्य करने लगा। ध्यानसिंह इतना शक्तिशाली हो गया कि संसारचन्द अपने चरमोत्कर्ष में भी कोटला के किले को जीत न सका तथा कई वर्षों तक ध्यानसिंह इस पर अधिकार किये रहा। अन्त में कोटला का किला सरदार देवासिंह मजीठिया ने ध्यानसिंह के भतीजे किशनसिंह से छीन लिया। महाराजा रणजीतसिंह ने मीखल सहित २७ ग्रामों की एक जागीर किशन-सिंह को बख्शी। किशनसिंह के सबसे छोटे पुत्र अमरसिंह को, जिसे दाढ़ी वाला भी कहते हैं, महाराजा रणजीतसिंह ने आठ आने रोज़ का भत्ता उसकी सुन्दर तथा लम्बी दाढ़ी के लिए देना स्वीकार किया। इसी प्रकार नराशी हुई मुगल ढंग की दाढ़ियों का रिवाज घटा और लम्बी दाढ़ियों का रिवाज बढ़ा। गुलेर के पुराने चित्र, जो राजा गोवर्धनचन्द के काल के हैं, एक भूतपूर्व सैनिक अधिकारी कप्तान सुन्दरसिंह के पास थे, जो मंत्री ध्यानसिंह के खानदान से हैं। अब ये चित्र पंजाब म्यूजियम चंडीगढ़ में हैं।

भूपसिंह १७९० ई० में राजा बना। वह गुलेर का अन्तिम राजा था। इसके कई चित्रों से प्रतीत होता है कि अपने पिता के समान यह राजा भी कला का बड़ा कद्रदान था और दिल खोलकर कलाकारों की मदद करता था। एक सुन्दर चित्र

मे भूपसिंह अपनी रानी तथा पुत्र शमशेरसिंह के साथ बैठा है राजा और रानी मूढ़ा पर बैं० है भूपसिंह की गोद मे उसका पुत्र है . पिछवाड़ मे केले लगे हुए हैं, जो गुलेर के चित्रों मे प्राय दिखाये जाते हैं। १८१५ई० के बाद के गुलेर के चित्र प्राय. सिख-शैली के अनुरूप है। इन चित्रों मे लोगों की लम्बी दाढ़ियाँ हैं और पगड़ियाँ भी खास तरह की हैं। १८१३ ई० मे महाराजा रणजीतसिंह ने गुलेर पर अधिकार कर लिया। महाराजा ने भूपसिंह को पठानो के विरुद्ध सहायता के लिए कहा, और जब गुलेर खाली हो गया, तब उसने भूपसिंह को लाहौर बुलवा लिया। केसरसिंह मजीठिया को दस हजार सिख सेना के साथ गुलेर पर अधिकार करने के लिए भेज दिया। राजा को उसने व्यय के लिए बीस हजार रुपये की जागीर दी। भूपसिंह के राज्य के अन्तिम दिनो में एक चित्र स्पष्ट रूप से सिख-शैली का प्रभाव लिये हुए देखा जा सकता है। भूपसिंह एक चबूतरे पर बैठा है। नीचे बाण गंगा बह रही है और उसके सामने मत्री घटा खत्री (क्षत्री) दर्शाया गया है। सबके पहरावे सिखों-जैसे हैं।

भूपसिंह के बाद शमशेरसिंह ने १८२६ ई० मे राज-पाट सँभाल लिया। एक चित्र मे शमशेरसिंह अपने मामा के साथ खेलता हुआ दिखाया गया है। मामा घोड़ा बना है और भानजा उस पर सवार है। इस चित्र से पता चलता है कि राजाओ के पुत्र किस तरह दुलराये जाते थे। अग्रेजो से पहली लडाई में सिखो की जब हार हुई तो शमशेरसिंह ने उनकी सेना को अपनी रियासत मे से निकाल बाहर किया। यह राजा १८७३ ई० मे परलोक सिधारा।

क्योंकि शमशेरसिंह कोई पुत्र छोड़कर नहीं मरा था, इसलिए उसके पश्चात् उसका भाई जयसिंह सिंहासन पर बैठा। राजा शमशेरसिंह के काल से सम्बंधित एक चित्र मे जयसिंह अपनी माता के साथ दिखाया गया है। इसकी माँ चबियाल रानी एक यज्ञ मे भाग ले रही है। यह यज्ञ दरबार के दर्जी ने करवाया है। दर्जी हवन-कुंड के पास बैठा आहुति दे रहा है और ब्राह्मण पुरोहित सफेद वस्त्र धारण किये पास बैठा है। उसके हाथ मे एक ग्रंथ है, जिसमे से वह कुछ मत्रो का पाठ कर रहा है। सामने कुछ मीरजादियाँ (मिरासनें) बैठी गा रही हैं। पुरुष तथा स्त्रियो के समूचे चित्र अत्यन्त कोमलता तथा कुशलता दर्शाते है और ऐसा लगता है कि इस राजा के दरबारी कलाकार भी पुराने कलाकारों-जैसी योग्यता रखते थे। एक और चित्र में राजा जयसिंह की बारात का चित्र अंकित है। इस चित्र मे सिख-शैली का प्रभाव स्पष्ट झलकता है। एक और चित्र मे राजा जयसिंह एक मुजरे मे बैठा है। नाचने वाली वेश्याओ के चित्र अत्यन्त स्वाभाविक है मानो सजीव हों। एक अन्य चित्र मे राजा जयसिंह अपने पुत्र टिक्का रघुनाथसिंह के साथ चित्रित किया गया है। यह चित्र गुलेर-कला का सर्वोत्तम नमूना है। राजा, उसके पुत्र तथा नौकर-चाकर सबकी पोशाकें बहुत शानदार हे और उनकी पगड़ियो मे मोती जड़े

है। इस सारे ठाठ-बाट में इस कला का ह्रास दृष्टिगोचर होने लगता है। ऐसा मालूम होता है कि इस समय से ही गुलेर की कला पतनोन्मुख होती जाती है।

१८९० ई० के पश्चात् गुलेर में यह कला समाप्त हो गई। ऐसा प्रतीत होता है कि इसका कारण काल तथा परिस्थितियों का परिवर्तन तथा लोगों के मूल्यों में अन्तर था। जागीरदारी में चाहे लाख दोष हों, पर इससे इन्कार नहीं किया जा सकता कि जागीरदारी के जमाने में अद्वितीय एवं अतिसुन्दर कला का निर्माण होता रहा है। जागीरदारी के समाप्त होने के कारण राजाओं का संरक्षण कम होता गया और कांगड़ा-कला भी धीरे-धीरे मिटनी शुरू हो गई।

जिन लोगों ने इतने सुन्दर चित्र बनाये, आखिर वे कौन थे? राजा बलदेव-सिंह के कथनानुसार ये लोग जाति के ब्राह्मण, बढ़ई और सुनार थे तथा इनकी सन्तान अभी तक हरिपुर में मिलती है।

इन समकालीन चित्रकारों में कला की वह पुरानी सूक्ष्मता तथा सूझ-बूझ नहीं, और ये लोग अपनी जीविका दरवाजे-खिड़कियाँ आदि चित्रित करके ही चलाते है।

जैसे एक आदमी बचपन, जवानी, अधेड़ अवस्था तथा बुढ़ापे में से गुजरता है, इसी प्रकार कांगड़ा की कला भी चार स्पष्ट पड़ावों को पार करती हुई दिखाई देती है। सबसे पहला प्रयोग का काल है, जबकि कलाकार एक नया ढंग अपनाने का प्रयास कर रहे हैं। गुलेर में इस काल की अवधि १६६१ ई० से १६६५ ई० तक (विक्रमसिंह से दिलीपसिंह के राज्य-काल तक) मानी जाती है। १७४० ई० से १७९० ई० तक जबकि गोवर्धनचन्द और प्रकाशचन्द का राज्य था, गुलेर में कांगड़ा-कला अपने शिखर पर पहुँच गई थी। गोवर्धनचन्द के काल में आरम्भिक चित्रों में एक असाधारण सादगी और खूबसूरती है। गोवर्धनचन्द के अन्तिम दिनों में श्रीकृष्ण और गोपियों के अत्यधिक चित्र बनाये गए। इस अवधि को कांगड़ा-कला के वसन्त का नाम दिया जा सकता है। प्रकाशचन्द के राज्य में गुलेर की कला पूरी तरह से निखर चुकी थी। १७९० से लेकर १८३८ तक गुलेर की कला में मिश्र-शैली की प्रधानता है। यह काल भूपसिंह से लेकर जयसिंह तक का है। अब कला पक्ष में अधिकाधिक रूप-सज्जा तथा बाह्य शृंगार का समावेश होता गया, किन्तु रचना में दिनोदिन कठोरता आती गई। मनुष्यों के विकास में भी अत्यधिक शृंगार तथा तड़क-भड़क पतनोन्मुखता की द्योतक होती है। यह काल कांगड़ा-कला का पतझड़ का काल है, और इसका ह्रास होता दिखाई देता है। कला तथा साहित्य के विकास में भी एक खास शिखर तक पहुँचने के बाद बुढ़ापे के चिह्न दिखाई देने लग जाते हैं। किसी विशेष काल में कला क्यों फलती-फूलती है और किसी अन्य काल में उसमें पतन क्यों होने लगता है? यह बात इतिहास की एक समस्या है, और कोई इसका सन्तोषजनक उत्तर नहीं दे सकता।

कांगड़ा

सन्ध्या को मीटरगेज रेल-पथ ने हमे कागडा-मदिर के रेलवे-स्टेशन पर पहुँचा दिया। कोई आध घटा चलने के पश्चात् हम कागडा पहुँच गए। यह नगर पुराने वक्तों मे कटोच राजाओं की राजधानी था। ग्यारहवी शताब्दी के आरम्भ मे रावी तथा सतलुज के बीच के क्षेत्र पर, जिसमे आजकल के गुरदासपुर, होश्यारपुर और जालंधर के जिले तथा व्यास घाटी का समूचा भाग सम्मिलित है, त्रिगर्त्त अथवा जालधर के कटोच नरेशो का राज्य हुआ करता था। पद्म-पुराण की एक कथानुसार दुआबे का क्षेत्र किसी काल मे समुद्र हुआ करता था। जलधर नाम भी इस क्षेत्र के पानी के नीचे होने के कारण है। यह भी हो सकता है कि इस कथा का सकेत माइओसीन सागर की ओर हो, जो किसी काल मे पजाब तक फैला हुआ था। व्यास की निचली घाटी को कदाचित् त्रिगर्त्तका नाम इसलिए दिया गया कि वहाँ हरिपुर गुलेर के कस्बे मे व्यास की तीन उप-नदियाँ बाण गगा, कुराली तथा नीगल आकर मिलती है तथा सिब्बा के किले के सामने व्यास दरिया मे शामिल हो जाती है।

महाभारत के युद्ध मे कटोच राजाओ के प्राचीन वंश का एक राजा सुशर्मा, कौरवों की ओर से लडा था। बड़े घोर युद्ध के उपरान्त सुशर्मा से मुलतान का क्षेत्र छिन गया और वह कांगडा की घाटी मे जाकर बस गया। यहाँ उसने कांगडा का किला बनाया।

कांगडा का किला अत्यन्त मनोरम स्थान पर बनाया गया है। इस पहाड़ी के एक ओर बाण गगा बहती है, दूसरी ओर माँझी नदी। किले मे जाने के लिए एक तग-सा रास्ता है, जिसको कई दरवाजों से सुरक्षित किया गया है। इन दरवाजो के नाम इस किले को जीतने वाले कई योद्धाओं के नामों पर है—एक का नाम जहाँगीरी दरवाजा है, दूसरे का नाम रणजीतसिंह दरवाजा है तथा एक अन्य का अंग्रेजी दरवाजा। आजकल यह किला बस एक खण्डहर बनकर रह गया है। १८४० ई० मे एक अंग्रेज चित्रकार द्वारा बनाए गए चित्र के अनुसार यह किला एक शानदार इमारत थी। १६०५ ई० के भूकम्प में इसकी मीनार और फसीलें ढह गई थी।

कई द्वारो मे से गुज़रकर हम भीतरी प्रागण मे पहुँचे, जहाँ किसी जमाने मे राजाओ के महल होते थे। ये महल भी अब ढह चुके है। इस प्रागण मे पत्थरो से बने लक्ष्मीनारायण तथा अम्बिकादेवी के मदिर है। यहाँ एक छोटा-सा जैन-मदिर भी है, जिसमे आदिनाथ की एक मूर्ति है। आजकल इन भग्नावशेषों पर बड के पुराने वृक्ष राज्य करते है।

उत्तर की ओर धौलीदार के हिममंडित पर्वत है। दक्षिण की ओर एक ऊँची पहाड़ी पर जयन्ती देवी का सफेद मदिर है। यह किला बहुत दिन उपेक्षित पडा रहा। यहाँ कागडा के नौजवान प्रेमी भ्रमण के लिए आया करते थे। फिर इसका प्रबन्ध पुरातत्त्व-विभाग ने सँभाल लिया। अब इसके दरवाज़े रात होते ही बन्द कर दिए जाते है और कांगडा के नौजवान बाके प्रेम का खेल नहीं खेल सकते।

कागडा दुर्ग से उत्तरी भारत का बहुत-सा इतिहास सम्बन्धित है महमूद गजनवी ने १००९ मे इस किले को विजय किया—यह उसका चौथा आक्रमण था। महमूद गजनवी ने जयन्तीदेवी की पहाडी से अपनी तोपों द्वारा गोला-बारी की। इतनी ऊँची पहाड़ी पर तोपो को ले जाना कितना कठिन काम रहा होगा। कहा जाता है कि महमूद गजनवी ने सात लाख स्वर्ण-मुद्राएँ, सात सौ मन सोने व चाँदी के बरतन, दो सौ मन शुद्ध सोना, दो सौ मन कच्ची चांदी, बीस मन सच्चे मोती, जिसमे हीरे-जवाहरात और पन्ने सम्मिलित थे, यहाँ से लूटे। उन दिनो इसे भीम-पाण्डव के नाम पर भीमनगर कहा जाता था। मुहम्मद तुगलक ने १३३७ ई० मे इस किले पर अधिकार किया। बदरेचाच इस किले का वर्णन इस प्रकार करता है :

"यह किला दो नदियो के मध्य मे इस प्रकार बनाया गया है जैसे दो पलको मे आँख सुरक्षित होती है। इस किले ने अपनी आन को हमेशा बनाए रखा है, और न तो सिकन्दर और न दारा इस दुर्ग पर अधिकार कर सके। यह किला कई शूर-वीरो और सुन्दर ललनाओ का निवास-स्थान है।"

१६६२ में स्वय जहांगीर सिब्बा तथा गुलेर से होता हुआ कागडा की घाटी की ओर आया। कहा जाता है कि जहाँगीर इस घाटी की सुन्दरता पर इतना मोहित हुआ कि उसने गर्मियो मे यही आकर ठहरने के लिए एक महल बनवाने का निश्चय किया। कागडा के निकट गग्गी नामक ग्राम मे महलों की नीवें भी खोदी गई, पर फिर बादशाह को कश्मीर इससे ज्यादा पसन्द आ गया, जिस कारण यह महल पूरा न हो सका। उस महल के लिए निश्चित किये गए स्थान पर आज-कल बिजलीघर बना हुआ है।

शाहजहाँ के काल में मसीरुलउमरा नामक एक इतिहासकार ने भी लिखा है :

"कागड़ा का किला एक पहाड़ी की चोटी पर स्थापित है। यह किला बड़ा पक्का है। इसमे २३ बुर्जियाँ और ७० द्वार है। भीतरी प्रांगण एक कोस से भी

ज्यादा मे फैला है किले मे दो तालाब है

यह किला १७८३ तक मुगलो के अधिकार म रहा । जयसिंह पठानिया ने तब सेदुल्ला खाँ से, जो मुगलो का इस क्षेत्र मे राज्यपाल था, यह किला छीन लिया। ससारचन्द ने महावीरसिंह तथा जस्सासिंह राजागढिया को अपनी सहायता के लिए बुलाया, किन्तु फिर उसकी जयसिह से सधि हो गई। जयसिह ने किला मसारचन्द के हवाले कर दिया और इसके बदले पठानकोट का इलाका, जो ससारचन्द ने विजय किया था, उससे ले लिया । इस प्रकार संसारचन्द सारे-के-सारे कांगड़ा का अधिपति हो गया। मियाँ रामसिह के पास चित्रों का जो सग्रह है, उसमे कांगड़ा के किले पर आक्रमण का भी एक चित्र है।

१६०५ मे सवेरे ६ बजे जिस भूचाल से कांगड़ा का समूचा नगर नष्ट हो गया, यह इस क्षेत्र की सबसे बडी तबाही थी। कागडा के एक बहुत बूढे निवासी ने भूचाल का आँखो-देखा हाल सुनाते हुए बताया कि वह सुबह बड़ी शान्त और प्यारी-सी थी। फिर बडे जोरदार धमाकों से सारा-का-सारा नगर देखते-ही-देखते ढहकर मिट्टी का ढेर हो गया। बहुत-से लोग अभी सो ही रहे थे। इसलिए जन-हानि काफी ज्यादा हुई। चट्टानो के कटने और दीवारों तथा छतो के गिरने से एक विचित्र, भयानक-सा शोर मच गया । हर दूसरे-तीसरे घण्टे के बाद जोरदार झटका आता और ऐसा लगता मानो तोपे छूट रही हो। एक भी घर खड़ा न रहा। मदिर के सुनहरी कलश धराशायी हो गए। केवल एक छोटे-से मदिर को छोडकर शेष सभी धर्म-स्थान धूल-धूसरित हो गए, क्योंकि यहाँ ढोर-डगर भी रात को मकानों मे बाँधे जाते हैं, इसलिए उनका भी बहुत भारी नुकसान हुआ।

भूकम्प, प्राय. भूमि में दरार पड जाने के कारण, पहाडो की हलचल से पैदा होते है। शिमला, कुल्लू तथा धौलीधार हिमालय की पुरानी पहाडियाँ है, किन्तु मण्डी, धर्मशाला और कागडाअभी नई पहाड़ियाँ है। इसलिए इनके नीचे की भूमि अभी कच्ची है। जब तक ये पक नही जातीं, इस क्षेत्र में भूचालों का आना कोई अनोखी बात नही। एक और कारण यह है कि धौलीधार से नीचे आने वाली मिट्टी, रेत और बड़े-बड़े पत्थर इस क्षेत्र की धरती पर भार को बढा देते है और इस वजन के ज्यादा हो जाने के कारण नीचे की भूमि पिचकती और डोलती रहती है।

किले के अतिरिक्त नगरकोट का पुराना शहर, वज्रेश्वरी देवी के मन्दिर के कारण भी बड़ा प्रसिद्ध था। वज्रेश्वरी देवी को लोग माता कहकर याद करते है। यहाँ के बासमती चावल भी मशहूर है। इन चावलों मे एक विशेष सुगन्ध होती है। यहाँ का गुड भी बड़ा स्वादिष्ट होता है। यहाँ नाक बनाये, बिंधाये जाते थे और नेत्र रोगो की चिकित्सा भी होती थी। प्लास्टिक सर्जरी पश्चिम की कोई अलग से देन नही। कागडा का इतिहास बताता है कि कई शताब्दियो से यहाँ

नाक बनाने के लिए आपरेशन होते थे। कहा जाता है कि अकबर के समय में यहाँ इस प्रकार के आपरेशन शुरू हुए। उस जमाने में चोरों और डाकुओं के नाक और हाथ काट दिए जाते थे। आजकल भी क्रोध में आकर कई पति अपनी पत्नियों की नाक काट देते हैं, ताकि उनकी सुन्दरता नष्ट हो जाय। अंग्रेज यात्री वीन, बुधिया नाम के एक जर्राह को कागडा में मिला और उसने नाक के आपरेशन का तरीका ऐसे बयान किया है, "मरीज को पहले बहुत-सी अफीम, भंग या शराब पिलाई जाती है, जिससे कि वह बेहोश हो जाय। फिर माथे की चमडी में छाला डालकर उसे नीचे की ओर खींच दिया जाता है। इसके बाद चमडी को सीकर घाव पर मरहम-पट्टी कर दी जाती है। जर्राह लोग अपने मरीजों की अज्ञानता से लाभ उठाकर उनसे ये कहते थे कि ये सब-कुछ देवी की कृपा से होता है, इसलिए कोट कागडा से बाहर शल्य-चिकित्सा का इस प्रकार का प्रयोग नहीं हो सकता। मैंने कई लोग देखे, जो इस प्रकार की नाक बनवाकर खुशी-खुशी घर जा रहे थे, चाहे ये नाक प्राकृतिक नाक के बदले में एक भौंडी-सी चीज थी। कांगडा के लोग अपनी इस कला में बड़े निपुण थे। इस बात पर उन्हें बड़ा गर्व था, चाहे उनकी बनाई हुई नाक में सूँघने की शक्ति नहीं होती थी। यहाँ के लोक-गीत में सुहाँजना, जिसको पहाड में मुनना कहते हैं, को सबोधित करके कहा जाता है, 'हम उबले हुए चावलों में मुनना के पत्ते डालकर खायँगे। अगर हमें छींक आई तो अपनी नाक कटवा लेंगे। कांगडा में नई नाक तो बन ही जाती है'।"

नाक के जर्राहों के खानदान को कगेडा कहते हैं। ये लोग आजकल अपने बाप-दादाओं का धन्धा नहीं करते।

शक्ति के पुजारी वज्रेश्वरी देवी को बहुत मानते हैं। इस मंदिर में देश-भर से श्रद्धालु लोग अपने चढ़ावे लेकर आया करते थे। इसलिए इस मन्दिर में अन-गिनत माया इकट्ठी हो गई। इसी कारण महमूद गजनवी की ललचाई हुई नजर इस पर पड़ी और उसने १००९ ई० में इस मन्दिर को लूट लिया। महमूद के जाने के बाद १०४३ में हिन्दू राजाओं ने फिर इस मन्दिर को बनवाया। १३३७ में मुहम्मद तुगलक ने इस मन्दिर को फिर लूटा और बरबाद किया। महाराजा ससारचन्द प्रथम ने १४४० में दुबारा इस मन्दिर को बनवाया। शेरशाह सूरी के एक सेनापति खुमसखान ने १५४० में इस मन्दिर को पुन. नष्ट किया और पुनः एक बार अकबर के राज्य में इसका निर्माण किया गया। कहा जाता है कि अकबर ने देवी पर सोने का एक छत्र भी चढाया। कागड़ा के सिख राज्यपाल सरदार देसासिह मजीठिया ने इस मन्दिर को सिख-भवन-निर्माण-कला-शैली के अनुसार बनवाया और इसके बड़े मीनार पर रानी चन्दकौर ने सोने का कलश चढ़ाया। महाराजा रणजीतसिंह इस मन्दिर में दो बार आया। पहली बार महाराजा ने मन्दिर में अपनी सोने की एक मूर्ति चढाई, जिसमें महाराजा केवल एक कच्छा

पहनकर देवी की उपासना कर रहा है। यह अमूल्य मूर्ति अभी तक मन्दिर में सुरक्षित रखी है। दूसरी मूर्ति एक सोने के पत्तर पर अंकित है। इसमें महाराणा रणजीतसिंह देवी को प्रणाम करता दिखाया गया है। सन् १९०५ के भूचाल में यह मन्दिर फिर गिर गया और आजकल का मन्दिर सन् १९३० में फिर से खड़ा किया गया।

मन्दिर तक पहुँचने के लिए टेढ़े-मेढ़े बाजार से गुजरना पड़ता है। दूकानों में मालाएँ, यज्ञोपवीत, धूप, कई प्रकार की सुगन्धियाँ, तांबे के बरतन और देवी की मूर्तियां मिलती हैं। चौक में गद्दी स्त्रियाँ ऊन के कम्बलों का अच्छा-खासा व्यापार कर लेती हैं। ये कम्बल प्रायः यात्रियों द्वारा ही खरीदे जाते हैं। मन्दिर की ड्योढ़ी की दीवारों पर दुर्गा के चित्र हैं, जो गुलाबराम ने बनाए हैं। मन्दिर के बाहर एक खुला आँगन है, इसमें तराशे हुए पत्थरों के स्तम्भों का एक चबूतरा खड़ा है। इस चबूतरे में एक संगमरमर का पत्थर है, जिस पर लोग मन्नतें मानते हैं। कहा जाता है कि कई लोग अपनी जिह्वाओं को काटकर देवी की भेंट चढ़ाते थे। अबुलफजल इस अद्भुत रिवाज के सम्बन्ध में लिखता है :

"नगरकोट पहाड़ पर एक शहर है, जिसमें कांगड़ा नाम का एक किला है। इस शहर के बाहर की ओर एक और ऊँची पहाड़ी पर महामयी नामक एक स्थान है, जहाँ बहुत दूर-दूर से यात्री अपनी मनोकामनाओं की पूर्ति के लिए आते हैं। अचम्भे की बात यह है कि यहाँ देवी के श्रद्धालु अपनी जीभ काट लेते हैं, जो फिर दो-तीन दिन में बढ़ जाती है और कई बार कुछ घण्टों में ही पूरी-की-पूरी बन जाती है।" देवी की भेंट में जिह्वाओं के टुकड़े चढ़ाने की प्रथा अभी तक समाप्त नहीं हुई। जो पति अपनी पत्नियों के वाचालपन से तंग आ जाते हैं। वे अब भी उन्हें इस बात के लिए प्रेरित करते हैं कि वे अपनी जिह्वाएँ देवी की भेंट चढ़ा दें। अभी मैं कांगड़ा में ही था कि रोहतक के एक जाट किसान ने अपनी जीभ काटकर देवी को भेंट की। उसका बहुत-सा खून बहा और वह लगभग गूँगा ही हो गया। मनुष्य के शरीर में जिह्वा एक ऐसा अंग है जो सबसे जल्दी फिर बढ़ जाता है। इस प्रकार यात्रियों की जिह्वा में कुछ-न-कुछ बढ़ोत्तरी अवश्य हो जाती है, जिसको लोग देवी का चमत्कार समझते हैं।

किले और मन्दिर के बाद, यहाँ के मिशन-हस्पताल से मैंने इस क्षेत्र के हरे-भरे खेतों का दृश्य देखा। फिर मैं कांगड़ा-कला के नमूने देखने के लिए चल पड़ा। मानचन्द उप्पल यहाँ के प्रमुख वकील हैं। उन्होंने कांगड़ा-शैली के वे सब चित्र, जो बाकी बच गए थे, मेरे देखने के लिए एक जगह एकत्रित किये हुए थे। ब्रजेश्वरी देवी का एक महन्त दो चित्र लाया। दोनों के चौखटे भद्दे थे और चित्रों पर मिट्टी-धूल जमी हुई थी। एक चित्र अभिसारिका नायिका का था और दूसरे चित्र में गोवर्द्धन धारण की दन्त-कथा चित्रित थी। ये दोनों चित्र उन्नीसवीं शताब्दी के

अन्त मे बनाए गए प्रतीत होते है। एक बूढी विधवा के पास हिन्दू देवियो के पाँच-छ चित्र है। ये सब भद्दे तरीके से बने हुए थे। इनमे से हर एक के लिए इसकी मालकिन ने सन्देश भेजा कि वह पाच सौ रुपये से एक पाई कम न लेगी। कागडा मे मतलब के चित्र केवल मानचन्द उप्पल के पास थे। उनके पास दस तान्त्रिक देवियो के चित्र और एक हस्तलिखित दुर्गापाठ था। यह हस्तलेख ससारचन्द का बताया जाता है। मानचन्द उप्पल के पास यह हस्तलेख कुँवर खगेन्द्रसिंह से, जो नदौण के राजा राजेन्द्रचन्द का तीसरा पुत्र था, वकालत की फीस के रूप मे प्राप्त हुआ।

दुर्गापाठ का हस्तलेख, जो श्री उप्पल ने फीस के रूप मे स्वीकार कर लिया, कला का एक सुन्दर नमूना है, और श्री उप्पल की सूझ-बूझ बुद्धिमानी तथा कला की कद्रदानी दर्शाता है। यह हस्तलेख अलग-अलग कागज के टुकडो पर है, और इसकी जिल्द के लिए पेपरमैशी के गत्तो का उपयोग किया गया है। ऊपरी गत्ते पर दुर्गा का चित्र है। दुर्गा शेर की सवारी कर रही है। ग्रथ का हर काण्ड नीले-पीले, हरे-लाल आदि रगो से रँगे हुए कागजो पर लिखा गया है। पन्नो के कोने नीले रग से रँगे हुए है। इस काण्ड के आरम्भ मे दुर्गा का एक चित्र है। इसकी चित्रकारी का काम साफ-सुथरा है और कलाकार की योग्यता और आत्म-विश्वास का प्रतीक है। इसमे कोई सन्देह नही कि ये चित्र किसी अच्छे दरबारी चित्रकार के बनाए हुए है। ग्रन्थ, कागडा के एक सुन्दर कढे हुए रूमाल मे बँधा हुआ था। रूमाल के चित्र की दुर्गा एक सिहासन पर बैठी हुई थी उसके साथ उसके चार सेवक है। रूमाल के किनारो पर केले के वृक्ष और मोर कढे हुए है। चाहे कितना समय बीत चुका है, रेशम के लाल, नीले, पीले और हरे रग आज तक वैसे-के-वैसे ताजे लगते है।

कागडा के एक पुराने चित्रकार पूर्णचन्द ने हमे बताया कि विलियम आर्चर ने राधा-कृष्ण का जो चित्र कागडा-कला के अपने सग्रह मे प्रकाशित किया है, उसके मामा नन्दलाल का बनाया हुआ है; जो कोई दस वर्ष हुए, पिचासी वर्ष की आयु भोगकर मरा। वह कहता है कि उसके पास इस चित्र का एक खाका अभी तक है। उसने हमे यह भी बताया कि कागडा के बहुत-से पुराने चित्र सन् १९०५ के भूकम्प मे नष्ट हो गए। यह बात कहाँ तक ठीक है इस सम्बन्ध मे कुछ नही कहा जा सकता, क्योकि इन दोनो बातो का हमारे पास कोई प्रमाण नही।

कागडा शहर मे खोज-बीन करके मै इस परिणाम पर पहुँचा हूँ कि कागडा-कला का कागडा के शहर से कोई सम्बन्ध नही। इसके ऐतिहासिक कारण भी है। दलीपसिह (सन् १६६१ से १६९५) के राज्य मे कागडा-कला का गुलेर मे जन्म हुआ और गोवर्धनचन्द तथा प्रकाशचन्द (१७२०-१७६० ई०) के राज्य मे यह कला परवान चढी। इसके अनन्तर इसे ससारचन्द ने सुजानपुर टीरा मे अपना

सरक्षण दिया। कागडा पर ससारचन्द का अधिकार बहुत थोडी देर रहा और इतने समय मे बहुत थोड़े चित्रकार कागडा के पुराने नगर मे आ पाए होगे। कागडा शहर यहाँ के जिले का भी नाम है और यहाँ की घाटी का भी, चाहे जिले का मुख्यालय धर्मशाला में है और कागडा केवल एक तहसील है।

यह जानकर कि कागडा-कला के चित्रकार खास कागडा नगर मे कोई नही, बल्कि गुलेर, सुजानपुर, आलमपुर और नदौण-जैसे इर्द-गिर्द के नगरो मे है, मैंने निर्णय किया कि इस कला के समकालीन चित्रकारो से मिलना चाहिए। कागडा के तहसीलदार ने गुलाबराम और लछमनदास को सिमलोटी से बुलवा लिया। ये दोनों कागडा की आधुनिक कला के सबसे बडे चित्रकार हैं। सिमलोटी, कागडा से कोई पाँच मील की दूरी पर एक सुन्दर ग्राम है। लछमनदास साधारण-सा दिखने वाला एक पहाडिया है। वह एक गठरी मे अपने बशजो के बनाए हुए कई चित्र बाँधकर लाया था। वह अपने-आपको गुलेरी मराठा बताता है और कहता है कि तीन पीढी पूर्व उसके बडे-बूढ़े गुलेर से सिमलोटी आए थे। उसका लकड-दादा, जिसका नाम बसिया था, अपने समय का एक श्रेष्ठ चित्रकार था और उसने महाराजा संसारचन्द के कई चित्र बनाए थे। ये चित्र पुरुषाकार और वास्तविकता के बहुत निकट है। बसिया के पुत्र पद्मू ने महाराजा रणजीतसिंह का एक चित्र बनाया। इस चित्र मे रणजीतसिंह अपने सरदारो के साथ दिखाया गया है। महाराजा और उसके सरदारो के चेहरे तो वास्तविकता के समीप हैं, किन्तु टाँगो मे अनुपात का ध्यान नही रखा गया। पद्मू के शेष चित्र इतने सुन्दर नही। हजूरी, जो मिस्टर फ्रेंच को उसकी यात्रा मे मिला था, लछमनदास का पिता था। लछमनदास के पास हजूरी के कई चित्र हैं। इनमे से एक चित्र मे कृष्ण को गोपियो के साथ होली खेलता हुआ दिखाया गया है। पुराने उस्तादो के मुकाबले मे यह चित्र जरा कमजोर है। ऐसा लगता है, हजूरी बहुत शीघ्र काम करता था और लोग प्राय अपने परिवार के चित्र उससे बनवाया करते थे। एक चित्र मे टीरा सुजानपुर का एक डाकिया भी दिखाया गया है, जिसने काली पगडी बाँधी हुई है, लाल कोट पहना है, गले में डाक का थैला लटक रहा है और वह एक स्त्री को चिट्ठी पकडा रहा है। एक और चित्र कागडा तहसील के एक स्याह-नवीस का है। स्याह-नवीस अपने पिता के साथ एक खाट पर बैठा है। उसकी पत्नी, पुत्री तथा पुत्र उसके सामने हैं। क्योकि डाकिये तथा तहसील के उस मुहर्रर ने पैसे नही दिए इसलिए ये चित्र लछमनदास के पास ही रह गए। हजूरी ने लाहौल के एक परिवार का एक अत्यन्त सुन्दर चित्र भी बनाया था। इस चित्र मे लाहौल के लोग पहाडी चोटियो के पार्श्व में खडे है। एक स्त्री एक पुरुष को चाय का प्याला दे रही है। पुरुष के हाथ मे प्रार्थना-चक्र है। एक और पुरुष चाय पी रहा है, एक लडका हुक्का गुडगुडा रहा है और इन सबके आगे घर का सामान है यह

चित्र मेरी राय मे बड़ा मनोरंजक है।

एक और चित्र मे श्री राम-लक्ष्मण तथा सीता की वापसी दिखाई गई है। यह चित्र गुलाबूराम के दादा चन्दू का बनाया हुआ है। आजकल ये चित्र सिमलौटी के लाला दीवानचन्द के कब्जे मे है। पुष्पक विमान, जिसमें श्री रामचन्द्र, लक्ष्मण सीताजी बैठे हैं, बादलो मे दर्शाया गया है और अयोध्या के लोग नगरी के बाहर इस विमान को विह्वल होकर देख रहे है। इस चित्र मे आकाश का ऐसा अनुपात रखा गया है जो कागडा के अन्य किसी चित्र मे देखने मे नही आया।

गुलाबूराम एक लोकप्रिय चितेरा है। उसने बज्रेश्वरी देवी के नए मन्दिर को, जो कागडा मे बनवाया गया है, दुर्गा तथा असुरों के चित्रो से सजाया है। उसने रास-मण्डल के चित्र भी बनाए है, जिनमे कृष्ण, गोपियों के साथ एक घेरे में नाच रहे है। बंदला तथा घघरौला के मन्दिरों को भी इसी कलाकार ने सजाया है, और कागड़ा का धनिक वर्ग प्राय इसे अपने घरों को सजाने के लिए बुलाता है। गुलाबूराम का काम बहुत साधारण है और इसमे वह सफाई नही जो कागडा के प्रसिद्ध चित्रकारो मे पाई जाती है।

पुरानी कलम का एक और चितेरा राजोल का लछमनदास रैना हमे मिला। उसका लकडदादा निक्का गुलेर से राजा शमशेरसिंह के राज्य में राजोल में आ बसा था। लछमनदास गुलेर के प्रसिद्ध चित्रकार नैनसुख के वश मे से था। लछमनदास ने प्राचीन कथाओ के अतिरिक्त आधुनिक जीवन के भी कुछ चित्र चित्रित किए हैं। एक चित्र मे, एक अंग्रेज को शिकार खेलते हुए दिखाया गया है। इस चित्र में शिकारी की लगन का चित्रण बहुत खूब हो पाया है। शिकारी ने अपनी बन्दूक को एक वृक्ष की दुफाड में रखा हुआ है और वह एक काले मृग को निशाना बना रहा है। उसके पीछे उसका एक कर्मचारी बारूद भर रहा है और दूसरा एक नगी तलवार कन्धे पर रखे हुए खडा है। उसीके एक और चित्र मे पठान साहूकार का चित्रण है, जिसमे कबाइली साहूकारों की निर्ममता झलकती है। जिस प्रकार दो भूखे गिद्ध हो—कुछ इस तरह साहूकार पठानो को अपने शिकार की तलाश मे जाते हुए दर्शाया गया है। एक और चित्र मे कुछ बगाली नाच और गा रहे हैं। एक बगाली बडे आवेग मे बीन बजा रहा है। उसके दाएँ हाथ पर एक नाग लिपटा हुआ है। एक अन्य करताल बजा रहा है। उसके साथ का, जिसने खड़ाऊँ पहनी हुई है ताली बजा रहा है। चौथा साथी, सफेद चोगा पहने, एक ढोल बजा रहा है। एक अन्य चित्र मे इस चित्रकार ने एक स्त्री और पुरुष को छलावे से छले जाते हुए दिखाया है। ये पुरुष और स्त्री, जो कि पति-पत्नी लगते हैं, एक संध्या को सडक पर जा रहे हैं। मार्ग मे एक नाग मिलता है, कुछ आगे जाकर वे देखते है कि नाग लोमड़ी मे बदल गया है। कुछ और आगे ये लोमडी एक कुत्ते मे परिवर्तित हो जाती है, जो भौंक रहा है। और फिर उनके

आश्चर्य की कोई सीमा नहीं रहती कि कुछ देर बाद कुत्ता एक चुड़ैल बन जाता है, जिसके दाँत बाहर निकले हुए हैं। पुरुष, जो हिम्मत नहीं हारता, स्त्री को सान्त्वना देने की कोशिश कर रहा है।

पर इस प्रकार के साधारण चित्र कांगड़ा की कला के नमूने नहीं माने जा सकते, इनका स्थान कला के इतिहास में चाहे कुछ भी हो। कांगड़ा के जितने भी चित्रकार हैं, सब यही शिकायत कर रहे थे कि अब उनका कोई संरक्षक नहीं है। और उनके उदास चेहरों और भूखी नजरों से मुझे लगता था कि जो कुछ वे कह रहे हैं गलत नहीं। फिर भी इन लोगों में बड़ा आत्म-विश्वास है। उनका कहना है कि यदि उनको भी वही अवसर दिये जायें, जो उनके पुरखों को मिले थे, तो वे भी उन-जैसा काम कर सकते हैं। वे अपने मुख से चाहे कुछ भी कहें पर इस बात से इन्कार नहीं किया जा सकता कि आजकल के चित्रकारों का काम पुराने चित्रकारों की अपेक्षा निकृष्ट है। मुझे ऐसा प्रतीत होता है कि इन चित्रकारों के चित्र कांगड़ा-कला की अन्तिम कड़ी हैं, तथा इनकी कला के रूप में यही विशेषता है कि ये चित्र इस महान् शैली की अधोगति का उदाहरण हैं। ऐसा लगता है कि आश्रय का अभाव ही इस पतन का कारण बना है।

ज्वालामुखी

जब हम कांगड़ा के डाकबंगले से चले तो पौ अभी फूट ही रही थी। सूर्य बाण गंगा को पार करने के बाद निकला। बाण गंगा से पार, कांगड़ा के किले का अद्भुत दृश्य देखा जा सकता है। सड़क बड़ी संकरी है और नागिन की तरह बल खाती हुई चली जाती है। यहाँ से रेल की पटरी भी नजर आती है, और हमने देखा कि कुछ यात्री रेलवे-स्टेशन से ज्वालामुखी की ओर चले जा रहे हैं। आखिर हम रानीताल पहुँचे। यहाँ एक थाना है। पहाड़ी के ठीक ऊपर डाक-बंगला है। यहाँ से धौलीधार का मनोहारी दृश्य देखा जा सकता है।

डाकबंगले के निकट एक टीले पर बाबा फत्तू की समाधि है। बाबा फत्तू, मोदी गुलाबसिंह का शिष्य था। मोदी गुलाबसिंह ने बाबा फत्तू को अपनी गुरु-यायी बख्शी थी। कहा जाता है, बाबा फत्तू के चमत्कार से मलारचन्द का भाई फतहचन्द फिर से जी उठा था। बाबा फत्तू को पहाड़ी लोग अभी तक मानते हैं, और उसकी सौगन्ध खाते हैं। इसकी समाधि पर बैसाखी के दिन मेला लगता है, जहाँ पर लोग, दूर और निकट से मुरादें माँगने आते हैं। कई लोग अपनी मनो-कामनाएँ लिखकर पेश करते हैं और मनौतियाँ मानते हैं। समाधि का पुजारी बाबा फत्तू की समाधि पर प्रार्थना करता है। जब किसी की मनोकामना पूरी हो जाती है तो वे लोग चढ़ावा चढ़ाने के लिए आते हैं। कांगड़ा तहसील में नाज़ नापक ग्राम में इस प्रकार की एक और दरगाह है जिसको बाबा भूपत के नाम से सम्बोधित किया जाता है। वहाँ भी लोग इस तरह की मुरादें लेकर जाते हैं। कई लोग, जो कचहरियों में मुकद्दमों की फीसें नहीं भर सकते, बाबा भूपत की शरण लेते हैं। अत्याचार-पीड़ित तथा अनाथ इस समाधि पर आकर शत्रुओं को कोसते हैं। यदि कभी ऐसे ही किसी शत्रु को कोई रोग घेर ले, अथवा उस पर कोई विपत्ति टूट पड़े तो वे सोचते हैं कि यह बाबा भूपत के शाप के कारण ही हुआ है। इसी डर के मारे या तो वे राज़ीनामा कर लेते हैं अथवा दूसरे का हर-जाना भर देते हैं।

रात रानीताल के बंगले में काटकर, अगली सुबह हम ज्वालामुखी की ओर चल पड़े। रानीताल से ज्वालामुखी तक सड़क, यात्री-दलों के कारण धूल-मिट्टी

स अटी रहती है हमने देखा अनगिनत यात्री कोई पैदल कोई तागो मे ज्वालामुखी के मन्दिर की ओर जा रहे है। सडक के किनारे पहाडी बच्चे यात्रियो से बखशीश माँगने के लिए, सडक के दोनो ओर जगह-जगह खडे है। कई तो यात्रियो के पीछे ही पड जाते है तथा 'दे जा लाला पैसा दे जा लाला, पैसा' कहते हुए दूर तक पीछा करते है, और तब तक नही हटते, जब तक कि उसके पल्ले से कुछ झाड न ले।

आखिर ज्वालामुखी का पावन ग्राम दिखाई देने लग गया। यह गाँव पहाडी के एक ओर बाज के घोंसले की तरह बना हुआ है। ज्वालामुखी के मन्दिर का सुनहरी कलश, सफेद रग के चौरस मकानो मे स्पष्ट दिखाई दे रहा था। नदौण जाने से पहले हमने निश्चय किया कि पहले देवी के दर्शन किये जायँ। आठ सौ वर्ष हुए, इस मन्दिर के स्थान को एक ब्राह्मण ने खोजा था। कहा जाता है कि दूर दक्षिण के वासी एक ब्राह्मण को देवी ने दर्शन दिया, और आदेश दिया कि वह कागडा की पहाड़ियों मे जाय, जहाँ उसे जगल मे आग की लपटे जलती दिखाई देगी। ब्राह्मण, आज्ञानुसार यहाँ आया और उसे यह पवित्र स्थान मिल गया। उसने यही एक मन्दिर बनाया। मन्दिर तक पहुँचने के लिए कई सीढियाँ है। सीढियो के दोनो ओर दुकाने है, जिनमे नारियल, मिठाइयाँ, धूप-दीप और चाँदी के छत्र बिकते है। ये चीजे यात्री-लोग खरीदकर चढाते है, और पुजारी फिर इनको दुकानदारो के पास बेच देते है, और इस प्रकार ये वस्तुएँ दूकानो से मन्दिर और मन्दिर से दूकानों मे घूमती रहती है। जब ज्वालामुखी पर कोई यात्री आकर रुकता है, तो उसको कई पडे घेर लेते है। ये लोग उसके पुरखो के नाम-पते बताते है जो कभी इस मन्दिर मे आए थे। ये पडे यात्रियो के रहने तथा उनकी यात्रा का प्रबन्ध करते है। ज्वालामुखी के पुजारियो को भोजकी कहते है, क्योकि इनका मुख्य धधा देवी को भोग लगाना होता है, जिसका अभिप्राय अपना पेट भरना होता है। जिस यात्री की कोई मुराद पूरी होती है वह देवी के निमित्त चाँदी की एक छोटी-सी छतरी कृतज्ञता-स्वरूप भेंट करता है।

बाजार यात्रियो से भरा हुआ था। हम पजाब तथा उत्तर प्रदेश के कई स्थानो से आए स्त्री-पुरुषो से टकराते बडी कठिनाई से देवी के मन्दिर मे पहुँचे। सिहद्वार पर अपने जूते उतारकर हमने मन्दिर मे नगे पाँव प्रवेश किया। यात्रीगण देवी को पैसे चढाते है। कई श्रद्धालु पत्थर की मूर्तियो के मुँह मे हलवा जा रखते है। सगमर्मर का फर्श फिसलना-सा हो रहा था और बडी घिन आती थी।

सबमे बडे मन्दिर के कलश सुनहरी है, जो डूबते सूरज की रोशनी मे चमक रहे थे। मन्दिर के भीतर पहाड़ियो मे से गैस निकलती है, जिसको पुजारी तीली से जला देते है, और इस प्रकार धमाके से पैदा हुई नीली लपटें यात्रियों को चकित कर देती है। ऊपर की ओर और कई छोटे मन्दिर है, जिनमे भगवा वस्त्रों मे

जटाधारी साधू बैठे हुए दिखाई देते है। ज्वालामुखी के निकट कई स्रोत है। इन स्रोतो में नमक और पोटाशियम आयोडाइड के रूप में आयोडीन मिलती है।

कहा जाता है कि ज्वालामुखी जलधर नामक दानव का मुख है। कथा इस प्रकार है कि जलधर दानव को, शिवजी महाराज ने एक पर्वत लुढ़काकर कुचल दिया। ज्वालामुखी, उस दानव का मुँह है। उसकी पीठ दुआवा का ऊपरी भाग है, जिसको आजकल जालधर कहा जाता है। इस क्षेत्र मे कई प्रसिद्ध मंदिर है बैजनाथ मे शिव का मन्दिर तथा जुरंगल मे नदी केसर का मन्दिर, जो डाढ के सुन्दर बँगले के सम्मुख है। इस दानव के पाँव मुलतान तक फैले हुए है। जलंधर की कथा कांगड़ा-घाटी के पहाड़ो का, माइओसीन समुद्र में से उभरना भी प्रमाणित करती है। इस तथाकथित सागर की एक भुजा, वर्तमान अरब सागर से होशियापुर के शिवालक पर्वतों तक फैली हुई थी। भगवान् शिव का सागर-पुत्र जलंधर को हराना, एक प्रकार से समुद्र का पीछे हटना, और उसमें से पहाड़ो के उभर आने का, एक प्रतीक मालूम होता है।

इस मन्दिर मे कई प्रसिद्ध व्यक्ति आ चुके है। इनमे से एक सम्राट् अकबर भी था। अब भी पुजारी लोग एक कूल की ओर इशारा करते है, जो ऊपर की ओर, किसी चश्मे से निकलता है, और कहते हैं कि अकबर ने यह कूल अग्नि को शान्त करने के लिए बनवाया था, पर उसको इस काम मे सफलता नही मिली तथा ज्योतियाँ ज्यों-की-त्यों जलती रहीं। यह देखकर सम्राट् अकबर देवी का उपासक बन गया, और उसने सोने का एक छत्र देवी के निमित्त चढ़ाया। यह भी कहा जाता है कि सम्राट् अकबर ने अपने बहुमूल्य चढ़ावे की ओर अहंकार-भरी दृष्टि से देखा तो सोने का छत्र ताँबे का बन गया। इस प्रकार की अनेकों किंवदंतियाँ हरएक मन्दिर से जुड़ी हुई हैं, और इनके द्वारा धार्मिक वर्ग अपने धर्म की महानता प्रकट करता है।

महाराजा रणजीतसिंह, इस मन्दिर में १८०९ में आया। संसारचन्द के अनुरोध पर महाराजा रणजीतसिंह ने गोरखों को पराजित किया, और उन्हें ब्यास के पार धकेल दिया था। संसारचन्द, रणजीतसिंह को ज्वालामुखी में मिला और इस पावन स्थान पर संधि-पत्र तैयार किया गया, तथा मोहरें लगाई गई। महाराजा रणजीतसिंह ने कांगड़ा के किले को अपने अधिकार मे कर लिया, और निकटवर्ती गाँवों की जागीर संसारचन्द को दे दी गई।

अफगानों को हराकर, रणजीतसिंह जब लौटा तो शुकराने के तौर पर देवी मन्दिर के कलश पर सोने का पत्तर चढ़वाया तथा दरिद्र-कंगालों को बहुत-सा दान दिया। कहते है कि महाराजा रणजीतसिंह ज्वालामुखी की ज्योतियों पर इतना मुग्ध हुआ जैसे पतंग दीपक पर होता है। रणजीतसिंह के पुत्र खड़गसिंह ने देवी को चाँदी के द्वार भेंट किए। इन द्वारों पर चित्रकारी का बहुत शानदार

काम किया गया है। यहाँ के पुजारी इन द्वारो को बडे गर्व से दिखाते है।

इस यात्रा मे मेरी धर्मपत्नी इकबालकौर भी हमारे साथ थी। हमारे दल के खाने-पीने का प्रबन्ध उसीके ज़िम्मे थे। इकबाल, आर्चर, मुल्कराज, मुल्कराज की पत्नी शीरी और सेक्रेट्री डौली; मेरे बिना मन्दिर गए। उन्होने जो देखा, वह इकबाल की जबानी सुनिए

"रानीताल से, ज्वालाजी के बीच से होते हुए हमारा नदौण जाने का कार्यक्रम था। सुबह के चाय-पानी के बाद दोपहर का खाना हम सदा साथ-साथ बाध लिया करते थे। जहाँ कहीं खाने का समय हो जाता, और जगह भी खूबसूरत होती, वही भोजन के लिए रुक जाते। सब मिलकर खाना गर्म करते, और इकट्ठे बैठकर खाते। सफर की बातें भी साथ-साथ चलती रहतीं। फिर थोडी देर विश्राम करके, चीजे इकट्ठी करके अगले पडाव के लिए तैयार हो जाते।

"ज्वालाजी जाने की खुशी खास तौर पर मुझे इसलिए भी थी कि उस जगह को मैने बचपन से भी देखा था। उसकी धुँधली-सी याद अभी तक मेरे दिमाग मे थी। जब भी हम उधर की ओर जाते, यह याद मुझे कचोटती कि इस स्थान के फिर दर्शन किये जायँ। मुझे इतना भर याद है कि उन दिनो यह रास्ता खच्चर-घोडो पर तय किया जाता था। बहुत तंग-सी, साँप की तरह बल खाती हुई पथरीली सडक दिखाई दिया करती थी। इस सफर को लोग दिन मे ही, सूरज छिपने मे पहले खत्म कर लिया करते थे, क्योकि प्राय: जगली जानवर जगल मे से निकलकर सडक पर मिल जाया करते थे, और कई बार हमला भी कर देते थे।

"मुझे अभी तक याद है कि वहाँ के पडो ने हमे कई स्थानों पर घुमा-फिराकर लपटें दिखाई थी, और कहा था कि यहाँ देवी प्रकट हुई है। और तभी हमारी आँखो के सामने ही श्रद्धालु भक्त खोये के आध-आध सेर के पेडे प्रसाद के रूप मे ज्वाला देवी के आगे रखकर माथा टेकते। इसीलिए मुझे ज्वालाजी का मन्दिर फिर से देखने की उत्कट अभिलाषा थी।

"जब हम ज्वाला जी पहुँचे, तब मंदिरों मे तो कोई बड़ा अन्तर दिखाई नही दिया, पर मदिर को जाने के लिए जिस बाजार मे से होकर गुजरना पडता था, उसकी सड़क अवश्य चौडी हो गई थी। रास्ते मे हम सबने बाजार मे से चीजे खरीदी। हमारे मित्र आर्चर को, कांच की रग-बिरगी चूडियाँ बहुत पसन्द आई, और उसने अपनी बेटी के लिए चार-पाँच जोडे खरीदे। हममे से किसी ने आम की लकडी के बने हुए चमचे और दही के कूडे तथा आटा गूँधने के लिए लकडी की परात खरीदी, जोकि वहाँ के लोगो ने खास सफाई से बनाई हुई थी। इनके अलावा हमने, बहुत सारी धूप और अजवाइन, जोकि कडवे तूम्बों मे भरी रक्खी थी, खरीदी; और मदिर की ओर चल पडे, जहाँ पुजारी केवल इस ताक मे बैठे थे कि कोई ज्यादा चढावा चढाने वाला आय, और उसके पीछे लगा जाय।

"मंदिर की सफाई की ओर इनका कोई ध्यान नहीं था। न ही कोई भक्ति-भाव उनके चेहरों पर झलकता था। समीप के गाँवों के स्त्री और पुरुषों की एक टोली, जोकि शायद किसी मन्नत के हो जाने पर यहाँ आई थी, एक जगह बैठकर कृष्ण भगवान् के गुण गा रही थी। पुरुष ढोलक और घंटियाँ बजा रहे थे तथा स्त्रियाँ, सखियाँ बन-बनकर नाच रही थीं, और जो नाचने से सकुचाती थीं, उनसे कह रही थीं तुम भी नाचो! भगवान् के सामने नाचने में लज्जा कैसी! इस तरह बारी-बारी एक रुकती तो दूसरी नाचने लग जाती। कुछ देर तक हम उनको देखते रहे। इसके बाद हमने देखा कि एक गहरी-सी जगह पर भूमि में से कुछ आग की लपटें निकल रही थीं, और वहाँ के पंडे सबको साथ ले जा रहे थे, और बता रहे थे कि इस जगह से देवी प्रकट हुई है!

'इस तरह की और भी लपटें, थोड़े-थोड़े फासले पर निकल रही थीं। जिन लोगों को इसका कारण ज्ञान नहीं था, वे भगवान् की लीला देख-देखकर चकित हो रहे थे, पर किसी का ध्यान मन की सफाई की ओर नहीं जाता था। ज्वालादेवी को पेड़े, बताशे और हलवा भेंट करके; तथा लोगों ने अपने पैर धो-धोकर इतना कीचड़ कर रखा था कि वहाँ खड़ा होना मुश्किल हो रहा था। हमारे मित्र आर्चर को भय था कि पैरों को किसी रोग के कीटाणु न छू जायँ। उसने नाक पर रुमाल रखा और सब-कुछ झटपट देखकर नीचे उतरने में शीघ्रता की। हम भी उसके पीछे-पीछे चल पड़े।'

ज्वालामुखी की यात्रा में हमारे साथ लोक-गीतों का एक संग्राहक भी था। सुन्दर दाढ़ी, लम्बे-लम्बे बाल और फोटोग्राफी का शौकीन! और फोटोग्राफी भी इतने कमाल की कि फोटो में जान डाल देता। जब मैं मंदिर से लौटकर आया तो देखा कि जीप के पास बहुत भीड़ है। पता चला कि मेरा मित्र, एक पहाड़ी औरत की फोटो खींचने के लिए, उसे चेहरा ऊपर-नीचे करने का निर्देश कर रहा था कि इतने में उसका पति आ धमका। शोर मच गया कि एक पाकिस्तानी फकीर, हिन्दू औरतों की तसवीरें खींच रहा है। फिर क्या था। किसी ने बाँह पकड़कर, किसी ने कोट पकड़कर खींचा-तानी शुरू कर दी।

भारत में, विशेषकर पंजाब में अपरिचित स्त्रियों की फोटो खींचना बड़ा जोखिम है। और कुछ नहीं तो इतना कहने से नहीं टलतीं, "अगर फोटो खींचनी है तो अपनी माँ की खींच अपनी बहन की खींच! तुम्हें हमसे क्या लेना है?" हमने अपने मित्र को बड़ी मुश्किल से बचाया। अगर थानेदार मौके पर न आ जाता तो अशिक्षित कांगड़ावाली न जाने इसकी क्या गत बनाते! उनको समझाया गया कि ये पंजाब के टैगोर हैं, इन्होंने लोक-गीतों का संग्रह करके पंजाबी साहित्य की बड़ी सेवा की है, और फोटोग्राफी भी सांस्कृतिक दृष्टिकोण से ही कर रहे थे, तथा इनकी कोई बुरी नीयत नहीं थी। उन सीधे-सादे पहाड़ियों को भला क्या

मालूम कि अब कागड़ा में ऐसे उच्च स्तर के यात्री भी आने लगे है। उन्हे तो अभी तक पंजाबियों की जोर-जबरदस्ती का ही अनुभव था, जो उनकी सुन्दर स्त्रियों को बहकाकर मैदानों मे ले जाते थे।

अगर अकेली हो तो बहुत-सी स्त्रियाँ फोटो खिचवाने से मना नही करती, किन्तु उनके पुरुष कही आस-पास हों तो फोटो खीचना खतरे से खाली नही। एक बार हम शिमला से नारकंडा जा रहे थे। जब हम फागू के निकट पहुँचे तो देखा कि एक अत्यन्त सुन्दर पहाड़ी युवती, कंठा पहने, सिर पर गहरा पीला रूमाल बाँधे तथा नाक मे लौंग डाले, जो डूबते हुए सूरज की रोशनी मे जगमगा रही थी; ठुमक-ठुमक करती सड़क पर जा रही थी। मेरे साथी शोरी को, जो फोटोग्राफी के नशे की मस्ती मे धुत था, ऐसा अवसर कहाँ मिल सकता था ? झट कैमरा खोल-कर क्लिक-क्लिक शुरू कर दी। पल-भर मे ही, ऊपर से उस स्त्री का पति छतरी घुमाता, आता हुआ दिखाई दिया और छूटते ही बोला, "बाबूजी ! क्या कर रहे हो ?" बाबूजी की सिट्टी-पिट्टी गुम हो गई, और कैमरे का लैंज एक वृक्ष की ओर घुमाकर कहना पड़ा, "जंगल की तसवीर खीच रहा हूँ।"

नदौण

ज्वालामुखी से नदौण जाने वाली सड़क बड़ी रमणीक है। इसके दोनों ओर आमों के वृक्ष लगे हुए हैं। कोई पाँच मील के बाद व्यास नदी दिखाई देने लग जाती है और सामने एक ऊँचे टीले पर नदौण का कस्बा है, जिसके सम्बन्ध में कहा जाता है, "आयगा नदौण, जायगा कौन ?"

नदौण में प्रवेश करने से पहले हमने सोचा, उस मिट्टी-धूल को झाड़ लिया जाय, जो पहाड़ी मार्ग से चलते हुए जम गई थी। मेरे लोक-गीतों के संग्राहक मित्र की दाढ़ी धूल से बिलकुल अटी हुई थी, और वह हिमालय पर्वत का एक तपस्वी प्रतीत हो रहा था। हमने एक झंडे से सजी नौका में बैठकर नदी पार की। दूसरे किनारे पर नदौण के कुछ निवासी हमारे स्वागत के लिए बैठे थे। इनमें एक ठिगना-सा आदमी था। खिज़ाब से काली की हुई लम्बी मूँछों वाला यह भद्रपुरुष रेशमी अचकन पहने, बड़ी-सी पगड़ी सजाए और हाथ में चाँदी की मूठ वाली छड़ी पकड़े खड़ा था। जान-पहचान हुई तो पता चला कि यह नदौण का राजा राजेन्द्रसिंह है। वह हमें घाट की सीढ़ियों की ओर ले गया। नदी के किनारे एक बारात उतरी हुई थी। डोली, गहरे लाल रंग के पर्दों में लिपटी हुई थी, और इसके आगे-पीछे रंग-बिरंगे कपड़े पहने बाराती, एक अत्यन्त सुन्दर दृश्य प्रस्तुत कर रहे थे। अमतर पहुँचे, जहां रात्रि को राजा के मेहमानखाने में हमने विश्राम किया। यहाँ से व्यास नदी दिखाई देती है।

नदौण कांगड़ा के राजाओं का पुराना निवास-स्थान था। सुजानपुर टीरा और आलमपुर तो इससे बहुत बाद में बने थे। पुराने राजाओं के बारे में कई तरह की कहानियाँ प्रचलित हैं।

नदौण के निकट गीदड़ बहुत हैं, जो रात को खूब अँधेरी अलापते हैं। पौष का महीना था और राजा अमतर के महलों में सोया पड़ा था। आधी रात होने को आई तो गीदड़ों ने खूब कोलाहल मचाया। अगली सुबह राजा ने मंत्री को बुलाया और पूछा, "रात को गीदड़ क्यों रोते हैं ?" मंत्री बोला, "सरकार ! पौष का महीना है, कड़ाके की ठंड पड़ती है, बेचारे सर्दी के मारे चिल्लाते हैं।"

राजा ने आज्ञा दी कि उन्हें कम्बल बाँटे जायँ। उसी रात ही कर्मचारियों ने

जहा-जहाँ गीदड रहते थे, कुछ कम्बल डाल दिए और बाकी अपने घरों को ले गए। रात हुई तो गीदडो का चीत्कार पुन आरम्भ हो गया। राजा ने अगले दिन मत्री से फिर पूछा, 'मत्री गीदड अभी तक रोते है। क्या इनकी सर्दी दूर नही हुई ?'' मत्री ने उत्तर दिया, 'सरकार! ये आपका धन्यवाद कर रहे है कि आपने इन्हे सर्दी से बचाया है।''

अँमतर का शाब्दिक अर्थ है—आम-तले घाट। यह नाम एक बहुत बडे आम के पेड के कारण पडा है, जिसके नीचे घाट है। इस जगह से पहाडी लोग मशको पर नदी पार किया करते थे। अँमतर मे ससारचद के वे महल थे, जिनकी खिडकियो मे से वह व्यास नदी का दृश्य देखा करता था। ये महल कब के ढहकर पानी मे बह चुके है। उनकी निशानी पत्थरो का एक रास्ता ही बाकी है और यह भी आजकल मिटता जा रहा है। कहा जाता है कि इस महल मे महाराजा ससारचद, अन्तिम दिनों मे अपनी प्रेयसी नाची जमालो के साथ रहा करता था जमालो के महल के खण्डहर मैदान के निकट अब भी दिखाई देते है।

ससारचन्द के राज्य मे, नदौण मे बडी रौनक थी। लुहार, बढई, दरी-कालीन बुनने वाले दस्तकार, कई गायक और कथाकार और दो सौ के लगभग वैश्याएं नदौण मे रहती थी। जो कोई इनके प्रेम-जाल मे फँस जाता, निकल नही सकता था।

१७६० से लेकर १८०५ ईसवी तक ससारचन्द का सितारा बुलन्द था, किन्तु गोरखों के युद्ध ने इसकी सैनिक शक्ति छिन्न-भिन्न कर दी। यदि रणजीतसिंह उसकी सहायता को न आता तो उसको और भी क्षति पहुँचती। गोरखों के चले जाने के बाद ससारचद रणजीतसिंह की दया पर निर्भर था। वैसे कहा जाता है कि जब ससारचंद की शक्ति चरमोत्कर्ष पर थी, तो वह अपने को रणजीतसिंह से कम नही मानता था। उसके चाटुकार दरबारी जब उसको प्रसन्न करना चाहते तो कहते, "आपको लाहौर प्राप्त हो।" लाहौर तो क्या प्राप्त होना था, कागड़ा का दुर्ग भी हाथ से जाता रहा। घोर निराशा ने उसकी कमर तोड दी, और जमालो को लेकर वह अँमतर के महलो मे रहने लगा। दरबारियो को आज्ञा दी गई कि वे उसके आराम मे विघ्न न डाले। महलो के द्वार के सामने एक कामल का वृक्ष था। ससारचद के आदेशानुसार उसके दरबारी और सरदार इस कामल वृक्ष को ही 'जय दिया' करके वापस लौट आते। 'कामल की जय दिया' अभी तक कांगडा मे प्रसिद्ध है।

राजा के महल की चारदीवारी मे सबसे पुराना चारमजिला भवन ससारचद के छोटे बेटे राजा जोधवीरचन्द का बना हुआ है। वह मैदान, जहाँ राजा की फौज कवायद किया करती थी, आजकल बहुत छोटा-सा रह गया है। स्थानीय गवर्नमेंट हाई स्कूल के विद्यार्थी यहाँ फुटबाल खेलते है।

नगर में पाँच मंदिर और एक गुरुद्वारा है। घाट के बाईं ओर एक शिवालय है, जिसके भित्तिचित्र कांगड़ा-कला के उत्कृष्ट नमूने हैं। जब मैं मार्च १९६० में फिर से नदौण गया तो क्या देखा कि किसी मूर्ख श्रद्धालु ने इन चित्रों पर कूची फेर दी। पूछने पर पता चला कि इस मनुष्य को गोपियों के नग्न शरीर, जो चीर-हरण के चित्र में दिखाए गए थे, अच्छे नहीं लगे। बाल्टियों में पानी मँगवाकर मैंने सफेदी को धुलवाया, और बड़ी कठिनाई से कुछ चित्र दुबारा देखने योग्य हुए। हमारा देश कैसे-कैसे मूर्ख व्यक्तियों से भरा पड़ा है। अगर इनका बस चले तो बहुत-सा सुन्दर साहित्य, भागवत पुराण की रास-लीला, 'गीत गोविन्द' और कवि केशव की 'रसिक प्रिया' की भी वही दुर्दशा हो जो नदौण के भित्तिचित्रों की हुई।

भगवान् कृष्ण के मंदिर के पास गहरा कुआँ है, जिसमें से अभी तक लोग पानी भरते हैं। इससे आगे जाकर श्री गुरुगोविन्दसिंह जी के निमित्त बनाया गया एक गुरुद्वारा है जिसे सरदार बैसाखासिंह ने पठानकोट-कांगड़ा रेलवे के बन जाने पर बनवाया था।

आजकल नदौण, कांगड़ा घाटी की उपराजधानी न होने के कारण अपना प्राचीन गौरव तो खो बैठा है, पर फिर भी यह कस्बा सुन्दर है और जब तक इसके चरणों में व्यास नदी बहती है, इसकी रमणीयता बनी रहेगी। गरम मैदानों में लौटकर नदी की एक मीठी याद— उसके किनारे चर रही गऊएँ, भाँति-भाँति के लोग, मुझ पर एक जादू सा कर देते हैं; और मुझे यह दृश्य भुलाए नहीं भूलता। इधर जुलाई के शुरू में, मैदानों में बैठे, बरसात के पहले छींटे मुझे याद दिलाते हैं कि नदौण के बागों में आम पक गए होंगे; दरिया पूरे जोबन में बह रहा होगा और ज्वालामुखी की पहाड़ी पर काले बादल घिर आए होंगे। बरसात में काले-काले बादल, जब उमड़-घुमड़ पड़ते हैं तो नदौण के पास व्यास का दृश्य और सुहावना हो जाता है। काले मेघों से ज्वालामुखी की पहाड़ियों पर चमक रही बिजली की छटा बहुत आकर्षक लगती है। बिजली की चमक से नदी चिलकते हुए सोने की तरह दिखाई देती है। इसके विपरीत ज्वालामुखी के पहाड़ों का रंग और भी गहरा हो जाता है। तो इस प्रकार इस उक्ति में रंच-मात्र संदेह नहीं कि 'आयगा नदौण जायगा कौन?' एक बार जो नदौण चला जाय, लौटने को उसका जी नहीं चाहता। नदौण की मीठी याद कभी भुलाई नहीं जा सकती।

नदौण के मंदिर, महल और चित्र देखते हुए मेरे साथी [illegible], डॉक्टर आनन्द तथा उनकी श्रीमती और सेक्रेटरी डौली ने सुझाव दिया कि नदौण से गोपीपुर की यात्रा नौका द्वारा की जाय। मुझे और मिस्टर आर्चर को नौका-विहार का इतना चाव नहीं था, इसलिए हमने उनके इस सुझाव को स्वीकार करते हुए स्वयं कार से ही गोपीपुर पहुँचने का निर्णय किया। फिर हम सब राजा के अतिथि-निवास में सो गए।

चाँद की चाँदनी मे, मथर गति से बहती हुई ब्यास नदी यहाँ से स्वर्ग के किसी सरोवर के समान दिखाई देती है। पूर्णिमा का पूरा चाँद व्यास की घाटी पर जैसे चाँदी का छिडकाव कर रहा था। चन्द्रमा अपनी सम्पूर्ण कलाओ मे था। इससे वह और भी सुन्दर लग रहा था। नदी के किनारे एक वृक्ष के पत्ते सोने के दियो की तरह चमक रहे थे। यह वृक्ष पीपल का था, जिसके ताँबे के रंग के कोमल पत्ते चाँद की चाँदनी मे अगणित ज्योतियो की तरह दीख रहे थे। एक हिन्दू कवि ने ठीक ही कहा है कि पीपल की जडो मे ब्रह्मा का वास है, इसके तने मे विष्णु रहते है और इसके हर पत्ते पर देवता बैठते है। हिन्दू कवि के इस कथन की सचाई को स्वीकार करते हुए मै मेहमानखाने के बरामदे मे सो गया।

अभी आँख लगी ही थी कि आकाश मे बिजली कडक उठी। घड-घड की आवाज हुई और सारे पहाड काँप उठे, मानो इन्द्रदेव क्रोधित हो रहे हों। पानी से भरे नाले उछल-उछल पड रहे थे, और कल-कल करते हुए व्यास की ओर ऐसे जा रहे थे मानो कोई विरहिणी व्याकुल होकर अपने प्रियतम को खोज रही हो! मैं नदौण-नरेश के मेहमानखाने मे बैठा था, और मन मे यह मना रहा था कि अगले दिन आकाश खुल जाय तो अच्छा हो!

भोर होते ही मैं उठा, और देखा कि बादल छितरा गए थे, और धौलीधार स्पष्ट दीख रहा था। थोडी देर में ही, धधकते हुए सूर्य के गोले ने रात वाले उसी पीपल के पीछे से सिर बाहर निकाला। सूरज के प्रकाश में अब उसके पत्तो का रग, ताँबे-जैसा, सुनहरी हो गया था। मैंने अपने साथियों से कहा कि वे भी पहाडो के नजारो का लुत्फ ले, परन्तु वे बातो मे मस्त थे। मुल्कराज ने कहा कि वह बाहर के नजारो के मुकाबले, मन के भीतरी नजारो को ज्यादा दिलचस्प मानता है। मैंने सोचा कि अगर यह बात ठीक है तो इतनी दूर आने का कष्ट करने की क्या जरूरत थी? मन के नजारो की कल्पना तो बम्बई मे बैठकर भी की जा सकती थी।

कार मे बैठकर आर्चर और मैंने डेहरा गोपीपुर की ओर प्रस्थान किया। हमारे बाकी साथी नौका में बैठकर नदी के मार्ग से आए। नदी पार करके हमने गुग्गे का मदिर देखा। गुग्गे की मिट्टी की प्रतिमा बडी कुशलता से बनाई गई है, और उसका घोडा फर्राटे भरता हुआ, पूँछ ऊपर उठाए, दौडता हुआ-सा प्रतीत होता है।

अब हम एक ऐसी घाटी मे से गुजर रहे हैं, जिसके दोनों ओर नाटी-सी खुश्क पहाड़ियाँ है। यहाँ पानी की बडी तगी है। फिर एक वीरान किला, जो राजपूती शान का एक प्रतीक है, दिखाई देने लग जाता है। इस स्थान से हरिपुर गुलेर को जाने वाली सडक दाएँ हाथ को मुड जाती हैं। यह सडक पक्की नही, और हमारी

कार धूल-मिट्टी के बादल उडाती हुई हरिपुर पहुँच गई।

हमारे दूसरे साथियो ने व्यास मे नौका की जो सैर की उसका तथा नदौण की कुछ और घटनाओं का वर्णन मेरी पत्नी इकबाल ने किया है, जो ज्यों-का-त्यों अगले पृष्ठों मे दिया जा रहा है।

ब्यास की सैर

रघाया साहब, डॉ० आनन्द, मिस्टर आर्चर के बाद, नदौण-नरेश का परिचय डॉक्टर आनन्द की श्रीमती तथा उनकी सेकेट्री डौली से करवाया गया। परिचय करवाते हुए आनन्द साहब ने कहा, 'यह है मेरी पत्नी शीरी, भारत की प्रसिद्ध नर्तकी। इन्होंने बम्बई मे बच्चों को नृत्य सिखाने के लिए स्कूल खोला है। यह सुनकर राजा साहब के चेहरे पर रौनक आ गई, और खुश होकर बोले, "बहुत खूब! आपकी भी कला देखने का अवसर प्राप्त होगा!' फिर उनकी डौली से भेट हुई, जोकि बड़ी खुशमिजाज़ और फोटोग्राफी मे माहिर थी। उसके चुस्त पहरावे को, सिर से पाँव तक देखकर राजा साहब बड़े प्रसन्न हुए।

राजा साहब का मकान नदी के किनारे बना हुआ है। एक ओर तीन-चार कमरे है, जोकि राजा साहब ने हमारे आने की सूचना मिलते ही लिपवा-पुतवाकर साफ करवा रखे थे। ये कमरे उनके मुंशी ने हमारे लिए खोल दिए। जो कमरे नदी की ओर खुलते थे, अच्छी रोशनी वाले थे, और जो दूसरी ओर थे उनमे दिन मे भी बत्ती के बिना कुछ दिखाई नही देता था।

इन कमरों के आगे एक लम्बा-सा बरामदा था, जिसको कि हमने दरियाँ और चटाइयाँ बिछा, कुर्सियाँ तथा चारपाइयाँ डाल, बैठने योग्य बना लिया ताकि आराम से बैठकर नदी की सुन्दरता का आनन्द ले सके। इसके बाद हमने अपना सामान उठाकर कमरों मे लगा दिया। इतनी देर में राजा के कुँवर साहब भी आ पहुँचे। कुँवर साहब की आयु सात वर्ष की होगी; गोरा रंग, और मोटी-मोटी आँखो में सुरमा डाल रखा था। जरी की अचकन और रियासती ढग की सतगरी-पगडी में कुँवर साहब बहुत जँच रहे थे।

तभी भोजन का समय हो गया। राजा साहब ने बड़ी मेहनत से कई प्रकार का महाप्रसाद तैयार करवाया था। थाल सजकर खाने के लिए आ गए। इनमे तैरता हुआ घी देखकर, हमारे मित्र आर्चर साहब ने तो गुलाब और फलों से ही निर्वाह किया। अन्य सभी ने खाने की बहुत प्रशंसा की। यह खाना, राजा साहब के खानदानी रसोइये ने बनाया, जोकि पुराने राजाओं के समय के पकवान बनाना जानता था। इसके बाद आराम कर चुकने पर, शाम को राजा साहब के

साथ हम उनके पूर्वजों के प्राचीन महल देखने गए, जोकि बहुत बड़ी-बड़ी चट्टानों पर बने हुए थे; और जिनके नीचे से नदी का पानी बहता था। एक प्रकार की प्राकृतिक सुरंग जैसी बनी हुई थी, जिसमें महलों के बीच में से ही रानियों का नहाने को जाने का रास्ता था। उसके बीच में से नदी का पानी प्रवाहित होता था। चाहे पुरानी इमारत का इस समय कोई नामोनिशान बाकी नहीं, फिर भी सुनने से पता चलता है कि उन्होंने अपने मनोरंजन के लिए प्राकृतिक चट्टानों का बड़े अनोखे ढंग से लाभ उठा रखा था।

जब हम पहुँचे तो उस समय पानी की जगह रेत-ही-रेत दिखाई देती थी, जिससे अनुमान लगाया जा सकता है कि कभी पानी भी इधर से बहता होगा। तब कितनी चित्ताकर्षक जगह होती होगी। कुछ देर हम बड़ी-बड़ी चट्टानों पर बैठकर वहाँ की सुन्दरता, और कुछ दूर पर बह रही नदी का दृश्य देखते रहे। वहाँ के बीते जीवन के बारे में बातचीत करते रहे। फिर वहाँ से उठकर, राजा साहब के निजी महल की ओर चले गए, जोकि अंग्रेजी ढंग के पुराने सोफों, और कुछ दीवारों पर लगे शीशों से सजाया हुआ था। कहीं-कहीं दीवारों पर कांगड़ा के चित्रकारों की बनी तस्वीरें लगी हुई थीं। इनमें से कुछ पुराने चित्रकारों की कृतियाँ थीं। यह सब देखकर हमने अपने स्थान पर लौटकर चाय पी।

इसके बाद रघावा साहब तो दालान में बैठकर प्रकृति के दृश्यों को निहारते रहे, और अपनी पुस्तक लिखने की कल्पनाओं में खो गए। बाकी सबका विचार हुआ कि नीचे उतरकर, नदी की ओर चला जाए। डाक्टर आनन्द और आर्चर साहब का विचार था कि नदी में तैरा जाए, इसलिए वे तो कुछ देर तैरते रहे, और हम किनारे पर बैठे, रंग-बिरंगे पत्थरों को देखते रहे, जिनमें से कुछेक तो अनोखे ही रंगों के थे। इस तरह सैर करते-करते ध्यान आया कि अगली यात्रा नौका द्वारा की जाए; और एक नाविक से सुबह नौ बजे के लगभग चलने का तय हो गया।

जब वापस आए तो रात हो चुकी थी। खाना खाने के बाद कोई नौ बजे पहाड़ियों के पीछे, वृक्षों के बीच से चाँद दिखाई दिया। देखते-ही-देखते, उसकी चाँदनी, सारे दरिया और आस-पास के क्षेत्र को जगमगाने लग गई। जी चाहता था, कि ये दृश्य आँखों से ओझल न हों। यह निश्चय किया गया कि फिर कभी गर्मियों के दिनों में कुछ दिन छुट्टी ले, यहाँ आकर इस रमणीक स्थल के एकान्त और शान्ति का आनन्द लिया जाए।

अगली सुबह तैयार होकर नाश्ते के बाद हमने अपना कर्तव्य समझते हुए सोचा कि हमें रानी साहिबा से भी मिल लेना चाहिए और राजा साहब की खातिरदारी के लिए धन्यवाद भी कर आना चाहिए। पर्दे के कारण, शायद रानी साहिबा, हमारे पास न आ सकती हों। मैं, ओगी और डौली तीनों, उनके

मकान की ओर जा रही थी कि बाहर कुँवर साहब खेलते हुए मिल गए। हमने उनसे पूछा कि रानी साहिबा कहाँ है। कुँवर साहब ने उँगली उत्तर की ओर उठा-कर कहा कि वहाँ है। हमने कुँवर साहब को अपने साथ चलने के लिए कहा। कुँवर साहब, हमे अपने साथ ऊपर ले गए और अपनी माता जी की ओर तशरीफ ले गए।

हम वहाँ एक कमरे मे खडी रही। वही उनकी दो नौकरानियाँ बैठी थी। पास ही एक चूल्हा बना हुआ था। एक नौकरानी चूल्हे के पास बैठी कुछ गर्म कर रही थी। दूसरी, वहाँ ही एक सिलाई की पिटारी को कुरेल रही थी। उनसे हमने कहा कि रानी साहिबा को जाकर सूचित करे कि उनके यहाँ जो अतिथि ठहरे हुए है, उनके यहाँ की स्त्रियाँ मिलने आई है। वे मुँह से कुछ न बोली, किन्तु नका-रात्मक सिर हिलाकर, एक-दूसरे को देखकर मुस्कराने लगी।

इतने मे उनका एक बूढा नौकर आया, और कहने लगा कि आप लोग नीचे जायँ, रानी साहिबा नही मिलेगी। हमने सोचा, शायद वह समझा नही कि हम कौन है, तभी इस तरह से बोल रहा है। मैंने फिर ये शब्द दोहराए, "तुम जाकर रानी साहिबा से कहो कि हम मिलने के लिए बाहर खडी है।" फिर उसी समय पास के कमरे मे रानी साहिबा के दौडने की आवाज आई, और साथ ही जोर से दरवाजा बन्द हुआ। दरवाजे के पीछे से धीमी-सी यह आवाज सुनाई दी कि कह दो वे नहा रही है और मिल नही सकती। यह सुनकर हम चकित रह गए। चुप-चाप सीढियो से नीचे उतर आए। कुँवर साहब के उत्तर की प्रतीक्षा का भी साहस न हुआ। कुँवर साहब को भी रानी साहिबा ने अपने कमरे मे बन्द कर रखा था। यह सारी कहानी, जो हम पर बीती, लौटकर हमने अपने साथियो को सुनाई, और वे बहुत हँसे। फिर हमने प्रस्थान के लिए अपना सामान इकट्ठा किया। कोई पन्द्रह-बीस मिनट के बाद क्या देखते है कि राजा साहब और उनके साथ कुँवर साहब हमारी ओर चले आ रहे है हम सबने खातिरदारी के लिए उनका धन्यवाद करते हुए, उनसे विदा माँगी।

अपने लिए दोपहर का खाना साथ बाँधकर हम डेहरा गोपीपुर जाने के लिए जल्दी से तैयार हो गए। सामान कार मे रखकर, ड्राइवर को निर्देश दिया कि वह हमे आगे पुल पर मिले। हममे से आधे, नौका मे जाने का विचार रखते थे और आधे कार मे जाना चाहते थे। किस प्रकार जाना होगा इस बात का निर्णय, पुल पर जाकर होना था। पुल वहाँ से तीन मील की दूरी पर था। धूप तेज होने के कारण, आर्चर साहब घबरा रहे थे। इसलिए रधावा साहब ने भी उनके साथ कार मे जाने का इरादा पक्का कर लिया। हम आधा खाना, उन्हे सौंपकर, स्वय नौका मे चले गए।

हम बहुत खुश थे क्योंकि हमने सुना था कि मार्ग मे एक गाँव पड़ता है जहाँ

पर बहुत बडा मेला लगता है। गाँव की सब लडकियाँ नदी के तट पर इकट्ठी होती हैं। चाव था, कि नीचे उतरकरउनको देखेंगे। धूप तो बड़े कड़ाके की थी, लेकिन हमे गाँव और वहाँ के लोगों मे घूमने की बडी इच्छा थी। रास्ते मे बहुत-से मन-लुभावने स्थान आए। कही जगल, कही चट्टानें, कही हरे-भरे खेतो में काम करते हुए लोग, कही मछलियाँ पकड़ने वाले नदी मे जाल डाले बैठे थे। कई जगह ऐसी-ऐसी भँवरो मे मे नौका निकलती कि भय होता कि नाव कही उलट न जाय। पर जब भी कोई ऐसी भँवर आती तो हमारा नाविक, हमे पहले से सावधान कर देता कि हम सँभलकर बैठे रहे, ताकि बोझ दोनो ओर बराबर रहे! और वह बडी फुरती से नाव को उन उठती लहरो मे से निकालकर ले जाता। ऐसा मालूम होता जैसे हम पीग झूल रहे हो! इतना लम्बा दरियायी सफर हममे से किसी ने भी पहले नही किया था। साढे बारह बजे हमारी नौका, मेले वाले गाँव के पास किनारे लगी।

वहाँ से उतरकर कोई चार फलाँग दूर, रेत और बड़े-बड़े पत्थरों प धूप मे चलते हुए हम दूसरी ओर पहुँचे, जहाँ हमे मेला देखने जाना था। हममे से किसी ने तो छतरी तान ली और कोई ऐसे ही चल पड़ा। रास्ते मे गाँव की लड़कियो की टोलियों-की-टोलियाँ रग-बिरंगे कपडे पहने, सिरो पर चौक-फूल सजाए, नाक मे नथ डाले, पहाडी गीत गाती हुई मिली। हम उनकी ओर देख लेते और वे हमारी ओर, क्योंकि हमारी ओर की शीरी और डौली ने पतलून पहनी हुई थीं। बीच मे से कोई लडका कह उठता कि फिल्म वाले है। हम सुनकर हँस देते। इस सफर मे जब हम जालंधर से अपने ग्राम बोदलाँ गए शीरीं और डौली भी हमारे साथ थी। इन्हे पतलून पहने हुए देखकर गाँव के जाट 'वाहिगुरु' कह रहे थे।

लोगो का यह भुलावा दूर करने के लिए कि हम फिल्म वालियो में नहीं हैं उनसे मेले के बारे मे बाते करने लग जाते। कभी-कभी किसी लडकी से पूछ लेते, "रली को बहाने चली हो?" और तब वह कहती, "हाँ, अभी बहायँगे।" प्रत्येक लडकी ने एक गुडिया उठाई हुई थी, जिसको वह रली कहती थी। उसका ब्याह रचाकर, गहने-लत्तों सहित उसको नदी में प्रवाहित कर देती।

यह सब तमाशा, हम बहुत देर तक देखते रहे। फिर एक वृक्ष की छाया में बैठकर खाना खाया। कुछ देर वही आराम करके, दो-ढाई बजे फिर नाव में सवार होने के लिए चल दिए। धूप अभी तक बहुत तेज थी। हम खाने का सामान, हाथ मे थामे, अगले सफ़र के उत्साह मे, तेज-तेज कदम उठाते चले आ रहे थे ताकि जल्दी से नौका मे पहुँच जायँ और धूप की गर्मी से भी कुछ राहत मिल सके। फिर भी नाव तक पहुँचने में हमें कोई आध-पौन घण्टा लग गया। हमारे साथी बड़े खुश थे कि इनको बम्बई शहर के चालाक लोगों से दूर इन भोले भाले आदमियत के पुतले पहाड़ी लोगों में घूमने-फिरने का अवसर मिला

हम नौका में बैठकर थोड़ी दूर गए तो दाईं ओर एक मन्दिर दिखाई दे रहा था। वहाँ क्या देखते हैं कि बहुत से लाल, पीले, नीले दुपट्टे दूर से नजर आ रहे हैं। नौका वाले से पूछने पर पता चला कि वहाँ भी मेला लगा हुआ है, और रली को प्रवाहित करके लड़कियाँ, मन्दिर होती हुई अपने-अपने घरों को चली जाती हैं। चिलचिलाती धूप और लम्बा सफर होने के कारण हममें से किसी की हिम्मत न हुई कि वहाँ की रौनक भी देखने चलें। फिर नजरें बार-बार उनकी रंग-बिरंगी पोशाकों पर जाती थीं। दूर तक हम उनकी ओर देखते रहे। चार बजे के लगभग, नाव गोपीपुर आकर, किनारे लगी। वहाँ से कुछ अन्तर पर डाकबंगला है। जब हम वहाँ पहुँचे तो दोनों साहब, चाय पीते हुए हमारी बातें कर रहे थे कि नाव वाले अभी तक नहीं पहुँचे, सही सलामत तो हैं! इतने में हम पहुँच गए, और उन्हें इस चिन्ता से मुक्त किया। हमने भी गर्म गर्म चाय पीकर दिन-भर की थकावट दूर की।

डेहरा गोपीपुर

डेहरा गोपीपुर इलाके की तहसील है। यहाँ का बाजार बेतरतीब-सा बिखरा-बिखरा है। बड़ी इमारतें, तहसील, थाना और स्कूल हैं। दरिया के किनारे डाक बंगला बना है। जब हम बंगले में पहुँचे तो देखा कि पंजाब सरकार का एक एक्जीक्यूटिव इंजीनियर बंगला संभाले बैठा था। जब उसने बँगला खाली करने की कोई इच्छा प्रकट नहीं की तो मैं उसके पास गया और उसके चीफ इंजीनियर के पत्र दिखाए। वह इस इशारे को भी न समझ सका। हम अब समझे कि अफसरी शान इसीका नाम है! अपने-आपको तीसमारखाँ समझना और दूसरों को, जैसे वे कोई चीज ही न हों! इस अफसरी शान की चमक देखकर हमारी आँखें चौंधिया गईं। इतनी देर में एक नायब तहसीलदार, जो मुझे जानता था, उधर आ निकला। मैंने उसे बताया कि वह इंजीनियर को समझाए कि इंग्लैण्ड के प्रसिद्ध लेखक डब्ल्यू० जी० आर्चर, जो पंजाब सरकार के अतिथि हैं, तथा भारत के प्रसिद्ध उपन्यासकार मेरे संग हैं। इतना झंझट करने पर इंजीनियर ने बड़ी मुश्किल से बंगला खाली किया। इस अफसर की खुदगर्जी साफ बताती है कि ये अफसर साधारण जनता की भला क्या भलाई करते होंगे, जबकि हमारे साथ ही उनका ऐसा बर्ताव है। बीवियों को सजा-धजाकर डाक-बंगलों में गुलछर्रे उड़ाते-फिरते हैं। न आस-पास से कोई दिलचस्पी, न जनता से कोई लगन! इसी तरह की अफसर श्रेणी ही जनता और सरकार के बीच घृणा का कारण बताई है।

सामान टिकाकर तथा अपने साथियों को कमरों में आराम करते छोड़कर, मैं बाहर आ गया। क्या देखता हूँ कि सड़क पर धूल दिखाई दे रही है। इतनी देर में एक स्टेशनवैगन आकर रुकी। बीच में से पंजाब का एक बड़ा अधिकारी निकला जो मेरा परिचित था। यह अफसर लम्बा ज्यादा था, चौड़ा कम। तबीयत इतनी खुश्क, कि उसे देखते ही भूख मर जाती। मेरी कविता की आत्मा उसे देखते ही विदा हो गई। मालूम हुआ कि साहब केवल चाय पीने के लिए ही आध घंटा रुकेंगे। रैन बसेरा, दरिया के पार मसाई के बंगले में होगा। हम दोनों बरामदे में कुर्सियों पर बैठ गए। उसने मुझसे पूछा, "आप यहाँ क्या करने आए हैं?" "छुट्टी लेकर कांगड़ा-चित्रों की खोज कर रहा हूं। अभी-अभी नदौण के

राजा और मियाँ देवीचन्द के चित्र-संग्रह देखे।"

"यह कागडा-चित्र क्या बला है जिसकी खोज मे आपने इतना कष्ट किया है ? मैं आपकी जगह होता तो छुट्टी बम्बई-जैसे शहर में काटता जहाँ बडे-बडे थियेटर और सिनेमाघर है। यहाँ उजाड मे क्या रखा है ?"

मै भीतर गया और अपनी कागडा-कला की पुस्तक लाया। इसमे कागडा-कला के चालीस चुने हुए रंगीन चित्र थे। कला-प्रेमियों मे इस पुस्तक की बडी चर्चा हुई थी। यह किताब मैने अफसर को दी। उसने हाथ मे लेकर जल्दी-जल्दी इस तरह पन्ने पलटे जैसे कोई ताश के पत्ते उलट रहा हो। पाँच ही मिनट के बाद उसने पुस्तक लौटा दी। यह किताब मेरी पाँच साल की खोज और मेहनत का परिणाम थी, तथा उसमे नायिका-भेद और बारामासा के इतने सुन्दर चित्र थे, जिनको प्राप्त करके मैने बडी खुशी मनाई थी। इनमे से कुछ चित्र तो इतने सुन्दर थे कि उनके ध्यान मे कई राते मैंने आँखो मे काटी थी। ये चित्र बार-बार मेरे सपनों मे आते और मुझे खुशियो से भर देते। ऐसा होता भी क्यो न ? उन्हे बनाने वाले कलाकारो ने अपने हृदय के तूफानों और सच्चे भावो को इनमे चित्रित किया है। टॉलस्टाय का कथन है कि वास्तविक कला वह है जो लेखक अथवा चित्रकार की हार्दिक भावनाओ को अभिव्यक्ति करे तथा इन्हे देखने वाला भी उन्ही भावो को महसूस करने लग जाय, जिनको कलाकार ने अपनी कृति मे सँजोया है। कागडा-चित्र देखकर, हम नारी के प्यार-भरे दिल और उसके सच्चे प्रेम को उसके वास्तविक रूप मे अनुभव करते है।

कागडा-कला, वास्तव मे सच्ची और महान् कला है। परन्तु क्या बात थी कि इन चित्रो का उसे दिखाना, ऐसे ही था जैसे भैंस के आगे बीन बजाना ! असली बात यह है कि कला को वही इसान महसूस कर सकता है, जिसका हृदय कोमल हो। एक महान् चित्र रण के समान और हमारी आत्मा सारंगी के समान। जब सौन्दर्य और आत्मा का एकाकार हो जाता है, तब सगीत की उत्पत्ति होती है। यह है कला की कसौटी का मापदड। इससे मुझे एक चीनी कहानी याद आती है। लुगमैन की घाटी मे एक बहुत बडा वृक्ष था, जो ऐसा लगता था मानो जगल का सिरमौर हो। उसका शिखर तारो से बाते करता था और उसकी जडे पाताल को छूती थी। इस वृक्ष को काटकर एक जादूगर ने हार्प (स्वर मंडल) बनाया, और चीन के सम्राट् को भेट किया। जादूगर ने कहा, इस हार्प को वही बजा सकता है जो सबसे बडा सगीतकार हो। बडे-बडे गायक और वादक कलाकार आए पर हार्प मे से कुराग स्वर ही निकले। जब सब हार चुके तो पीव, जो सबसे बडा सगीतकार था, आया। उसने हार्प को बडी श्रद्धा और आदर भाव से उठाया और इस तरह चूमा जैसे कोई घुडसवार किसी जगली को पुचकारता है। उसने मौसम तथा ऊँचे पर्वतो के बहते झरनो के गीत गाए और वृक्ष की पुरानी स्मृतियाँ लौट आई हार्प की

धुन इतनी सुरीली थी कि देखते-ही-देखते मौसम ने कई रग पलटे। एक बार फिर पुरवैया वृक्ष की शाखाओ मे से प्रवाहित हो उठी । निर्झर, फूलो और कलियो से बातें करने लग गए। फिर बौछार की आवाज़, और झींगुर का राग; कोयल का आलाप और वर्षा की रिमझिम। सुनो ! अब सिंह की गर्जना सुनाई दी, जो पर्वतो मे गूँज उठी। फिर पतझर का मौसम आया और चाँद पत्रहीन सूखे-से पेडो में से झाँका। फिर शहर आया और पख फडफडाती कूज्जो की आवाज़ आई। और ओले तड-तड करते हुए गोली की तरह पेड़ की शाखाओं से जा टकराए।

पीवू ने फिर स्वर बदला, तथा प्यार का नगमा छेडा। वृक्ष खुशी से झूमा। उधर से एक चमकती हुई बदली गुजरी, जैसे अपने रूप के गर्व में कोई युवती, झूमती, इठलाती जा रही हो। बदली ने पहाड पर लम्बी काली-सी परछाईं डाली, और पीवू ने फिर राग बदला। अब उसनेयुद्ध का गीत गाया, तो घोडो के टापोंकी ध्वनि आई, और तलवार-भाले टकराने का शब्द सुनाई दिया। पहाडों में बिजली जोर से कडकी और बर्फ का पहाड सरका। सम्राट् ने पीवू से उसकी सफलता का रहस्य पूछा। उसने कहा, "अन्नदाता ! बाकी सगीतज्ञ इसलिए असफल हुए क्योकि वे अपना-अपना राग ही अलापते रहे। मैं मस्ती मे था। मैंने हार्प को अपना राग आप ही चुनने की छूट दी। फिर मुझे याद नहीं रहा कि पीवू हार्प है या हार्प पीवू है।

सच्ची और ऊँची कला पीवू है, और हम लुँग मैन की हार्प है। जब सुन्दरता का जादू हमारे दिल के छिपे हुए तारो को छेडता है तो आत्मा गद्‌गद् होकर सारगी के समान सगीत उत्पन्न करती है, और हम विभोर होकर सातवे आसमान पर पहुँच जाते हैं। मन मन से बाते करता है; और दिल दिल से मिलता है। भूली हुई यादे फिर ताज़ी हो जाती है। आशाएँ और उमगें उभर आती है। हमारा मन वह कागज़ है जिस पर कलाकार अपने रग भरता है। और उसके रग हैं—हमारी उमगें और दिल के तूफान ! इस प्रकार एक महान् चित्र, खुद हमारा अपनापन है, जैसे हम इसके एक अंग हों। एक महान् चित्र को समझना हो, तो उसी भाव से देखना चाहिए जिससे हम किसी महापुरुष को मिलते हैं ! हमारे हृदय में प्यार और नम्रता होनी चाहिए। कागडा-कला के चित्र तो खास तौर पर एक शर्मीली सुन्दरी की तरह है। यदि अक्लमदी, शराफत और प्यार की भावना से इनकी ओर देखो, तो ये खुशी देते है। वास्तव मे एक महान् चित्र की पहचान यह है कि सुशील स्त्री की तरह, हम दिन-पर-दिन, इसकी ज्यादा कद्र करते है, और इसे देखते हुए ऊबते नहीं। इसी तरह कागडा-चित्रो को बार-बार देखने को जी चाहता है, और जब देखो कोई नई छिपी हुई सुन्दरता ही इनमे मिलती है।

कागडा चित्रो की सुन्दरता के बारे इस अफसर की नासमझी की ओर बहुत

ध्यान न देते हुए मैं दरिया के किनारे पर उगी हुई घास पर जा बैठा। साँझ की वेला हो चुकी थी, और धीमी-धीमी पवन इठला रही थी।

मै नदी-किनारे एक ऊँची-सी जगह घास पर बैठा डूबते सूरज के लपटो की तरह दहकते जोबन का आनन्द ले रहा था। देखते-ही-देखते अँधेरे ने पहाड़ो को अपनी काली चादर मे लपेट लिया, और चारों ओर एक खामोशी का राज्य छा गया। फिर धीरे-धीरे पर्वत की चोटी के पीछे से उजाला-सा हुआ, और एक ऊँची चोटी पर चन्द्रमा की फाँक दिखाई दी। आकाश मे असख्य तारे आँखमिचौनी खेल रहे थे, और तारो में चाँद ऐसा लग रहा था जैसे गोपियों मे कान्हा हो।

एक ओर से बाँसुरी की आवाज़ आई; इतनी मनमोहिनी कि दिल की तहो तक उतर गई। ठहरी हुई रात और पहाड़ो की शान्ति मे कितनी प्यारी लगती है बाँसुरी की आवाज! इसमें अवश्य कोई जादू है। यदि जादू न होता तो इसे सुनकर गोपियो को सुध-बुध क्यो भूल जाती? यह है वह ईश्वरीय स्वर, जिसको सुनकर उसके बन्दे उस छिपी हुई शक्ति का अनुभव करते है, जो सर्वव्यापी है और जल, थल, वन, पर्वत और बनस्पति मे समा रही है। बाँसुरी ने खूब समाँ बाँधा। अब भी जब मैं डेहरा गोपीपुर के बारे मे सोचता हूँ तो दरिया की लहरें, जो चाँद की चाँदनी मे झिलमिला रही थी, मेरी आँखो के सामने आ जाती है और कानो मे सुनाई पडती है बाँसुरी की जादूभरी आवाज।

बाँसुरी की इस सुरीली आवाज का आनन्द लेता हुआ मैं चारपाई पर लेट गया। बाँसुरी की आवाज मुझे अब भी सुनाई दे रही थी, और इसे सुनते-सुनते न जाने मैं कब गहरी नींद में सो गया।

डाडा सिब्बा

टन, टन, टन घंटियों की आवाज आई और मेरी आँख खुल गई। अभी मुँह-अँधेरा ही था, और किसान बैलों को हल में जोतकर हाँकते हुए, खेतों की ओर ले जा रहे थे। भोर का तारा सामने पहाड़ की चोटी पर चमक रहा था, और उसके इर्द-गिर्द धीमी-धीमी रोशनी का दायरा था, जो ऐसा लगता था जैसे नक्षत्र-परिवार हो। मैं उठकर नदी-तट पर गया। बर्फानी पहाड़ों से ठंडी हवा के झोंके आ रहे थे, जिससे कँपकँपी छिड़ गई। कूंजों की एक पंक्ति मैदानों की ओर उड़ी जा रही थी, और उनकी आवाज बड़ी भारी लगती थी। खेतों की ओर से सारसों की आवाज आई, जैसे आँरगन बज रहा हो। कितनी शुभ है सारसों की आवाज! यह है सच्चे प्रेमियों की आवाज जो आयुपर्यन्त इकट्ठे रहते हैं और कभी भी एक-दूसरे से अलग नहीं होते। पुंगरने की ऋतु थी। हवा गन्नों के फूलों की महक से भरपूर थी। धीरे-धीरे सूरज निकला, और उसकी किरणों ने पीपल की कोंपलों पर सोने का झोल चढ़ा दिया। घास पर शबनम के मोती, सूरज की रोशनी में दमक-दमक पड़ते थे। व्यास नदी, सफेद पत्थरों में घिरी, बड़ी शान्ति से मैदानों की ओर जा रही थी, और किनारे पर टटीरियाँ और चहे कल्लोल कर रहे थे।

प्रातःकाल के दृश्य का आनन्द लेकर मैंने अपने साथियों को जगाया। इकबाल ने झट-पट सामान बाँध चाय और उबले हुए अंडे सबको बाँटे। रसीलसिंह ने फुरती से कार में सामान लादा, और हम तैयार होकर अगली मंजिल के बारे में सोचते हुए, नदी की ओर चल पड़े। जब उतराई खत्म हुई तो कार में बैठ गए। हम नौकाओं के पुल पर से नदी पार कर रहे थे, तो दो मंत्रियों से अचानक भेंट हुई। एक के माथे पर रोली का टीका था, जिसमें चावलों के सफेद दाने जड़े हुए थे। दूसरे के माथे का साइन बोर्ड और भी खूबसूरती से सजा हुआ था मंत्री-परिषद् के डाँवाडोल होने के कारण इनके हृदयों में ज्वालामुखी की देवी के प्रति श्रद्धा और भी बढ़ गई थी, जो आखिरकार काम नहीं आई। इन दोनों महानुभावों की ज्योतिषियों में भी विशेष श्रद्धा थी और कोई भी काम उनसे पूछे बिना नहीं करते थे। इसमें इन बेचारों का क्या दोष था! कोई भी इन्सान जब दुविधा में पड़ा हो तो आसरा ढूंढता है और ढाढ़स बंधाने के लिए स भविष्य

पूछता है। सयाने ज्योतिषी भी वही है, जो दिल को खुश करने वाला भविष्य ही बतलायें।

हमारी कार अब गोल-गिट्टों और पत्थरो पर से ठक-ठक करती हुई गुजर रही थी, जो नदी-नालो के पाट पर बिखरे हुए होते है। बारह मील लम्बी डाडा-सिब्बा की सड़क के दोनो ओर हरड़ और आमो के घने पेड़ है। इनके अतिरिक्त चौडे-चौडे पत्तों वाले वहेड़े और अर्जुन के वृक्ष अपनी छॉव से यात्रियो का स्वागत कर रहे थे। अखिर हम डाडा खड्ड नामक एक पहाडी नाले पर पहुँचे। यह खड्ड बहुत चौडा है। इसका पाट गोल गिट्टो से भरा हुआ है। हम कुछ देर आम के पेड के नीचे सुस्ताए, जहाँ से डाडा सिब्बा के पुराने महलो का सुन्दर दृश्य देखा जा सकता है। बारहदरी और राजा का महल, जो डाडा नामक गाँव पर पहाड़ की गोद मे बने हुए है, बहुत आकर्षक प्रतीत होते हैं। खड्ड पार करने के बाद हम एक अति रमणीक वन में से गुजरे, जिसमें अमलतास, वहेडा और बाँस के वृक्षो के झुड थे। कोमल बाँसों से ढकी पहाड़ियाँ प्यारी लगती है! बारहदरी, जो किसी समय राजाओ का निवास-स्थान थी, अब ढह-गिर चुकी है। आजकल इसकी छत नही है, और दीवारो के चित्र, जो किसी जमाने मे बडे सुन्दर होगे, अब अधिकतर मिट चुके है। बारहदरी के खँडहर देखकर हम राजा की एक बूढी रिश्तेदार रानी हबरौल से मिले। इसके घर के बरामदे मे कांगडा के कई पुराने चित्र दीवार से लगे हुए थे, जिनके रंग बहुत हल्के पड चुके थे। इससे यह प्रमाणित होता है कि कांगडा के चित्रो के रग तब तक ही बने रह सकते है, जब तक ये बस्तो मे बँधे रहे।

मैंने रानी से पूछा कि मुझमे पहले भी किसी सज्जन ने उनके चित्रो के दर्शन किये हैं? रानी बोली, दो साल हुए एक सिख अफसर आया था और 'वाह गुरुजी का खालसा और वाहि गुरुजी की फतह' वाले सारे चित्र, जिनमे सुन्दर दाढ़ियाँ और सीधी पगड़ियाँ दिखाई गई थी, उसको बहुत पसन्द आए थे। क्योंकि वह समय का हाकिम था और बडे जमीदार हाकिम-इलाका को हमेशा खुश करने की कोशिश करते थे, इसलिए हो सकता है, रानी ने अपनी इच्छा से ही वे चित्र उसको भेट कर दिए हो।

भारत देश खुशामद के लिए प्रसिद्ध है, और खुशामद मुगल-साम्राज्य से ही यहाँ प्रचलित है। मुगलो का प्रसिद्ध कथन है कि जब बादशाह दिन को रात कहे तो लोगों का कर्तव्य है कि कहे, "बादशाह सलामत! तारे बहुत तेजी से चमक रहे हैं।" इससे मुझे रायबरेली की एक घटना भी याद आती है। मैं १९४० मे रायबरेली में डिप्टी कमिश्नर था, और मुझसे पहले डॉक्टर एस० एस० नेहरू, जिनको पौधो पर बिजली से प्रयोग करने का बडा शौक था इस जिले के डिप्टी कमिश्नर थे जब कोई पेट-दर्द की शिकायत लेकर उनसे मिलता वे पानी की

बोतल देते, जिसमें बिजली लगाई हुई होती। बहुत सारे मरीज उनकी जिला-कचहरी के कर्मचारी ही थे, जो हमेशा यही रिपोर्ट देते कि बिजली के पानी ने उन्हे बडा लाभ पहुँचाया है। एक बार डॉक्टर नेहरू ज्वार पर बिजली के पानी का परीक्षण कर रहे थे। जगह छह इंच ही ऊँची हुई थी कि उन्हे चौदह दिनो के लिए कही बाहर जाना पड़ा। जाते समय तहसीलदार बाबर मिर्जा से कहते गए कि ज्वार के पौधो का ध्यान रखे, और प्रतिदिन बिजली का पानी डालता रहे। दसवें दिन माली की लापरवाही के कारण, एक गाय ज्वार का सफाया कर गई। जब तहसीलदार ने शाम को देखा तो बड़ा परेशान हुआ। यह तहसीलदार बड़ा मंजा हुआ प्रशासक था। अगली सुबह ही खेतो मे चार-चार फुट ऊँची ज्वार ले आया, और चरे हुए खेत मे उसको गड़वा दिया। जब डॉक्टर नेहरू वापस आये तो देखा कि ज्वार चार-चार फुट ऊँची हो गई है। उन्होने तहसील-दार से कारण पूछा। वह बोला, "कुछ बिजली के पानी ने काम किया, कुछ हुजूर के इकबाल ने असर किया और ज्वार इतनी ऊँची बढ गई।" इससे प्रकट होता है कि हुजूर का इकबाल इस देश मे बडे चमत्कार कर सकता है। स्वतंत्र भारत मे भी हुजूर का इकबाल अभी तक काम करता है। जब गवर्नर या कमिश्नर किसी गाँव का दौरा करते है तो सफाई करवा-करवाकर लोगो के जीवन का झूठा चित्र प्रस्तुत किया जाता है।

रानी से विदा लेकर हम डाडा सिब्बा के नौजवान राजा से मिले, जो नए ढग के बने मकान में रहता था। सिब्बा की रियासत गुलेर रियासत का एक भाग थी। १४६० मे राजा गुलेर के छोटे भाई स्वर्णचन्द ने खुदमुख्तियार रियासत स्थापित की, जिसको उसके नाम पर सिब्बा कहा जाता है। यह स्थान व्यास के बाएँ तट पर है। जहाँगीर १६२२में कागड़ा जाता हुआ यहाँ से गुजरा था। १८०८ मे गुलेर के राजा भूपसिंह ने सिब्बा को फिर अपनी रियासत मे मिला लिया और १८०९ मे गुलेर और अन्य पहाड़ी रियासतें महाराजा रणजीतसिंह के अधि-कार मे आ गईं। सिब्बा इस कारण बरबाद होने से बच गया, क्योंकि महाराजा रणजीतसिंह के मंत्री राजा ध्यानसिंह ने सिब्बा की दो राजकुमारियो से विवाह कर रखा था। यहाँ के राजा गोविन्दसिंह का १८४५ मे स्वर्गवास हुआ। उसके बाद राजा रामसिंह गद्दी पर बैठा, और सिखो की दूसरी लड़ाई मे उसने इनको यहाँ से बाहर निकाल दिया। १८६५ मे रामसिंह ने डाडा मेंएक मंदिर बनवाया। इस मंदिर मे होशियारपुर के हरियाना नामक कस्बे के कलाकारों के बनाए कुछ भित्तिचित्र हैं। मंदिर में श्रीकृष्ण, शिव तथा दुर्गा की उपासना होती है। भित्ति चित्रो के रंग अभी तक ताजा है। इनमें कई दिलचस्प भी हैं। इन चित्रों में से एक चित्र मे स्त्रियों की तसवीरों को जोड़कर एक हाथी बनाया गया है, जिस पर श्रीकृष्ण राधा के संग सवारी कर रहे हैं। एक और चित्र में श्रीकृष्ण कालिया

नाग का मर्दन कर रहे है । एक अन्य चित्र मे श्रीरामचन्द्र, शिव-धनुष को तोडते हुए दिखाए गए है । एक भित्तिचित्र राजा रामसिंह का भी है । राजा रामसिंह की १८७४ में मृत्यु हुई, पर वह मदिर के कारण आज तक अमर है । सिब्बा का किला, जो अब खाली पडा है, एक खडहर-सा बनता जा रहा है ।

हम डाडा सिब्बा के मदिर के भित्तिचित्र देखकर परिक्रमा में बैठे ही थे कि एक नई ब्याही पहाडी वधू नाक मे नथ डाले सिर पर लाल दुपट्टा ओढ़े, घूँघट काढे मदिर की ओर आई । उसके पीछे उसका पति कोई बीस-एक साल का लडका काली छतरी हाथ मे लिये, बेल-बूटों वाला रेशमी कोट पहने हुए आ रहा था । हरिकृष्ण गोरखा ने, जो कि इस यात्रा मे हमारा साथी था, इस जोडे की फोटो खीचनी चाही । अब देखिए कि गोरखे ने किस चतुराई से उसका चित्र खीचा । पहले तो दोनो को पास खडा कर लिया, और एक फोटो ली । वे दोनो बडे खुश हुए कि मुफ़्त में फोटो बन रही है । फिर उसने स्त्री का घूंघट उठवाया और फोटो खीची । फिर पति परमेश्वर को कुछ फासले पर खडा कर दिया, और एक फोटो खीची । पतिदेव यही समझ रहे थे कि उनकी भी साथ मे फोटो खिच रही है । जब एक के बाद एक, युवती के तीन चार फोटो खीचे जा चुके तो उसका सकोच जाता रहा, और उसने बडे सुन्दर और सजीव फोटो खिचवाए । पहाडिनो की सफल फोटोग्राफी, अगर किसी ने की है तो वह है हरिकृष्ण गोरखा । लम्बा, तडगा और बाँका जवान, हमेशा खिला रहने वाला; चेहरा, तीखे नक्श, और जहाँ जाता है रौनक लगा देता है । मिलनसार इतना कि झट लोगो मे घुल-मिल जाता है । गोरखा की खीची तसवीरो में पहाड़िनो का भोलापन और सौन्दर्य छलक-छलक पड़ता है ।

फोटोग्राफ़ी को कई लोग कला नही मानते । पर जब कैमरा गोरखा के हाथ मे आ जाता है, तो लगता है जैसे किसी प्रसिद्ध कलाकार के हाथ मे तूलिका हो । इसने मानवीय भावनाओं को इस चतुराई से अपनी तसवीरो में उभारा है कि वे जीती-जागती और मुंह से बोलती नजर आती हैं । निश्चय ही यह फोटोग्राफी का वास्तविक कलाकार है ।

सन्ध्या का समय हो चला था, और भूख भी करारी लगी थी । और तो खाने को कुछ न मिला, किन्तु एक हलवाई की दूकान से चाय का गिलास और गर्म-गर्म जलेबियाँ अवश्य प्राप्त हो गईं । मैं जलेबी को मिठाइयो की रानी समझता हूँ । रस से भरी हुई, जीभ पर रखते ही स्वर्ग का झोटा देती है ।

१९३० में, अपने गाँव में शीशम की छाँह-तले कुरसी डालकर, मैं पढा करता था । एक दिन पड़ोसी गाँव बेरछा का एक रावल मुसलमान चरवाहा, पास ही भैंसे चरा रहा था । मुझे देखकर वह निकट आ गया और बोला, "सरदार जी ! आपने सोलह जमातें तो पढ ली अब और भी पढते जाओगे ।"

मैंने उत्तर दिया, "फज्जू ! आजकल नौकरी बडी मुश्किल से मिलती है।"

"सरदार ! गप्पियाँ को देख, उनके दो पटवारी और एक कानूनगो है। क्या तू कानूनगो नही बन सकता ? और नही तो मुच्छलाँ के लड़के की तरह डकों का इन्सपैक्टर ही बन जा !"

मैंने कहा, "अच्छा सोचेंगे !"

'सरदार ! असल बात तो यह है कि तेरे चाचा को चाहिए कि रुपयों की टोकरी भरकर किसी बड़े अफसर को दे आवे। आजकल वसीले के बिना कोई नही पूछता।"

मैंने बात टालते हुए कहा, "फज्जू ! इस तरह की हिम्मत तो मेरी खातिर तू ही कर ! चाचा तो बडा कजूस है।"

"सरदार ! हम तो गरीब आदमी ठहरे। यह तो अमीरों का खेल है। अमीर तो जरूर रोज जलेबियाँ ही खाते होंगे।"

बैसाखी के मेले में हमारे गुरुद्वारा गरना साहिब के सामने दसूहा के हलवाई, मिठाई की दूकानें सजाते और लड्डू और जलेबियों के सजे हुए थाल देखकर जाट उन पर टूट पड़ते। लड्डू, जलेबी के सिवा इनको और किसी मिठाई का नाम तक न मालूम होता ! फज्जू ने भी जलेबियों के थाल इस मेले में ही देखे थे, और उसके विचार में जलेबी खाना ही दुनिया में सबसे बड़ा आनन्द था। इस बारे में मैं फज्जू से पूरी तरह से सहमत हूँ, चाहे नौकरियों के बारे में वह ठीक सलाह न दे सकता हो।

किसान

कांगड़ा की घाटी में जीवन गति, अक्तूबर मास में धान के लहलहाते खेतों की लय, अथवा किसानों के आँगन में मस्ती से झूमते बाँसों से मेल खाती है, और या फिर अनगिनत बर्फ़ानी नदियों की धीमी मीठी चाल से चलती है। लोग प्रकृति के अति निकट रहते हैं, और यहाँ के निवासियों तथा आस-पास के वातावरण में एकसूत्रता दिखाई देता है। इसमें सन्देह नहीं कि किसी देश की जनता का आचरण उसके आस-पास के वातावरण पर निर्भर करता है। यह वातावरण प्राकृतिक भी हो सकता है, सामाजिक भी, तथा धार्मिक भी। कांगड़ा की घाटी में अधिकतर हिन्दू बसते हैं जिनमें शुद्ध हिन्दू संस्कृति के चिह्न पाए जाते हैं। दैनिक जीवन की गतिविधियों के अतिरिक्त कांगड़ावासियों का जीवन यहाँ के विचित्र रीति-रिवाजों के कारण अति मोहक बन जाता है। पहाड़ियों की चोटी पर मन्दिर हैं अथवा राजाओं के पुराने महल और किले। इनसे घाटी का अत्यन्त मनोरम दृश्य निहारा जा सकता है। हिमालय की खुली हवाओं में मन्दिरों के असंख्य झंडे लहराते हैं, जिनके द्वारा कांगड़ा के वासियों की प्रार्थनाएँ मानो आकाश की ओर पहुँचती रहती हैं। नाटी-नाटी पहाड़ियाँ और हरी-भरी उपत्यकाएँ, जिनको बर्फ़ानी नदियाँ आ-आकर सींचती हैं और जो विराट् धौलाधार की अलौकिक छाया में इन लोगों का पालन-पोषण कर रही हैं, जो सच्चाई, सज्जनता, वीरता और साहस के लिए प्रसिद्ध हैं।

यहाँ के लोग वैसे ही बड़े सुन्दर होते हैं, किन्तु उनका सर्व-सामान्य जीवन इस सुन्दरता को और भी आकर्षक बना देता है। मेल-मिलाप में यह लोग हृदय के सरल और प्रसन्नचित्त हैं। वफ़ादारी और लिहाज़दारी, इनके दो और गुण हैं। शहर के रहन-सहन की तड़क-भड़क से अनभिज्ञ होने के कारण कई बार इनकी स्पष्टवादिता किसी को न भाए, पर कांगड़ा के लोग जान-बूझकर किसी का दिल दुखाना पसन्द नहीं करते। इन लोगों में हमारे ग्रामीणों-जैसा अल्हड़पन और सादगी है। इन पर कोई उपकार करे तो बड़े प्रसन्न होते हैं, और यदि अन्याय अथवा कठोरता का व्यवहार करे तो उतने ही अप्रसन्न। एक मीठा बोल जहाँ उन्हें समूचा ख़रीद सकता है वहाँ एक वक्रदृष्टि अथवा कड़वा बोल उन्हें कोसों दूर ले

जा सकता है। किसी कर्मचारी का क्रोधी स्वभाव, चाहे वह अपने काम मे कितना ही निपुण क्यो न हो, लोगो की नजरो मे उसे गिरा देता है। कागडा के निवासी बड़े सकोची और मृदु स्वभाव के होते है। कोई मामूली सकेत ही इन्हे अन्तर रखने के लिए पर्याप्त होता है।

पाकिस्तान से उजडकर आए किसान-जमीदारो मे जब मुसलमानो द्वारा पीछे छोडी हुई भूमि की बाँट हो रही थी, तो मैंने देखा कि कागडा के लोग मैदानो के मित्र किसानो की तरह, लगन और दृढता से अपने अधिकारों की माँग नही कर सकते थे। कोई कटु स्वभाव का अफसर जरा भी फटकारता तो यह झट पीछे हटकर बैठ जाते और निराश होकर पहाडो को लौट जाते। इस अधिकारी वर्ग मे उजड्ड, ऊत किस्म के कई अफसर थे। एक का नाम तो लोगों ने रावण रखा हुआ था। मुझे केवल दो ही ऐसे कागडावासियों का अनुभव है जिन्हें कागडा के प्रतिनिधि कहा जा सकता है। इनमे से एक तो सलिआना का परमेश्वरीदास था, जो बड़ी बुद्धिमानी से अपनी ही नही, दूसरे मेजबानों की भी पैरवी करता। दूसरा, नूरपुर का एक किसान था, जिसने अपना नाम वधावा बताया। उसके स्वभाव का नमूना पेश किये बिना मैं नही रह सकता। जालंधर-सचिवालय मे सन्ध्या के समय मैं शरणार्थियो की जमीनो की अलाटमेट के सम्बन्ध में शिकायतें सुन रहा था। क्या देखता हूँ कि एक छितरी हुई खशखशी दाढी और झुर्रियों-भरे चेहरे वाला बूढा-सा आदमी चिक उठाकर अन्दर आ रहा है। मैंने पूछा, "बाबा क्या बात है ?"

"बात क्या है। मुझे जमीन गाँव से पन्द्रह कोस दूर अलाट कर दी गई है। बूढा फकीर, वहाँ तो चार आदमी अर्थी उठाने के लिए भी नही मिलते।"

मैंने कहा, "बाबा ! काम मुश्किल है, पर देखते है, तेरे गाँव के नजदीक कोई जमीन खाली भी है या नही।"

वह बोला, "पता नही जमीन अलाट करने की स्कीम बनाने वाला है कौन ? हस्पतालो मे पैदा होने वाले, होटलो मे रहने वाले क्या जानें कि गाँव के भाईचारे जात-बिरादरी, एक-दूसरे का दु ख-सुख मिल-बाँटने का मतलब क्या होना है ?"

मुझे हँसी आ गई। मैंने कहा, "बाबा अफसरो के बारे मे ऐसी बातें नही की जाती।

बूढे ने उत्तर दिया, 'मोतियाँ वाले। मेरी बात का गुस्सा न करना, तू गाँवो का रहने वाला है सारी बात समझता है। और हाँ, तेरा नाम है रधावा और मेरा है वधावा, मेरा काम तो तुझे करना ही होगा।"

मुझे बूढे की खरी-खरी बात पर बडी हँसी आई और झट पटवारियो को बुला, जमीन का पता लगाकर, वधावा को अलाट कर दी।

जब तक कांगड़ावासियों को बुलाकर सान्त्वना न दी जाय, वे बात करते झिझकते है। प्राय: यह लोग शंकालु होते है, और बाहर वालों का भरोसा नही करते। बाहर वालो के सामने ज्यादा खुलते भी नहीं और जहाँ तक बन पड़े किसी नए अफसर के पास तक नहीं जाते, जब तक उसके स्वभाव की उन्हें अच्छी तरह जानकारी न हो जाय और जब एक बार खुल जाते है, तो इनकी कोई सीमा नही होती। शुरू-शुरू मे ये जितनी झिझक से काम लेते हैं, बाद मे वे उतने ही आदर और स्नेह का परिचय देते है। ये लोग प्यार करने वाले और स्वभाव के मीठे है। मुकदमेबाजी की, इनको लत-सी पड़ गई है। छोटी-छोटी बात के लिए कचहरी जा चढते है। इनकी विशेषता इनका सच्चा, साफ-सुथरा जीवन है। झूठी गवाही, ये शायद ही कभी देते है। सच्ची बात छिपाते नही। अपने दैनिक व्यवहार मे भी ये लोग इसी ईमानदारी से काम लेते है। इकरारनामे, बहुत कम लिखित रूप मे लाए जाते है। प्राय: दूसरे की जबान पर किसी संकोच के बिना, विश्वास कर लिया जाता है।

सचाई के इस गुण के साथ-साथ ये बड़े ईमानदार है और अपने स्वामी के लिए इनके दिल में बड़ा दर्द होता है। छोटी-मोटी चोरियाँ, चाहे पहाड़ी इलाकों मे कभी-कभार हो जाती है, पर यह जुर्म अति निम्नवर्ग के श्रमिक कामगरों आदि तक ही सीमित होते हैं। सिख-साम्राज्य के दिनों मे सिख सरदार भी पहाड़ी लोगों की ईमानदारी की कद्र करते थे और वे केवल इन्हीं लोगों को दायित्व के पदों पर नियुक्त करते थे।

नौकरी में सदा सावधानी बरतते है और मालिक की बचत करते हैं। कोई लोभ इनको विचलित नही कर सकता, केवल अपने धर्म की कमाई लेकर घर लौटते है

अन्य पर्वतीयों के समान ये अपने प्रादेशिक पर्वतों के बड़े रसिक है और नीचे मैदानों मे आकर नौकरी करना कम ही पसन्द करते है। इनमे ऐसे विरले ही होंगे जो मैदानो की गर्मी सहन कर सकें।

ये मेलों के बड़े शौकीन है। गाना बजाना पसन्द करते हैं। चैत-बैशाख के महीनों मे मेले-दगलों का खूब जोर होता है। मेलों मे स्त्रियाँ सज-धजकर आती है और उनकी रंग-बिरंगी पोशाकें, कांगड़ा घाटी का मानो शृङ्गार कर देती हैं। कई मेलो मे स्त्रियां ऊँचे टीलों पर बैठती है और पुरुष नीचे कानों पर हाथ रख-कर लम्बी-लम्बी तानें लेकर गाते है। अब भैंसे और बैर मारने की प्रथा नही रही, लेकिन कुछ वर्ष पहले तक यह प्रचलित थी। छोटे बच्चे पोपनियां बजाकर, लड्डू-पेड़े खाकर बहुत खुश होते थे, और स्त्रियां कपड़े-लत्ते पहन, चूड़ियाँ, कंघे, दर्पण और ऐसा ही छुट-पुट सामान खरीदकर फूली नही समाती। निश्चय ही कांगड़ा के मेलों में बड़ी रौनक होती है। लोगो के हँसते चेहरे देखकर ऐसा लगता है

मानो प्रसन्नता का सागर ठाठें मार रहा हो।

कांगड़ावासी वहमी और अन्धविश्वासी भी हैं, और जादू-टोनो मे इनका बड़ा विश्वास है। अगर कोई साधारण-सी घटना भी हो जाय, किसी की मृत्यु हो जाय, किसी की भैंस का दूध सूख जाय: ये सोचते है कि किसी शत्रु ने टोना कर दिया है। बच्चों को बुरी नजर से बचाने के लिए, उनके माथो पर कालिख लगा देते है। अगर कोई नया मकान बनवाते है तो उसके सामने लाल जीभ लगाकर काली हांडी लटका देते है और इस तरह नजरबट्टू-सा बनाकर कुदृष्टि का निवारण करते हैं। कुछ गावो के लोग डायनो और चुड़ैलो मे भी विश्वास रखते है। निसन्तान विधवा स्त्रियो को बहुत मनहूस माना जाता है और यदि राह चलते या किसी शुभ-कारज मे वे सामने मिल जायँ तो समझ लिया जाता है कि काम बिगड़कर रहेगा। चाहे मामूली से काम के लिए बाहर जाना हो, पडित से जरूर पूछ लेते हैं कि मुहूर्त ठीक है या नहीं। वे ज्योतिषियो, प्रश्न-फल बताने वालों मे अब भी बड़ा विश्वास रखते है।

देवी मे भी इनकी बड़ी आस्था है और पहाड़ों की बहुत-सी चोटियो पर दुर्गा के मन्दिर बने हुए हैं। ज्वालामुखी भी देवी का ही रूप है। दुर्गा ने दैत्यो का किस प्रकार सहार किया इसकी कथा सुनाई जाती है और इस प्रकार लोगो मे शौर्य भावना का सचार किया जाता है।

विज्ञान के नए विचारों तथा पुराने विश्वासों का द्वन्द्व आजकल पूरे भारत मे हो रहा है और पर्वत भी इससे अछूते नही रह सके हैं। वे लोग जो नए ढग से रहते है यद्यपि वे रेडियो बजाते है और बिजली का उपयोग करते हैं तथापि पुराने विचारों से पूरी तरह मुक्त नही हो पाए है। मुझे याद है कि जब हम सुकेत नरेश से मिलने उनके घर सुन्दरनगर गए तो उसका राजकुमार, अपनी देवी का मंदिर भी दिखाने हमारे साथ गया।

क्या देखते हैं कि देवी के मन्दिर के साथ एक गुसलखाना है जिसमे पश्चिमी ढग का नहाने का टब रखा है, और पास ही लकड़ी की खड़ाऊँ साबुन और तौलिया राजकुमार ने बताया कि इसमें देवी स्नान करती है और प्रात काल तौलिया गीला हुआ मिलता है। इस प्रकार की घटना वृन्दावन मे भी देखी। वहाँ एक वाटिका है जहा कहा जाता है कि कृष्ण जी ने गोपियो के सग रास रचाई थी। पडे ने बताया कि रात को जब वाटिका तथा मन्दिर के कपाट बन्द कर दिए जाते है तो लड्डू और एक दातुन मन्दिर के सामने रख देते है। रात को कृष्णजी प्रकट होते हैं और प्रायः दातुन की हुई पाई जाती है और लड्डुओ का चूर-मूर मिलता है और यदि कोई वाटिका मे रह जाय और उसे भगवान के दर्शन हो जायँ तो उसका अन्त हो जाता है वहाँ हम एक सिख साधु मिला जिसने बताया कि वह

उसे तो कुछ दिखाई नहीं दिया।

कांगड़ा के राजपूत अपने-आपको राजाओं के वंश में से समझते हैं। उनके पूर्वजों में ठाकुर और राजा हुआ करते थे, जो किसी जमाने में छोटी-मोटी रियासतों में राज्य किया करते थे। मध्यकालीन योरप की तरह इनके दो ही काम हुआ करते थे—प्रेम और युद्ध। किन्तु कांगड़ावासियों का प्रेम उनके पति-पत्नी के प्रेम में अभिव्यक्त होता था और सेना में भर्ती होकर ये अपने लड़ाकू स्वभाव की तृप्ति कर लेते हैं। पहले जमाने में ये लोग राजाओं की फौज में भरती होते थे, आजकल भारत की राष्ट्रीय सेना में भरती होते हैं।

जो लोग कांगड़ा से परिचित हैं, वे राजपूतों के घरों को एकदम पहचान सकते हैं, इनके घर प्रायः अलग-अलग-सी जगह पर बने होते हैं। किसी पहाड़ी की चोटी पर, जहाँ दोनों ओर से सुरक्षा का प्रबन्ध किया हुआ होता है। या फिर किसी जंगल के ऐसे भाग में रहते हैं जहाँ इनको कोई बढ़िया ओट मिल सके। जहाँ प्राकृतिक ओट न हो वहाँ ये लोग पेड़ उगाकर परदे का प्रबन्ध कर लेते हैं। इनके घरों के सामने कोई पचास कदमों की दूरी पर एक ड्योढ़ी होती है जिसके आगे पराया आदमी नहीं आ सकता। यहाँ तक भी ऊँची जाति के खानदानी लोग ही आ सकते हैं। मिस्टर बार्नेज ने इस अलगाव और परदे की एक विचित्र कहानी का उल्लेख किया है। मंडी के एक क्षेत्र में कटोचों के एक घर में दिन दहाड़े आग लग गई। घर के पास कोई ऐसा जंगल नहीं था जिसमें औरतें भागकर छिप सकतीं। इस प्रकार घर की स्त्रियाँ घर में बन्द-की-बन्द जल गईं। पर बाहर आकर उन्होंने अपनी बेपरदगी नहीं होने दी।

लड़कियाँ माँ-बाप से मिलने के लिए भी पालकियों में बैठकर आती हैं। जो बहुत गरीब होती हैं वे अधिकतर रात को सफर करती हैं और उन मार्गों में से होकर जाती हैं जो अज्ञात हों या फिर जंगलों और खड्डों में से होकर जाते हों।

राजपूत लोगों ने अपने-आपको दो श्रेणियों में बाँटा हुआ है। ऊँची श्रेणी के लोग मियाँ कहलाते हैं। ये लोग बाईस राजाओं में से हैं। इन सबका, कोई-न-कोई पूर्वज उत्तर भारत में, किसी-न-किसी स्थान पर, कभी-न-कभी राज्य करता था। निचली श्रेणी के लोग ठाकुर कहलाते हैं। इनकी बेटियाँ मियाँ राजपूतों से ब्याही जाती हैं, किन्तु उनके लड़के स्वयं राठियों की लड़कियों को ब्याहते हैं। एक मियाँ अपनी आन और नाम को बनाए रखने के लिए चार बातों का विशेष ध्यान रखता है, वह कभी हल नहीं चलाता, अपनी बेटी का नीची जाति में विवाह नहीं करता, स्वयं अपने पद से बहुत नीचे वाले में शादी नहीं करता। अपनी बेटी के रिश्ते के लिए धन नहीं लेता, और उसके घर में स्त्रियाँ सख्त पर्दा करती हैं। हल चलाने के विरुद्ध इनकी भावना कदाचित् अत्यन्त बलवती है। अगर कोई हल चलाना शुरू कर दे तो वह एकदम अपने पद से गिर जाता था और निम्न वर्ग

का राजपूत गिना जाने लगता था। कोई मियाँ अपनी पुत्री का ब्याह उससे न करता और उसे नीची जातियों में से लडकी ढूँढनी पड़ती। जीवन के प्रत्येक क्षेत्र मे उसका तिरस्कार किया जाता। पारिवारिक समारोहों तथा विवाहों मे ऊँचे पद के राजपूत ऐसे आदमी के साथ मिलकर बैठना और भोजन करना पसन्द नही करते थे। उसको हल चलानेवाला कहकर लज्जित किया जाता और कुछ लोग इस हेठी से बचने के लिए कभी किसी समारोह में न जाते। कृषि के विरुद्ध यह भावना उतनी ही पुरानी है जितना हिन्दू धर्म। कुछ लोग कहते है कि धरती माता को हल से घायल करना घोर पाप है। कुछ का यह विचार है कि पाप इस बात में है कि हल चलाने का काम गऊ माता के जायों से लेते है। मिस्टर बार्नज, जो उन्नीसवीं सदी के अन्त मे भारत आया लिखता है—

"बड़े खेद की बात है कि राजपूत अपनी मध्ययुगीन जीवन की परिपाटी से अभी तक चिपटे हुए हैं। उनके बुझे-बुझे चेहरों और बडे मामूली घटिया किस्म के कपड़ों से पता चलता है कि ये लोग अपनी गले-पड़ी सादगी और बडाई को कायम रखते हुए कितने पिछड़ गए हैं। पहाड़ी क्षेत्र मे अभी तक परती पड़ी धरती पर जो लोग कड़ी मेहनत करते है, वे तो रोटी कमा लेते है, पर राजपूतों में से अगर कोई हल पकड़ता है तो उसे बिरादरी मे से बाहर कर दिया जाता है। इस-लिए ये लोग चाहे दूसरे लाख धन्धे कर लें खेती-बाड़ी नही करते। इनमे से कई, पहाड़ियों की चोटियों पर बाज पकड़ने के लिए जाल बिछाए रहते हैं। कई-कई दिन खाली गुज़र जाते हैं। और ये लोग बेर खाकर अथवा शिकार पर निर्वाह करते हैं। और जब कोई बाज फँसता है तो उसको नीचे भेज देते है जहाँ उसे सिधाया जाता है और फिर बेच दिया जाता है।"

प्राय. राजपूत बेकार रहते हैं। अधिकतर वे बाज का शिकार करते हैं। यदि साधन-सम्पन्न हों तो बन्दूक लेकर बाहर निकलते हैं। एक राजपूत झाडियों को झकझोरता है और दूसरा बाज थामे हुए इस बात की प्रतीक्षा में रहता है कि जब कोई पक्षी उड़े तो बाज को वह उसके पीछे छोड़ दे। इस प्रकार किये हुए शिकार से शाम के भोजन का काम चला लेते हैं। जिनके पास बन्दूक होती है वे जगली सुअर का शिकार करते हैं और शिकार को बेचकर अपना निर्वाह करते हैं, पर जो कुछ मिस्टर बार्नज ने लिखा है, आजकल सत्य नही और राजपूत भी बाकी लोगो की तरह खेती और अन्य कामों मे दिलचस्पी लेने लग गए है।

राजपूत लोग बड़े उदार और अतिथि-सत्कार करने वाले होते हैं। उनके घर मे प्राय कई नौकर होते हैं—जिनके पास करने के लिए कोई विशेष काम नही होता। कई निर्धन सम्बन्धी भी आकर वर्षों तक टिके रहते है और घर के स्वामी को लूट-खसूटकर खाते रहते हैं ब्याह-शादियों में रुपया पानी की तरह बहाया

आतिशबाजी छोड़ी जाती है। पिछले वक्तों में मुजरे भी कराए जाते थे। आजकल ये रिवाज लगभग समाप्त हो चुका है। इसके दो कारण है, एक तो इन लोगों की धार्मिक अभिरुचि, दूसरा इन लोगों की निर्धनता। राजपूत लोग मांसभक्षी है और इनकी स्त्रियाँ भी मांस खाती है। ब्याह-शादियों में लोग पंक्तिबद्ध होकर बैठते है और इस प्रकार बैठते हुए रुतबे और हैसियत का खयाल रखा जाता है। कई बार इसी दर्जे को लेकर आपस में झगड़ा खड़ा हो जाता है और कई समारोहों का रंग-भंग हो जाता है।

राजपूत लोग सुन्दर होते है। रंग प्रायः गोरा होता है; नयन-नक्श कोमल मानो सांचे में ढले हो। राजपूत हाथ का काम नहीं करते। बहुत थोड़े लोग खेती-बाड़ी करते है। जिन्होंने दरिद्रता से तंग आकर खेती-बाड़ी शुरू कर दी है वे भी बहुत सम्पन्न नहीं है।

क्योंकि राजपूत स्त्रियाँ पर्दे में रहती है इसलिए वे अपने पुरुषों को कोई सहायता नहीं दे सकतीं। उनमें बहुत-सी तो बावली से पानी तक भरकर नहीं लाती। एक राजपूत स्त्री के घर का काम भी अन्य स्त्रियों के समान ही होता है। वे चक्की पीसती, खाना बनाती, चर्खा कातती और उपले पाथती है। पर क्योंकि राजपूत स्त्री पर्दे में रहती है वह खेती-बाड़ी के काम में पुरुष की सहायता नहीं कर सकती और न ही राठणी घिरतणी की तरह घर से बाहर कोई और परिश्रम कर सकती है। खेती-बाड़ी की दृष्टि से राजपूत स्त्रियाँ धरती पर एक व्यर्थ बोझ के समान ही है। एक बन्दोबस्त के अफसर ने ठीक ही कहा था, "राजपूत छत्ता एक अजीब मस्था है, इसमें काम करने वाले तो थोड़े हैं, खाने वाले और आराम करने वाले बहुत होते है।" मैदानों में ब्राह्मण और राजपूत स्त्रियाँ मांस के नाम से घबराती है पर पहाड़ी इलाकों में विधवाओं को छोड़कर सब स्त्रियाँ मांस खाती है। ऊँचे खानदान की पर्दे में रहने वाली स्त्रियों को छोड़कर कांगड़ा की सभी औरतें दुःख-सुख मे शरीक होती है और मेलों-उत्सवों में आती-जाती है। इनका पहरावा सादा किन्तु सुन्दर होता है उनका आभूषण बालू या बेसर होता है। बेसर केवल विवाहित स्त्रियाँ ही पहनती हैं।

प्रायः राजपूत सेना अथवा नागरिक विभाग के कार्यालयों में नौकरी करते है और अपने घर पैसे भेजते रहते है। खेती के नये कानूनों ने, जिनके अनुसार जमीन हल चलाने वालों की अपनी हो जाती है, राजपूतों को झकझोड़कर जगा दिया है और ये लोग अपनी पुरानी मान्यताओं को छोड़ते हुए खेती-बाड़ी का धंधा शुरू कर रहे हैं।

इस इलाके में कोई एक लाख ब्राह्मण हैं और ये लोग कुल जनसंख्या का सातवाँ भाग हैं, सब-के-सब ब्राह्मण अपने-आपको सारस्वत ब्राह्मण बताते है? और इनकी कई जाति उपजातियाँ बन गई है। एक बड़ा अन्तर ब्राह्मणों में यह है

कि उनकी एक श्रेणी हल चलाती है और दूसरी बिलकुल नहीं चलाती। हल चलाने वाले ब्राह्मण को निम्नकोटि का समझा जाता है। पहाडी ब्राह्मण मैदानी ब्राह्मणो के साथ उठते-बैठते नही और न एक-दूसरे के हाथ का पका हुआ खाते है। पहाडी ब्राह्मण तथा उनकी स्त्रियाँ भी मास खाती है किन्तु मैदानी ब्राह्मण इसका नाम तक नही लेते। औरगजेब के राज्य मे जब हिन्दुओं पर बडे अत्याचार होते थे और बेचारे हिन्दुओं को जबरदस्ती मुसलमान बनाया जा रहा था तो बहुत-से हिन्दू अपना धर्म बचाने के लिए पहाडो मे आवाद हो गए। गद्दी लोग भी उन्ही दिनो लाहौर से आये थे। कश्मीरी ब्राह्मण भी औरंगजेब के काल मे ही कागडा आये थे। तथा गुलेर, कोट कागडा अगल-बगल के ग्रामो मे बस गये।

राठी और घिरत कागडा घाटी के किसान है। खेती वाडी का सारा बोझ इनके सिर पर है। राठी पालमपुर तथा हमीरपुर की तहसीलो मे ज्यादा है। जो हैसियत पूरब मे कैवर्तो की है, वही स्थान कागडा के किसानो मे राठियो और घिरतो का है। जहाँ-जहाँ भी भूमि समतल और उपजाऊ है, वहाँ घिरत बसते है, और पहाडों की ढलानों पर जहाँ परिश्रम अधिक करना पडता है और उपज कम होती है, वहाँ प्रायः राठी बसते है। जिस प्रकार कोई राठी कभी पहाडियो के आंचल मे खेतो मे नही मिलेगा उसी तरह कोई घिरत पहाडियों के ढलानो पर दिखाई नही देगा। दोनो जातियाँ अलग-अलग बसने के कारण और अलग-अलग क्षेत्रों मे वास करने के कारण आकृति और आचरण मे भिन्न-भिन्न हो गई है।

राठी प्राय स्वस्थ और सुन्दर होते है। उनका रग गोरा और उनके पुट्ठे अच्छे गठे हुए होते हैं। उनके अच्छे स्वास्थ्य का कारण उनका कडा परिश्रम है, जो उन्हे अपना निर्वाह करने के लिए करना पडता है। इनके विपरीत घिरत काले होते है। उनका कद नाटा होता है और शरीर कमजोर दुबला-पतला सा। गिल्लड (घेघा) की बीमारी प्राय इनमें पाई जाती है। जिससे ऐसा लगता है कि चाहे धरती लाख उपजाऊ हो, चाहे देश विपुल संपदा-सम्पन्न हो, किन्तु यह आवश्यक नही कि लोगों का स्वास्थ्य भी अच्छा रहे। राठी पहाड़ियो मे सबसे भले लोग माने जाते है। यह नम्र और शान्त स्वभाव के होते है और अपनी खेती-वाडी के काम मे लगे रहते हैं। आवश्यकता पड़ने पर हथियारो का उपयोग भी कर लेते है। राठी, ईमानदार, मेहनती और वफादार भी है।

घिरत मर्द प्राय, कद के नाटे है और अधिकतर गिल्लड़ रोग से पीड़ित होते है। गिल्लड़ (घेघा) स्त्रियो को भी हो जाता है। इन लोगो के नक्श तातार कबीलो के नयन-नक्शो से मिलते-जुलते है। घिरतो मे कोई विरली ही सुन्दरी दिखाई देती है। चाहे कुछ लोग जवान औरतो को सुन्दर कहकर खुश हो लें। यह लोग परिश्रमी कृषक हैं।

घिरतों की जातियाँ अनगिनत होती हैं जिला होशियारपुर मे तहसील दसुहा

के मुकेरियाँ स्थान के घिरत 'चाँग' कहलाते हैं ऊना तहसील के घिरत बाहरी कहे जाते हैं। ये लोग स्वयं को दक्षिण से आए हुए बतलाते हैं। जिस देवता को यह विवाह-शादियों के अवसर पर पूजते हैं, वह हाथ जोड़े दक्षिण की ओर देख रहा होता है। ये लोग नाग के उपासक हैं और हर मोहल्ले में इन्होंने अपना पूजा-स्थान बनाया होता है। हर वर्ष श्रावण की पंचमी को नाग-देवता की विशेष पूजा की जाती है।

घिरत, अधिकतर पालम, कांगड़ा और रेहलू की घाटी में मिलते हैं। हलदून और हरिपुर की घाटी में भी बसे हुए हैं। इनकी जमीनें आम तौर पर सबसे ज्यादा उपजाऊ और सपाट होती हैं। घिरतों की स्त्रियाँ खुले-मुँह खेतों में काम करती हैं और उनके मर्द मजदूरी करके पैसे कमाते हैं। घिरत अनथक परिश्रमी हैं। इनके उपजाऊ खेतों में वर्ष में दो बार फसल होती है और सारे-का-सारा साल वे खेती-बाड़ी के किसी-न-किसी धंधे में लगे रहते हैं। जब बरसात का मौसम होता है तब ये धान बोते हैं। धान बोने के लिए कम-से-कम एक फुट गहरे कीचड़ में काम करना पड़ता है। इस काम में महिलाएँ अधिक योग देती हैं। सारा-सारा दिन वे अपने लहंगों को ऊपर खोंसकर घुटने-घुटने पानी में खड़ी रहती हैं। धान की खेती बड़ी मेहनत माँगती है। जब फसल तैयार हो जाती है, उसके बाद भी घिरत स्त्रियाँ फसल की सार-सँभाल में पूरा-पूरा हाथ बँटाती हैं। अभी यह काम खत्म नहीं होता कि सर्दियों की बुआई शुरू हो जाती है और फिर वही चक्र आरंभ होता है। वैसे सर्दियों की बुआई को इतना कठिन नहीं समझा जाता। खेतों में काम करने के अतिरिक्त घिरत स्त्रियाँ लकड़ी सब्जी, आम और दूध आदि कई सौदों को मंडी में ले जाकर बेचती हैं। इससे पता चलता है कि घिरत लोगों का जीवन कोई सरल जीवन नहीं है, ये लोग बड़े पुरुषार्थी और कठोर परिश्रमी होते हैं, तथा कांगड़ा की खेती का भार उनके कंधों पर है।

चरवाहे

गद्दी लोग धौलीधार की पहाड़ियों के निवासी है। ये लोग प्रायः चरवाहे होते है। कहीं-कहीं पर वे कृषि भी करते हैं। इन लोगों के गाँव, धौलीधार के दोनों ओर कांगड़ा तथा चम्बा मे बसे हुए हैं। इनकी इस निवास-स्थली को गधेरन कहा जाता है। इनके घर साफ-सुथरे और दूर से देखने पर बड़े सुन्दर लगते है। दीवारों पर गाचनी का लेप इनकी प्रमुख विशेषता है। ये लोग प्रायः ४००० से लेकर ८००० फुट की ऊँचाई तक रहते है। इनके रेवड़ पहाड़ों की उचानों पर भी चरते है और आवश्यकता पड़ने पर निचानों मे भी चले जाते है।

धौलीधार की दक्षिणी भुजा, जो कांगड़ा घाटी की ओर उन्मुख है, एकदम सीधी खड़ी है। यहाँ इस पर्वत के आंचल-चरणों मे चीड़ और बान के वन हैं। ऊँची चोटियाँ प्रायः खाली-खाली और बर्फ से ढकी रहती है। जो ऊँची चोटियाँ वास्तव मे एकदम तीखी नोकदार होती है, उन पर बर्फ टिक ही नही सकती। धौलीधार की उत्तरी भुजा, जो चम्बा घाटी की ओर उन्मुख है, घास और फूलों से भरपूर है। इस ओर पहाड़ धीरे-धीरे ढलता हुआ रावी नदी के तट तक पहुँच जाता है। यहाँ चम्बा के गद्दी बसते है। इन ढलानों पर बुराँस के लाल फूलों की झाड़ियाँ दिखाई देती है और सतरंगी पींग आकाश और पर्वत का मिलन कराती प्रतीत होती है। इस-जैसी सुन्दर धरती पर इन-जैसे सुन्दर लोग किसका मन नही मोह लेंगे?

गद्दी किसान और चरवाहे चाहे चम्बावासी हों, चाहे कांगड़ावासी; दोनों ही घुमक्कड़ रहते हैं। इनमें से अधिकांश के दो घर होते है, एक पर्वत की उत्तरी ढलान पर और एक पहाड़ की दक्षिणी ढलान पर। एक घर से दूसरे घर की ओर वे प्रायः आते-जाते रहते है। यह आना-जाना केवल उन दिनों मे बन्द होता है, जब धौलीधार के ऊँचे दर्रे बर्फ से ढक जाते हैं। एक ओर के गद्दियों के विवाह-सम्बन्ध प्रायः दूसरी ओर के गद्दियों से होते रहते है। एक गीत मे एक गद्दन, चम्बा की ओर अपने श्वसुर के घर रहती हुई अपने बाबुल को याद करती है—जो कांगड़ा की ओर रहता है। इस गीत मे माँ-बाप से बिछुड़ी यह लड़की पर्वत-शिखर से विनती करती है कि वह झुक जाय ताकि यह अपने बाबुल के घर को एक नजर

देख सके। ये विचित्र प्रकार के लोग, जो शेष पहाड़ियों से अलग प्रतीत होते है, पंजाबियों को यह सुनकर हैरानी होगी कि मूल रूप मे पंजाबी हैं, जो कुछ शताब्दी पूर्व वहाँ से उजड़कर पहाड़ों की ओर चले आए थे। गद्दी से अभिप्राय है कि जो सब जातियों से विकसित हुए हों। ये लोग मूल रूप में ब्राह्मण, क्षत्रिय, राजपूत और हरिजन हैं। पर अधिकतर इनमें क्षत्रिय ही हैं। इनमें पंजाब के क्षत्रियों की जातियाँ भी आम होती हैं। धौलीधार ने उन तमाम लोगों को शरण दी, जो अपने समय के शासकों की क्रूरता से भयभीत होकर उसकी ओर भाग आए। प्राय. यह माना जाता है कि गद्दी लोग औरंगजेब के काल में, लाहौर से उन दिनों उजड़कर आये, जब औरंगजेब हिन्दुओं को बलात् मुसलमान बना रहा था। इन लोगों ने सोचा कि इस्लाम कबूल करने से यह अच्छा है कि अपना घर-बार छोड़कर धौलीधार के शैल-शृंगों मे जा छिपें। गद्दी लोगों ने अपनी सभ्यता को सँभाल-सँभालकर रखा है और नई रोशनी का उन पर अभी तक प्रभाव नहीं हुआ। अपने साधारण जीवन की निजी आवश्यकताएँ ये स्वयं ही पूरी कर लेते है। उनका पहनावा उनका अपना है। उन्होंने अपनी प्रथाओं को, जो पंजाब में अबतक समाप्त हो गई हैं, अभी तक सुरक्षित रखा हुआ है।

ये लोग प्राय. सीधे-सादे और सज्जन होते है। इनकी सचाई पर कभी भी सन्देह नहीं किया जा सकता। सरल इतने हैं कि अंग्रेजी राज्य के आरम्भ में यदि किसी को कांगड़ा के राज्याधिकारियों की ओर से जुर्माना होता तो वह चम्बा के खजाने में भी उतना ही जुरमाना जाकर भर देता, क्योंकि ये लोग घाटियों के निवासी गिने जाते हैं।

वन-विभाग के आदेशों की ओर पहाड़ी लोगों से प्राय. लापरवाही हो जाती है, पर इसके अतिरिक्त ये लोग कभी-कभी जुर्म के दोषी सुनने मे नहीं आते। प्राय: गद्दी हँसमुख और प्रसन्न-चित्त होते हैं और मेले-उत्सवों पर इकट्ठे लुगड़ी पी कर खूब नाचते हैं।

गद्दियों का पहनावा बाकी पहाड़ी लोगों से बिलकुल निराला होता है। ये लोग एक ढीला-सा ऊनी चोगा पहनते हैं, जिसको वे कमर पर काली ऊन की डोरियों से बाँधते हैं। इनके सिर पर एक ऊँची टोपी होती है, जिसको यह सर्दी मे कानों तक खींच लेते हैं। टाँगें ये प्राय: नंगी ही रखते हैं। अपने चोगों में ये हर प्रकार की वस्तुएँ सँभाल लेते हैं, कई बार भेड़ों के नवजात मेमने इनके चोगों में से सिर निकालकर मासूम नजरों से बाहर झाँक रहे होते हैं। चोगों में ये चमड़े के थैलों में अपनी रोटी और आलू आदि लपेटकर रखते हैं। गद्दनों का चोगा पुरुषों के चोगे से भिन्न होता है, जिसको ये मर्दों से कुछ अलग तरीके से पहनती हैं। इनके चोगों पर प्राय: लाल फूल कढ़े हुए होते हैं।

गद्दी लोग अपने पुराने पहनावे को बहुत पसन्द करते हैं, इसलिए उन्होंने

अभी तक अपना पहनावा नही बदला। एक गद्दन लड़की अपने गीत मे कहती है—

"अलचार रानियो को भले ही अच्छी लगे, पर हम पहाड़ियो को अपने ही वस्त्र शोभा देते है।"

गद्दने रंग-बिरंगे रूमालों की बहुत शौकीन है, जिनको ये बड़े चाव से दिखाती फिरती है। गद्दने अपने मर्दों को भी उनके चोगो और टोपियो मे ही देखकर खुश होती है।

गद्दियों के गीत भावनाओ की दृष्टि से पंजाब के पहाड़ी गीतों मे सबसे सुन्दर है। यहाँ के शुद्ध जलवायु ने यहाँ के दूध-दही ने और यहाँ के लोगो के परिश्रमी जीवन-मूल्यों को बहुत सुरुचि प्रदान की है। इनका मुक्त स्वच्छन्द जीवन इनके लोक-गीतों मे झलकता है। बाहर चरागाहो मे प्राय. नौजवान लड़के-लड़कियाँ मिलते है और उनमे प्रेम हो जाना कोई अनहोनी बात नही।

गद्दी लोगो के विवाहों मे लड़के-लड़की की स्वीकृति ली जाती है। यदि लड़की की इच्छा के विरुद्ध किसी अन्य लड़के से उसकी सगाई हो जाय, तो कई बार लड़की अपने-अपने प्रेमी के साथ चली जाती है। ऐसे विवाह झाड-फूँक कहलाते है। ऐसे विवाह पर न किसी पुरोहित की आवश्यकता पड़ती है, न किसी सगे-सम्बन्धी की। झाड़ियों को आग लगाकर लड़का-लड़की आग के चारो ओर आठ बार परिक्रमा करते है, जिसके पश्चात् वे पति-पत्नी बन जाते है।

ब्राह्मणों को छोड़कर, गद्दियो मे विधवाओ के पुनर्विवाह हो जाते हैं। विधवा स्त्री को प्रायः अपने पति के बड़े अथवा छोटे भाई से विवाह करने के लिए प्रेरित किया जाता है, ताकि वह पवित्र जीवन व्यतीत कर सके। जब किसी विधवा का विवाह होना है, तो जोड़े को उनके एक कंबल पर बिठाया जाता है। उनके सामने एक दीपक जल रहा होता है। पानी का कलश होता है, जिस पर पान आदि के पत्ते और दूब रखी होती है आस-पास गूगल की सुगन्धि फैल रही होती है। कलश को कुम्भ कहते हैं। लड़का-लड़की दोनो पूजा करते है। लड़का विधवा के सिर पर चुटीलना रखता है। एक स्त्री उसके बालों में कंघी करती है और उस चुटीलने से उन्हें गूंथ देती है। इसके बाद लड़का-लड़की के हाथ पर नथ रखता है और ब्याहता लड़की नथ को नाक मे डाल लेती है। इसके बाद सगे-सम्बन्धियों और अतिथियों को दावत दी जाती है। इस रस्म के लिए भी किसी पुरोहित की आवश्यकता नही होती।

गद्दियो मे विवाह की साधारण रस्म बहुत लम्बी चलती है। ब्याह से पहले लड़के के शरीर पर उबटन मला जाता है। उसकी दाहिनी कलाई पर तीन काले ऊनी डोरे बाँधे जाते है, ताकि उसे नजर न लग जाय। लाल दुपट्टे मे ढककर उसकी माँ उसे आँगन में ले जाती है, जहाँ उसे नहलाया जाता है। नहलाने के बाद काले डोरे उतार दिए जाते है, और लड़का एक दाकोरे मे सुलगते कोयलों को

अपने पैर से उलट देता है, ताकि अगर कोई बुरी परछाईं आँगन में उस पर पड़ गई हो तो उसका प्रभाव जाता रहे। फिर पुरोहित मौली बाँधता है, जिसको कँगना कहते हैं—इनके साथ ही लड़के को घी और गुड़ खाने को दिया जाता है। इसके बाद लड़के को योगियों के वस्त्र पहनाए जाते हैं। कानों में चार बालियाँ, कमर में धोती और कन्धों पर भिखमंगों-जैसी झोली डाल लेता है। फिर पुरोहित उसके हाथ और पैरों को पानी से धोता है, उसके मुँह पर भी पानी के छींटे मारता है। इस प्रकार लड़के का बदरीनारायण, त्रिलोकीनाथ और मणिमहेश के तीर्थ धामों का स्नान हो चुका समझा जाता है। इसके बाद लड़का अपने सम्बन्धियों से भिक्षा माँगता है। ये लोग उसे रोटी के टुकड़े देते हैं और अपने-अपने बूते के अनुसार उसको भेड़-बकरियाँ आदि देने का वचन देते हैं। फिर लड़के को एक टोकरे में बिठाकर उसके सिर पर सूखी घास रखकर उस पर एक छुरी रखी जाती है। लड़के का मामा सरसों के तेल का एक बरतन थाम लेता है, जिसमें से तेल लेकर लोग लड़के के सिर पर डालते हैं। फिर वह एक बाण लेकर धनुष पर उसको चढ़ाता है और धनुष उठाकर एक मरी हुई बकरी के सिर का निशाना बाँधता है। इसके बाद फिर उसको गुड़ और घी दिया जाता है और अब वह सिर पर एक सफेद पगड़ी बाँध लेता है और सफेद ही कुरता पहनता है। लाल चादर अभी तक उसके पास होती है। लड़के वालों की ओर से लड़की के लिए उपहार, जिनमें कपड़े, कंघी, छुहारे, किशमिश, बाजरा और चावल होते हैं, एक जुलूस की सूरत में लड़के के घर से जाए जाते हैं। लड़के की भाभी लड़के की आँखों में सुरमा डालती है और उसके सिर पर सेहरा बाँधती है। ब्राह्मण पुरोहित एक थाली को, जिसमें ज्योतियाँ जल रही होती हैं, तीन बार लड़के के सिर पर से घुमाता है, लड़के की माँ तीन रोटियाँ, उस पर वारकर तीन दिशाओं में फेंकती है। लड़का फिर आँगन में रखी हुई पालकी में बैठ जाता है, यहाँ बेटे को माँ उसे आराम से चलने को कहती है। पालकी को चार कुम्हार उठाकर लकड़ी के एक खाँते के पास ले जाते हैं। लड़का लड़के की माँ और पुरोहित इसकी पूजा करते हैं। यहाँ एक कलश लड़के के सामने रखा जाता है। लड़का इसमें पैसे डालता है और फिर बारात लड़की के गाँव की ओर चल पड़ती है। बारात में मित्र और सम्बन्धी होते हैं। बारात के आगे नृतकियाँ और ढोल बज रहे होते हैं।

लड़की के गाँव के किसी घर में सुस्ताकर बारात फिर एक पुरोहित के साथ ससुराल वालों के यहाँ विराजती है। लड़की की माँ घर की ड्योढ़ी पर स्वागत करती है, वह जल रही ज्योतियों की थाली को सात बार लड़के के सिर पर से वारती है और आँगन में तीन रोटियाँ फेंकती है। इसके बाद सास चली जाती है और श्वसुर आकर दूल्हे के गले में एक सफेद कपड़ा डालता है। और उसके पाँव पकड़कर उसकी पूजा करता है। ब्राह्मण-पुरोहित जो साथ होते हैं, एक

पत्ते में चावल, अखरोट और फूल आदि रखकर देते हैं और लड़के को सामने बरामदे में ले जाया जाता है, जहाँ उसे लड़की के सामने बिठा दिया जाता है। अब पुरोहित लड़के तथा लड़की को गर्दन से पकड़कर उनके कन्धों को तीन बार आपस में टकराता है। फिर लड़के-लड़की को बेसन दिया जाता है, जिसको वे एक-दूसरे पर उछालते हैं। लड़के-लड़की के दोनों ओर ज्योतियाँ प्रज्ज्वलित हो रही होती हैं। फिर लड़की, लड़के को चमेली की सात टहनियाँ पकड़ाती है। लड़का चमेली की उन कोमल टहनियों को एक-एक करके अपने पाँव-तले कुचल देता है, इस प्रकार लड़के, लड़की की एक-दूसरे से जान-पहचान करवाई जाती है।

इस प्रकार लड़के-लड़की को बिठाकर लड़की का पिता अपनी बेटी को लड़के के हवाले कर देता है, फिर वह लड़की और लड़के के पाँव पड़ता है। इसके बाद गणेश, ब्रह्मा, विष्णु, कुम्भ तथा एक जलती ज्योति की उपासना की जाती है। लड़का, लड़की की चादर पर लाल रंग डालता है, पंडित चार पैसे, अखरोट थोड़ी-सी दूब, फूल तथा कुछ चावल लड़की की अंजुलि में देता है। लड़का अपने हाथ लड़की के हाथों पर रखता है। फिर पुरोहित लड़के का अँगोछा लड़के और लड़की दोनों के हाथों पर लपेट देता है। इसके बाद लड़के को अन्दर ले जाते हैं और दोनों को कामदेव की तस्वीर के सामने बिठाकर लड़की की माता और बहनें उसे कंघी करती हैं। बाल बाहती और साथ-साथ गीत भी गाती जाती हैं।

इसके बाद लड़के के अँगोछे से लड़की की चादर का कोना बाँध दिया जाता है और लड़की को उसका मामा उठाकर एक चबूतरे के नीचे ले जाता है, जहाँ हवन द्वारा ब्याह-संस्कार किया जाता है। यहाँ लड़की का पिता एक बार फिर लड़के-लड़की के पाँव पड़ता है और गणेश, ब्रह्मा, विष्णु, कुम्भ चार ऋषियों तथा चार वेदों आदि की पूजा की जाती है। फिर भुने हुए जौ एक छाज में डाले जाते हैं। लड़का एक मुट्ठी जौ लेकर उनको तीन ढेरियों में रखता है। लड़की का भाई अपने दाएँ हाथ से उन ढेरियों को एकदम गिरा देता है। यह रस्म इसलिए की जाती है कि लड़के-लड़की का यदि कोई पूर्व सम्बन्ध हो तो उसे इस घड़ी के बाद से समाप्त समझा जाए। इसके बाद लड़का और लड़की पवित्र अग्नि के चारों ओर दाएँ से बाएँ चार फेरे लेते हैं। जब लड़का-लड़की फेरे ले रहे होते हैं, पास खड़े स्त्री-पुरुष गाना शुरू कर देते हैं।

जब यह रस्म पूरी हो जाती है, तो लड़का, लड़की को डोली में बिठाकर अपने घर ले जाता है और साथ ही उसका दहेज भी ले जाता है। जब दुल्हन दूल्हे के घर पहुँचती है, तो कई रस्मों और गीतों से उसका स्वागत किया जाता है।

लड़के की माँ नए ब्याहे जोड़े की पूजा करती है। इसके बाद कामदेव की मूर्ति के सामने रखे मिट्टी के दीपक के पास एक पानी का घड़ा, एक चुटीलना और अनार रखे होते हैं। यहाँ पुरोहित लड़की का घूँघट उठाता है और लड़के तथा

लड़की की कलाइयों पर बँधे डोरे दो व्यक्तियों से ढीले करवाये जाते हैं जो उसी क्षण से लड़के-लड़की के धर्म-भाई बन जाते हैं। इसके बाद सम्बन्धी और मित्र लड़के-लड़की को उपहार भेंट करते हैं। लड़की को घूँघट-उठवाई भी दी जाती है। इसके बाद दावत होती है और गाना होता है, गद्दियों के एक लोक-गीत में दूल्हे को 'कान्ह' कहकर बुलाया गया है, और उसको समझाया गया है कि अब वह आवारों की तरह न घूमे, बल्कि गृहस्थ-जीवन की जिम्मेदारियों को संभाले।

गद्दियों में कुछ किसान और कुछ चरवाहे हैं। उनकी सम्पत्ति भेड़ और बकरियाँ ही होती हैं। सर्दियों में यह अपने रेवड़ को कांगड़ा और मुकेल की घाटी में चराते हैं और गर्मियों में ये लोग धौलीधार को पार करके चम्बा तथा लाहौल की ओर चले जाते हैं। कइयों की भूमि पर्वत के दोनों ओर है। वे सर्दियों में गेहूँ की फसल तो कांगड़ा में उगाते हैं और गर्मियों की फसल धौलीधार के दूसरी ओर भरमौर में जा बोते हैं। गद्दी अपने सीधे-सादे स्वतन्त्र ग्रामीण जीवन को पसन्द करते हैं।

गद्दी लोग शिवजी की उपासना करते हैं। उनका विश्वास है कि शिवजी कैलाश पर्वत में, मणि महेश की चोटी पर रहते हैं। भरमौर क्षेत्र को शिव-भूमि भी कहा जाता है। गद्दी लोगों के अनुसार शिवजी छः महीने कैलाश पर रहते हैं और आश्विन में नीचे पियालपुर उतर आते हैं, जहाँ से चैत्र में वे फिर ऊपर चले जाते हैं। यही महीने हैं, जबकि गद्दी लोग भी एक स्थान से दूसरे स्थान पर चले आते हैं।

गद्दी लोग; पहाड़ों, जंगलों और धरती की कई देवियों की पूजा करते हैं। जब पहाड़ी इलाके में तूफ़ान आ जाता है यह बर्फ के ग्लेशियर पत्थरों और पहाड़ों को गिराते हुए, चोटियों से चल पड़ते हैं, तो ये लोग समझते हैं कि दैत्यों का आपस में संग्राम छिड़ रहा है। जब किसी दर्रे में से गद्दी गुज़रते हैं, तो वे उस दर्रे के देवता की विनती करते हुए जाते हैं, ताकि उनके रेवड़ कुशलतापूर्वक पर्वत पार हो जाये। दर्रे का देवता एक पत्थरों की बनी ढेकरी में रहता, समझा जाता है। इस देवता के भय से उधर से आने-जाने मुसाफिर ऊँची आवाज में बात नहीं करते, क्योंकि ऊँची आवाज में बातें करने से उनका विश्वास है कि बर्फ गिरने लग जाती है। मैदानों से गए कई यात्री अनजाने में बातें करते हुए यहां बर्फ के नीचे दबकर नष्ट हो गए बताये जाते हैं।

कांगड़ा और चम्बा घाटी के गद्दी-चरवाहे छः महीने लाहौल की घाटी में रहते हैं। ये लोग बड़े सयाने और मेहनती हैं और यात्रा के कष्टों से घबराते नहीं। कांगड़ा से लाहौल पहुँचने में इन्हें एक महीना लग जाता है। चाहे वे अपनी एक-एक भेड़-बकरी को पहचानते हैं, फिर भी कई बार उनकी भेड़-बकरियाँ खो जाती हैं। कई बार पहाड़ों की कन्दराओं में आग जलती दिखाई देती है। ये आग

गुफा रहे गद्दी चरवाहों की जलाई हुई होती है। ये लोग बाघ, भालू आदि को दूर रखने तथा सर्दी से बचने के लिए आग जलाते है। ऊन का चोगा पहने और एक कम्बल ओढ़े कई बार ये लोग बर्फ मे सो जाते है। फिर भी इन्हे कोई तकलीफ नहीं होती। कई बार ये अपने रेवड़ मे जा छिपते है। सर्दी से बचने के लिए दो-तीन भेड़ो को अपने ऊपर डाल लेते है। वर्षा के दिनो मे ये लोग पहाड़ो की खोह मे छुप जाते है। इनकी भेड़े बड़ी पली हुई होती है और कुमाऊँ के भोटिया व्यापारी इन्हे कुमाऊँ और तिब्बत के बीच माल ढोने के लिए खरीदते है। लाहौल मे इस तरह के आए रेवड़ के चरने की जगह को सारयावण्ड कहते है। इन स्थानो को अलग-अलग चरवाहो के लिए बाँटा गया होता है। हर चरागाह की हद बँधी हुई होती है और कुल्लू के राजा अथवा लाहौल के ठाकुर से ही इनका कब्जा मिल सकता है। आजकल लोगो ने इन जगहो को आगे बेचना भी शुरू कर दिया है और इस प्रकार कई जगहे अपने पहले मालिको की मिल्कियत नहीं रही। पहले मालिको का चाहे इन चारागाहो पर कोई अधिकार नही, फिर भी नए मालिको के रेवड़ आते-जाते हुए पुराने मालिक के खेतो में एकाध दिन ठहरने के कारण भेड़-बकरियों की मेंगनियाँ के रूप मे खाद दे जाते है। हर बार गुजरते हुए गद्दी लोग नेगी को एक भेड़ लगान के रूप मे देते है। प्रायः गद्दी लोग एक-दो भेडें गाँव वालों को भी देते है, जिन्हे काटकर दावत उड़ाई जाती है।

जंगल के वृक्षो मे वनवीर बसी हुई बताई जाती है। ये तुन्न सेमल और अखरोट के पेड़ो मे रहना ज्यादा पसन्द करती है। कालावीर और नरसिंह पतियो की अनुपस्थिति मे उनकी स्त्रियो को तंग करते है। अगर कभी पति उस समय लौट आए और वीर मनुष्य के रूप मे होता है, तो वीर के कहने पर पति की मृत्यु भी हो सकती है। किन्तु इस वीर की उपासना करके टाला जा सकता है। केहलू वीर पहाड़ की ढलानों पर रहता माना जाता है। जब यह क्रोध मे होता है, तो पहाड़ से पत्थर ऊपर से गिरा देता है। पहाड़ो की ऊँची चोटियों पर 'बनसथा' रहती है। यह स्त्रियो की इष्ट होती है और ढोर-डगरो की भलाई के लिए, इनकी आराधना की जाती है। वनाह, स्रोतो, नदियो तथा जल-प्रपातो की अधिष्ठात्री है। इसकी अर्चना खिचड़ी और चबैना आदि चढ़ाकर की जाती है। अगर कहीं किसी जगह पहली बार हल चलाना होता है, तो चार युवतियो को वहाँ ले जाकर पहले उनके पैर धोये जाते है, फिर उनके माथो पर रोली का टीका लगाया जाता है और उनका मुँह मीठा कराने के लिए गुड़ दिया जाता है तथा खेती की पहली उपज देवता की सेवा मे भेंट चढ़ा दी जाती है। हर गद्दी-घर के सामने बने हुए चबूतरे पर घर के देवता की स्थापना की गई होती है और वहाँ उसकी उपासना की जाती है इन देवी-देवताओ के अतिरिक्त नाग देवता की भी पूजा की जाती है

अपने पास रखता है, खास तौर पर जब वह बाहर रेवड चरा रहा हो। अलग-अलग देवी-देवताओं की पूजा के लिए अलग-अलग दिन नियत होते हैं।

यदि कृषि करने वाले किसी भी कबीले के जीवन को पूरा-पूरा समझा जा सकता है तो वह गद्दियों का है। उनका मुख्य भोजन जौ है, जिसे वे स्वयं उपजाते हैं। जौ भूनकर वे सत्तू बना लेते हैं। पर्वतीय यात्राओं में सत्तू इनके काम आते हैं। चीनी की जगह वह प्रायः शहद बरतते हैं। कभी-कभी भेड़-बकरियों का मांस भी खाते हैं, पर अधिकतर वे इनके दूध पर ही निर्वाह करते हैं। गद्दी लोग, मण्डी के क्षेत्र में गुम्मा की खान का नमक पसन्द करते हैं। अपने वस्त्रों के लिए, भेड़ों की ऊन पर्याप्त होती है। इस ऊन को उनकी स्त्रियाँ बुनकर अटेरन पर लपेट लेती हैं। अपने सफेद चोगों और टोपों में ये लोग बहुत भले जँचते हैं। काले रंग के कुत्ते उनके दिन-रात के साथी होते हैं और इनमें से कई कुत्ते बाघों का शिकार भी करते हैं। इन कुत्तों के गले में पड़े लोहे के पट्टे बाघों से लड़ते समय उनकी रक्षा करते हैं।

पंजाब के हिमालय-गिरि-शृंगों में गद्दी स्त्रियाँ अपने सौन्दर्य के लिए विख्यात हैं। सीधा-सादा जीवन दुग्ध-पान और आर्यों का रक्त उनकी सुन्दरता के तीन मुख्य कारण हैं। इनके नयन-नक्श साँचे में ढले-से होते हैं—तीखी नाक, चंचल नयन, शक्ल-सूरत प्यारी-प्यारी और रूप मनमोहक।

पालम घाटी की राजपूत और ब्राह्मण सुन्दरियों की अपेक्षा गद्दी स्त्रियाँ हँसमुख और चंचल होती हैं। इनमें से कई तो ऐसे लगती हैं, मानो पर्वतों की रानियाँ हों। इनकी सुन्दरता का बखान पहाड़ी के अनेक गीतों में किया गया है। कांगड़ा-कला का विख्यात संरक्षक संसारचंद भी एक गद्दी-सुन्दरी से प्रेम करने लग गया और उसने उसे अपनी रानी बना लिया।

मेलों-त्योहारों में गद्दी लोग नाच-गाकर अपना जी बहलाते हैं। जब वे नाचते हैं, तो बड़े-बड़े ढोल और नगाड़े पीटते हैं। नृत्य में केवल पुरुष ही सम्मिलित होते हैं। स्त्रियाँ पास खड़ी होकर देखती हैं। नाच देखने के लिए स्त्रियाँ अपने-आपको गहने आदि से खूब सजाकर आती हैं इसमें कोई सन्देह नहीं कि इस प्रकार स्त्रियों को देखकर मर्द एक नशे में आकर कितनी देर तक नाचते रहते हैं। नाचने से पहले पुरुष खूब छककर लुगड़ी पीते और जी-भरकर खाते हैं।

कुंजू और चंचलो दो गद्दी-प्रेमी हो चुके हैं, और आजकल के गीतों में गद्दी लोग उनकी प्रेम-कथा गाते हैं। कुंजू, चंचलो से मिलने के लिए तूफानी नदी, और भयानक जंगल को लाँघकर आया करता था। उसे वन के पशुओं से इतना भय नहीं था, जितना अपने प्रतिद्वन्द्वियों का। चंचला अपने प्रेमी को समझाती है "तू अँधेरी रातों में बाहर न निकला कर, तेरे शत्रुओं के पास भरी हुई बन्दूकें हैं।" चंचलो का एक सपना था कि उसका एक प्यारा-सा घर हो, जिसके किवाड़ों-खिड़कियों में शीशे लगे हों। यह चाह गद्दी लोगों के कई गीतों में अभिव्यक्त होती है। चंचलो

को अब पता चलता है कि कुजू लाहौल घाटी की ओर जा रहा है, तो वह चश्मे पर कपड़े धोती हुई, अंजुलि-अंजुलि-भर अश्रु बहाती है। चंचलो अपने प्रेमी को कोई निशानी देने के लिए कहती है और कुजू उसे अँगूठी, निशानी देता है और चंचलो उसके बदले उसे नीले रंग का एक रूमाल देती है।

कुजू और चंचलो के गान के समान फुलमो और राझू का प्रणय-गीत भी गद्दियों में बड़ा प्रचलित है, और फुलमो का विलाप 'गल्लाँ होइयाँ बीतियाँ' बड़े चाव से गाया जाता है।

कई गीतों में भाभी-देवर के प्रेम के किस्से भी गाए जाते हैं। हरिसिंह की अपने बड़े भाई की पत्नी से प्रीति, प्रायः गीतों में वर्णित की गई है। हरिसिंह पहाड़ की चोटी पर बाँसुरी बजाता है, ताकि बसुरी की आवाज़ उसकी भाभी तक पहुँच जाय। हरिसिंह सोचता है कि वह पहाड़ की चोटी पर एक घर बनायगा। तूफानी नदी को वह तैरकर पार करता है, क्योंकि पुल पर पुलिस का पहरा है। भाभी, हरिसिंह को समझाती है कि तू मेरे विवाहित जीवन को इस तरह बरबाद न कर। किन्तु फिर हरिसिंह के प्रेम में विह्वल, सब-कुछ भूल जाती है। अपने प्रेमी को वह शक्कर और खीर खिलाती है और फिर वे दोनों बाहर जंगल में चले जाते हैं।

गाँव की बावली मैदानों में गाँव के कुएं की तरह, स्त्रियों के मिलन की एक खास जगह है, जहाँ स्त्रियाँ मिल बैठती हैं और गप्पें हाँकती हैं। इसलिए नौजवान लड़कियाँ, खुशी-खुशी पानी भरने के लिए बावली पर जाती हैं।

धौलाधार के हिममंडित शिखरों का उल्लेख बार-बार गद्दी-गीतों में आता है। गद्दी लोग धौलाधार की सुन्दरता और महानता से परिचित हैं। ये लोग धौलाधार को माता कहकर सम्बोधित करते हैं, क्योंकि इसकी ढलानों पर इनकी भेड़-बकरियों की खुराक पैदा होती है। और इसमें से फूटते झरनों के स्वच्छन्द जल से घाटी की खेतियों को सींचा जाता है। और झरनों का कल-कल करता पारे-जैसा पानी, घाटी के रूप को एक अनूठी सुन्दरता प्रदान कर देता है।

फुलमों और राँझू

फुलमो, चम्बा के चरेल क्षेत्र के एक ग्राम की सुन्दरी थी। सोलह वर्ष की आयु, चमचम करता रूप, चहकती और दहकती जवानी ! जब भेड़ों का रेवड़ लेकर निकलती तो एक बार सब उसके मुँह की ओर ताकते और उसके रूप की सराहना करते। काले-काले लम्बे बाल, चाँद-जैसा माथा और खंजन की तरह नाचती हुई आँखे ! तीखी नाक, लाल होंठ, गोल ठोडी और सेब-जैसे गुलाबी गाल। ऊँची सुराहीदार गर्दन, उभरा हुआ वक्ष, एक लम्बी, दुबली-पतली नार। गले में बँधी काली डोरी, उसके रूप को और भी चार चाँद लगा देती। जब लचक-लचक चलती, तो लगता जैसे कोई हंसिनी चली जा रही हो और उसका रूप चारों ओर अपनी महक बिखेर देता।

एक दिन फुलमो, बावली पर पानी भरने गई। उसने घड़ा पानी में डुबोया और कल-कल शब्द हुआ। पानी से भरा घड़ा उठाने को ही थी कि देखती क्या है कि एक बाँका जवान, कसीदा की हुई बेल-बूटों वाली टोपी पहने, बाँसुरी हाथ में लिये उसकी ओर आँखे फाड़-फाड़कर देख रहा है। एक-दूसरे को देखते ही दोनों में प्रेम हो गया। मुँह से कोई बोल न निकला, बस आँखों ने ही वह सब कह दिया जो उनके मन में था। ऐसा लगा जैसे चाँद और सूरज की जोड़ी मिल गई हैं। फुलमो ने घड़ा उठाया, पर पाँव मन-मन के हो गए और चलने से इंकार करने लगे। उसे लगा जैसे शरीर में बिजली कौंध गई हो। अपनी यह दशा देखकर, उसने आस-पास देखा कि कहीं किसी और ने तो उसकी इस हालत को नहीं देखा ? उसके पग धीरे-धीरे बढ़ रहे थे, किन्तु मन पीछे को खींच रहा था। जब झूमती हुई वह अपने घर को चली तो लग रहा था जैसे काम की लहरें उमड़ रही हों। उसकी मोटी-मोटी नशीली आँखें ऐसी चमक रही थी जैसे बहार में किसी हिरनी की चमकती हैं। उसने मुड़कर उसको देखा, वह अभी तक बावड़ी के पास बैठा था। दोनों के नयन फिर बिखरे और वह गोपन सन्देश, जो हृदय, हृदय को भेजता है, एक ने दूसरे को दिए।

फुलमो को पता चला कि यह नवयुवक साथ वाले गाँव के नम्बरदार लछमन का लाड़ला बेटा राँझू है। इसके बाद तो, जहाँ फुलमो की भेड़ें चरने जाती, वहीं

रॉझू अपनी बाँसुरी के साथ आ धमकता, और मधुर धुनों से उसे मोहित करता। वायु बाँसुरी के मधुर संगीत से भर-भर जाती। नीली घटनाओं में बगुले बड़े सुन्दर लगते हैं पर जिसने अपनी प्रेयसी की काली-काली आँखों की गहराइयों में झाँका है उसके लिए घटनाएँ क्या चीज है। दोनों ने एक-दूसरे को वचन दिए, सौगन्धें खाईं कि मरेंगे तो एक साथ, जियेंगे तो एक साथ।

फुलमो के पड़ोस में एक तेली का घर था। एक दिन रॉझू सरसों लेकर तेली के यहाँ तेल निकलवाने आया। क्या देखता है कि फुलमो 'त्रिंजन' में बैठी चरखा कात रही है। लड़कियों में बैठकर वह 'त्रिंजन' की रानी लग रही थी। उसकी गोरी गर्दन पर बँधा काला डोरा बड़ा जँच रहा था! और जब वह हँसती, उसके मोतियों-जैसे दाँत गिरे लगते जैसे बाग में चम्पा खिली हो। रॉझू को देखकर उसको कातना भूल गया और पूनी हाथ में ही रह गई। तेली समझ रहा था कि यजमान सरसों की पिराई देख रहा है, पर उसकी आँखें तो फुलमो के चेहरे पर गड़ी हुई थीं! दोनों एक-दूसरे की ओर देखते,पर बोल कुछ न पाते कि कहीं प्रेम का भेद खुल न जाय। लज्जा के मारे फुलमो का मुँह लाल हो गया। एक रंग आता, एक जाता।

एक बार दोनों की, दाने भुनवाने के भाड़ पर भेंट हो गई। फुलमो की सहेली इन्दरदेई मक्की के दाने भुनवाते हुए कहारी से कह रही थी कि खीलें जरा और करारी भून दें। इतने में दानों की डलिया उठाए रॉझू भी आ गया, और कुछ देर बाद फुलमो भी। चाहे दाने भुनवाने की बारी रॉझू की थी, पर उसने कहा कि अभी वह और रुक सकता है, कोई जल्दी नहीं। इस बहाने उसे फुलमो को देखने का और अवसर मिल गया और भाड़ पर से तभी गया जब सब लड़के-लड़कियाँ दाने भुनवा चुके।

फुलमो के गाँव में एक, कृष्ण जी का ऐतिहासिक मंदिर था। पूनो, अमावस्या और संक्रान्ति पर वहाँ बड़ा मेला लगता और आस-पास के गाँवों से स्त्री-पुरुषों की टोलियाँ, ढोल और बिसटें बजाती हुई आतीं। रॉझू कभी भी, इस मेले को देखे बिना नहीं रहता था। गाँव का विद्वान् पंडित सतराम बड़े रस से भागवत पुराण की कथा कहता था। दरी के एक ओर, स्त्रियों की टोली बैठती, बीच में पंडित जी, सामने लड़के और पुरुष। बुजुर्ग लोग तो आँखें मींचकर ईश्वर का ध्यान करते तथा कथा का रस लेते, किन्तु लड़के तो लड़कियों की ओर ही ताक-झाँक करते। रॉझू की टिकटिकी तो फुलमो पर ही लगी रहती, और दोनों को कुछ सुध-बुध न रहती कि पंडित जी क्या उच्चार रहे हैं।

इश्क, मुश्क छिपे नहीं रहते। गाँव में रॉझू तथा फुलमो के प्रेम की चर्चा, अब हर किसी की जबान पर थी। लोग रॉझू को बार-बार फुलमो की गली में देखते। कभी वह भट्ठा का मोल करने आ जाता और कभी दूध खरीदने के बहाने

चाहे उसके घर दुधारू बंधे रहते थे. और दूध-घी की कोई कमी न थी। राँझू के पिता को पता चला तो उसने लड़के को समझाने की कोशिश की कि फुलमो एक गरीब गड़रिये की लड़की है, और वह उससे शादी नहीं करने देगा। इसमें उसके खानदान की हेठी है। वह नम्बरदार है, बीस बीघों का स्वामी; और फुलमो का बाप भेड़ें चराने वाला, जिसके पास है कुछ पचास भेड़ें, एक गाय और बस एक झोंपड़ी, जिसमें कुटुम्ब रहता है; इसके सिवा एक फूटी कौड़ी भी नहीं। लछमन ने धमकाया कि यदि राँझू अपने निश्चय से न टला तो वह अपनी जायदाद, उसके छोटे भाई के नाम कर देगा। इस बात का भी राँझू पर कोई प्रभाव होता न देख, उसने जल्दी-जल्दी, एक दूसरे गाँव की लड़की देखकर उसका रिश्ता तय कर दिया। राँझू की सगाई हो गई। इतना ही नहीं, उसने राझू के ब्याह की तारीख भी पक्की कर ली।

बाप की डाँट-फटकार, और धमकियाँ सुनकर राँझू दुविधा में पड़ गया। एक ओर खानदान की इज्जत और जायदाद और दूसरी ओर उसके सपनों की रानी। यदि बाप की मानता है तो अपनी प्रेमिका को छोड़ना पड़ता है, और यदि अपने दिल की माने तो खानदान और घर-बार छूटता है। उसको अपनी बाँसुरी भी भूल गई और चिन्ताओं के सागर में डूबा, वह खेतों की ओर निकल गया।

मक्की के भुट्टे पक रहे थे और उनके सूत काले हो चले थे। सरकण्डों के सफेद मेमनों-जैसे फूल हवा में झूम रहे थे, जैसे हजारों चँवर झूल रहे हों। प्रेम की मारी फुलमो भी राँझू की तलाश में नदी की ओर चल पड़ी। वहाँ के वृक्ष लाल-किरमची फूलों से लदे हुए थे। मधुमक्खियों का जोड़ा एक फूल पर बैठा था। दोनों इकट्ठे शहद पी रहे थे। एक भँवरा भूं-भूं करता हुआ फूलों पर मँडरा रहा था। एक पेड़ पर फाख्ता का जोड़ा बैठा था. और वे चोंच से चोंच मिलाकर आपस में प्यार कर रहे थे। इनको देखकर फुलमो को याद आई। मोर जोर से बोला, पर कोई मोरनी उसके पास नहीं थी। मोर की आवाज सुनकर फुलमो की उदासी और भी बढ़ गई। आखिर उसको राँझू एक पेड़ के नीचे बैठा दिखाई दिया; उसके चेहरे पर भी उदासी छाई हुई थी और उस पर चिन्ताओं के बादल मँडरा रहे थे। फुलमो के बहुत कहने पर उसने अपनी उदासी का कारण बताया।

फुलमो बोली, "ए मेरे सिरताज! हृदय के स्वामी! चल यहाँ से निकलकर अमृतसर चले जायें। वहाँ तू कोई नौकरी कर लेना। मैं तेरे लिए रोटी बनाऊँगी। जब तू थककर आयगा मैं तेरी सेवा किया करूँगी।"

"मुझसे शहरों की नौकरी नहीं हो सकेगी, शहरों की तंग गलियाँ और शोर-गुल में तो मेरा दम घुटता है।"

"मैं तेरे बिना नहीं रह सकती। जब तू मेरे पास नहीं होता, मुझे सब सूना-सूना लगता है, और मेरा जी नहीं लगता।" इतना कहकर प्रेम की मारी फुलमो

मुरझाकर लुढ़क गई, जैसे चम्पा की कली वर्षा मे भीगकर भूमि पर गिर जाय।

फुलमो को यही लगता कि उसके प्रेमी के मन मे कोई अन्तर आ गया है। जब राझू ने उससे विदा ली, वह कुछ बोलना चाहती थी, पर बोल न सकी। उसका दिल गम से भरा हुआ था। उसने दोनों हाथो से अपना मुँह ढाँप लिया, और जी भरकर रोई। जब मन कुछ हल्का हुआ तो गिरती-पड़ती घर लौट आई।

भोर होते ही फुलमो की पड़ोसिन सतो आई, बोली, "अरी फुलमो क्या तुझे मालूम है कि रांझू के ब्याह की तैयारियाँ हो रही हैं, और आज उसे उबटन लगाया जायगा।" यह सुनते ही फुलमो को लगा, जैसे उसे साँप सूंघ गया है। उससे कुछ कहते न बना। जब ढोलक की आवाज आई तो दौडी-दौडी नम्बरदार के घर गई। क्या देखती है कि लछमन के घर मे ब्याह की तैयारियाँ हो रही हैं, और राझू को उबटन मला जा रहा है। रांझू की ताई, चाची, भाभियाँ और पड़ोसिनें उबटन मल रही थी और गा रही थी। फुलमो भी वहाँ पहुँच गई। माँ-बाप की दिन-रात की मीच से वश मे किया हुआ रांझू उसको देखकर खिसिया गया, और बोला "फुलमो! खड़ी-खड़ी क्या देखती है। मुझे उबटन क्यों नही लगाती?" यह सुनकर फुलमो के कलेजे मे जैसे छुरी चुभ गई। प्रेम को अन्त तक निभाने के वे पहले वचन, सब झूठे सिद्ध हुए। उसने सोचा, मर्द ठीक ही धोखे-बाज होते हैं। कच्चे-कुंवारो से प्रीति नही बढ़ानी चाहिए। उसकी सुन्दरता को लूट, जवानी बरबाद कर, अब कहता है कि तू भी उबटन क्यो नही लगाती। उसका चाँद-सा चेहरा कुम्हला गया, और शरीर पसीना-पसीना हो गया। वह बोली, 'राझू! उबटन लगाएँ, तुझे तेरी चाचियाँ और ताइयाँ, जिनके दिल मे तेरे ब्याह का चाव है, मैं क्यो लगाऊँ?" अपने प्रेमी की बेवफाई पर उसकी आत्मा काँप उठी और रोती-रोती वह अपने घर आ गई।

स्त्री का हृदय गुलाब की पंखुरियों की तरह अत्यन्त कोमल होता है जैसे ज्येष्ठ, आषाढ़ की तपती लू गुलाब के फूलों को झुलसा देती है, उसी प्रकार विरह की अग्नि स्त्री के कोमल हृदय को मला देती है। फुलमो को न केवल वियोग की आग झुलसा रही थी, उसे बेबसी और निराशा की काली आँधी भी दिखाई देती थी। उसने अनुभव किया कि यह प्रेम नहीं, मात्र दिल बहलाना था। जैसे एक बालक किसी खिलौने पर मोहित हो जाता है, पर चार दिन खेलकर उसे फेंक देता है, और किसी नये खिलौने की तलाश करने लगता है। राझू का व्यवहार भी ऐसा ही निकला।

उसकी घबराहट और करुणा को देखकर पहाड़ भी रो उठे, और वृक्षो ने सहानुभूति मे अपने पत्ते गिरा दिए। उसकी भेड भी उसे देखकर उदास हो रही थी, और घास की ओर मुँह नही दे रही थी। छत के शहतीर में चिडियो का एक जोड़ा रहता था जो प्रतिदिन कल्लोल किया करता था फुलमों को हताश देख

कर आज वे भी चहचहाना भूल गई और वे ऐसे बैठ गई जैसे शोक मना रही हों।

फुलमो को बड़ा आघात पहुँचा था, और उसकी सब आशाएँ मिट चुकी थीं। उसे अँधेरा-ही-अँधेरा दिखाई देता था। घुप अँधेरी रात, और उसमें रह-रहकर उल्लू की भयानक हूक, उसके मन में और भी भय जगा रही थी। जैसे आकाश से चाँद छिन जाय और वह सूना-सूना दिखाई दे, वैसे ही उसके मन की दशा थी। 'ए आकाश के तारो! तुम मेरी गवाही देना कि मैं आखिरी दम तक सच्ची रही। ए पक्षियो और वृक्षो! तुम मेरे गवाह हो कि मैंने अपना धर्म निभाया है।' इन विचारों में डूबी फुलमो ने दिए पर फूँक मारी। दिया बुझ गया और उसके साथ ही उसकी सब इच्छाएँ, आकांक्षाएँ भी बुझ गईं। नींद क्या आती, भूखी प्यासी, रोती और सुबकती, कच्चे फर्श पर लेट गई और काला कम्बल ऊपर ओढ़कर मुँह ढक लिया।

अगले दिन सूर्य का लाल गोला, पहाड़ के पीछे से ऐसा निकला मानो तपता हुआ तवा हो। दूर से नरसिंगे की आवाज और ढोल की ढमक-ढमक सुनाई दी। राँझू सेहरा बाँधे पालकी में बैठा, आगे-आगे जा रहा था, पिता और सम्बन्धी पीछे-पीछे चल रहे थे। ढोल की आवाज में एक उदासी झलक रही थी, और ऐसा लगता था जैसे कोई भयानक घटना घट चुकी हो। राँझू क्या देखता है कि चार जने एक अर्थी को उठाए 'राम नाम सत्य है' कहते जा रहे हैं। ध्यान से देखा तो उसने पहचाना कि फुलमो का पिता और भाई हैं। इनको देखकर वह हक्का-बक्का रह गया और चेहरे पर हवाइयाँ उड़ने लगीं। उसका पुराना दबा हुआ प्यार फूटकर बाहर आ गया। कहारों से कहा कि पालकी नीचे रख दो। इतनी देर में फुलमो की अर्थी चिता पर रख दी गई। राँझू ने कफ़न उठाया और अपनी प्रेमिका का चेहरा देखकर धाड़ मारकर रोने लगा। उसने फुलमो की चिता में आग लगाई, और पास बैठकर फफक-फफककर रोता रहा।

लपटें आसमान से बातें कर रही थीं, और उसकी प्रेमिका की काया तिल-तिल जल रही थी। राँझू से रहा न गया, उसने सेहरा उतारकर आग में फेंक दिया और स्वयं भी जलती चिता में कूद पड़ा। लोगों ने देखा, मानो आग की लपटों में फुलमो का चेहरा खुशी से खिलखिलाकर हँस रहा था। जैसे कह रहा हो, 'मुझे बड़ी खुशी है कि हम दोनों फिर इकट्ठे हो गए।'

गीतों के मुख्य लक्षण

यदि आध्यात्मिक वाणी अलौकिक कही जा सकती है, तो लोकगीत, धरती में जन्मे-पले होते हैं। किसी भी देश के लोकगीत, उस देश की भूमि की अन्तरात्मा माने जा सकते हैं। लोकगीतों में, वहां के निवासियों की भावनाएँ, उनकी आशाएँ तथा निराशाएँ बे-रोक-टोक उभर आती हैं। लोकगीतों में मातृभूमि की पुरानी से-पुरानी और नई-से-नई कविता के नमूने मिलते हैं। इनमें लोक-मानस का स्वाभाविक और गहन स्वर मुखरित होता है। कई बार यह स्वर इतना प्रखर हो उठता है कि इसका आवेग रोका नहीं जा सकता।

दुनिया-भर के लोकगीतों की तरह, कांगड़ा के लोकगीतों में भी, यहाँ के जन-जीवन को चित्रित किया गया है। जहाँ मध्य पंजाब के लोकगीतों में मैदानों का चित्रण है, वहाँ कांगड़ा के लोकगीतों में पर्वतों की सुन्दरता का वर्णन है। पहाड़ों में निर्मल जल से भरे गहरे-गहरे खड्ड, कल-कल करते झरने, धान के सुनहरे खेत, मीलों तक चले गए जंगली फूलों की छटा, सघन कुञ्जों की छाँह, और अलगोजा बजाते हुए चरवाहे, इन सबका विवरण है। 'जीणा पहाड़ाँ दा जीणा' गाते हुए यहाँ के निवासी अपनी जन्मभूमि के प्रति अपना अपार प्यार दर्शाते हैं, और हम मैदानों में रहने वालों को पर्वतों में पर्यटन का निमन्त्रण देते हैं। पहाड़ी युवतियाँ शहरों की रंगीन सभ्यता को, कच्चे रंगों से रँगी हुई मानती हैं, और इसी कारण शहरों के छल-कपट के गीत गाकर, पर्वतीय जीवन की सराहना करती हैं।

कांगड़ा के निवासी पहाड़ों में रहकर खुश हैं। उनको पहाड़ों की सर्दी भाती है। उन्हें पहाड़ों का एकान्त प्रिय है। उन्हें पहाड़ों की नदियाँ पसन्द हैं; और पहाड़ों का वह आचरण पसन्द है जो बेईमानी, छल और कपट से अछूता है।

इस पहाड़ी जीवन की सुन्दरता, पवित्रता और महानता में ज्वालामुखी तथा अनेक दूसरे मंदिरों ने और भी अभिवृद्धि कर दी है। वह धरती, जिसको ज्वाला मैया ने अपनी निवास-स्थली बनाया हो, जहाँ देवी का प्रकाश अभी तक प्रज्वलित होता है, जहाँ दूर-दूर से यात्री दर्शनों के लिए आते हों, जहाँ हिमाच्छादित धौलाधार-जैसे पर्वत चँवर डुला रहे हों, उस धरती के वासी अपने प्रदेश को वैकुंठ कहें, तो कोई अतिशयोक्ति नहीं है।

कागडा के धार्मिक लोकगीतो मे अद्भुत रस है। इनमे धर्म के साथ-साथ, हल्के-हल्के रूमान ने इनको और भी आकर्षक बना दिया है। इन लोकगीतो मे श्रीकृष्ण का विशिष्ट स्थान है। एक गीत मे, गोपियाँ श्रीकृष्ण को अपनी ओर आकर्षित करने के लिए, 'असाँ कँनै कियाँ सरमावँ बलिआ' का चुभता हुआ व्यंग्य कसती है। घर जाकर युवतियाँ अपनी माताओ से उस नटखट की चर्चा करती हैं, जो नदी के किनारे बैठा है।

कागडा के इस रंगीन वातावरण मे पलकर जवान हुए छैल-छबीले युवक, लावण्यमयी युवतियाँ, गद्दी तथा उनकी बाँकी ललनाएँ, अपने सच्चे, पवित्र और सहज प्रेम के गीत निश्चिन्त होकर गाती है। इनमें कभी प्रेमी, अपनी प्रेयसी को किसी बरोट् की ठंडी छाँह-तले सुस्ताने के लिए बुलाता है, और कभी कोई विरह-पीडिता, दूर परदेश मे बसे अपने कंत को काग, तिलियर और कूञ्जो के द्वारा सन्देश भेजती है। कभी कोई अपने बालम को, एक बात सुनने के बहाने रोकना चाहती है, और उसकी यह बात उसकी लाख शिकायतो, मजबूरियों और हृदय मे गहरे उतर चुकी कसक की अभिव्यक्ति बन जाती है। उसको परदेश मे बसे अपने प्रियतम पर भरोसा नहीं रहता, और वह डरता है कि उसका मन न जाने कब भरमा जाय। स्त्री के मन म अनन्त काल से बसी हुई ईर्ष्या का वर्णन कागडा के प्रणय-गीतो का मुख्य अंग है।

वियोग के ये गीत, कागड़ा के युवको के नौकरी की खोज मे बाहर चले जाने के कारण जन्म लेते हैं। कांगडा भी मध्य पंजाब के समान सूरमाओ का देश है। नौजवानो के लिए यह कर्त्तव्य-सा हो जाता है कि वे घर-बार छोड, युद्ध मे लडने के लिए सेना में भरती हो जायँ। मुगल-काल मे भी कागडा के नवयुवक, राजपूत राजाओं की सेनाओ मे भरती हुआ करते थे। इस प्रकार कागड़ा की नारी का जीवन वियोग की एक लम्बी कहानी बनकर रह जाता है। जाने वाला, जाते समय हीले करता है, लाख सान्त्वनाएँ देता है, और अपने दिल की रानी को कागडा के फूलो, बागों, ऊँची-ऊँची चोटियो और गहरी-गहरी नदियो के जीवन-दायी जल के साथ सुख पूर्वक रहने का सन्देश देता है, और यह सब-कुछ कागड़ा के प्रेम-गीतो का शृंगार बनता है।

परदेस गए साजन की नव विवाहिता को उसकी सास और भी सताती है। वह ताने देती है, और घर का काम अत्यन्त कठोरता पूर्वक करवाती है। इस दुखिया नारी को श्वसुर का देश ज़हर-सा लगने लगता है, और वह 'जली जाए सहुरिया दे देस' का गीत गाकर अपना कलेजा ठंडा करती है।

घर-भर मे सब लोग इस दुखियारी के बैरी नहीं होते। साधारण परि-स्थितियों मे पति का छोटा भाई उसके दुखो को बाँटने लगता है, जिसके परिणाम-स्वरूप इस दुखिया का प्यार अपने इस देवर से हो जाता है। कागड़ा के लोक-

गीतों में भाभी-देवर की इस सहमी-झिझकती प्रीत के अनेकों उदाहरण मिलते हैं। और फिर उन याचनाएँ करने वाली, औंसियाँ डालने वाली तथा मिन्नतें मानने वाली का साजन घर लौट आता है। चाहे दिल में अनेकों शंकाएँ हों, चाहे कितने गिले हों, फिर भी प्रियतम के वियोग में अपने सतीत्व, अपने प्रियतम की धरोहर को सुरक्षित रखने वाली यह नारी, कुएं पर पानी के एक घूंट के लिए तरसते किसी ढोल-सिपाही पर मोहित नहीं हो जाती, चाहे बाद में, वह उसका पति ही क्यों न निकल आए। कुएं पर पानी भरती एक ऐसी स्त्री का गीत, कांगड़ा के लोकगीतों का सिरमौर है।

कांगड़ा के लोकगीतों में अंतरजातीय विवाह के संकेत भी मिलते हैं। किसी राजपूत मियाँ ने, जाति की चमारिन को ही व्याहकर अपने घर बसा लिया। इसी-से सम्बन्धित एक गीत कई रूपों में मिलता है। यह गीत इस बात का साक्षी है कि प्रेम कभी जात-पाँत या छोटे-बड़े का अन्तर नहीं मानता।

ऐसे प्रेम-वर्णन के साथ-साथ ऐसे कथानक भी गीतों में सुनने को आए जो चिनाब नदी के आशिक-माशूक वालों तथा माहिया की तरह, कांगड़ा के कुंजू-चंचलो, गंगी-मोहणा तथा फुलमो-रांझू के प्रेमाख्यानों पर आधारित हैं। इन गीतों की पृष्ठभूमि में एक इतिहास होता है, और इन गीतों के साथ हमारी ऐसी साझ स्थापित हो जाती है कि उनकी समस्याएँ हमें अपनी समस्याएँ प्रतीत होने लगती हैं, और उनके एक-एक बोल के पीछे कई-कई स्मृतियाँ उभर आती हैं।

रांझू और फुलमों की कहानी, यहाँ की प्रतिनिधि कहानी है, इसलिए मैंने इस प्रेम-कथा का गद्य में विस्तार से वर्णन किया। इसमें कांगड़ा के समूचे जीवन की झाँकियाँ प्रस्तुत की गई हैं। गीत में रांझू बेवफ़ा आशिक दिखाया गया है। बेवफ़ाई एक अक्षम्य पाप है, जिसको मेरा हृदय सहन नहीं कर सकता। इसलिए मैंने अन्त में रांझू को भी वफादार बना दिया है।

पंजाब की 'सद्दों' की तरह, जिनको हमारे मिरासी लम्बी-लम्बी तानें लेकर गाया करते थे, कांगड़ा के ढोलरू भी कम महत्त्वपूर्ण नहीं, और ये ढोल पर डके की चोट के साथ, पूरे स्वर-ताल में गाए जाते हैं।

कांगड़ा के निवासी शूरवीर भी हैं। रामसिंह पठानिया-जैसे वीर-गान के समान और बहुत-से शौर्य-गान, रणभूमि में जूझते सैनिकों की दृढ़ता और साहस का जीता-जागता प्रमाण हैं।

समय की गति के साथ-साथ, कई नवीन विषय और नई मान्यताएँ भी गीतों का अंग बन गई हैं। जैसे किसी गीत की गोरी अपने रंगरूट के गीत गाती है, और किसी अन्य गीत की गोरी समतल मैदान में, बंगले के किनारे-किनारे बगीची लगाती, और अपने बच्चों को स्कूल में जाने की प्रेरणा देती तथा उनसे पढ़ाई का वचन लेती है।

कागडा के लोकगीतो मे गद्दियो के गीतो का एक विशिष्ट स्थान है। हमारी तरह गद्दी लोग भी विवाह, सगाई, जन्म, मुण्डन या मेले-पर्व और तीज-त्यौहार के समय लोकगीतों का आश्रय लेते है। अपने इस गीतो के ससार का रस लेते हुए ये सारे सासारिक झमेलो से मुक्त हो जाते हैं, और इनकी आत्मा मस्ती मे झूमने लगती है। इन लोगों के जीवन की तरह, इनके गीत भी सच्चे, सुथरे और भाव-पूर्ण होते है। उन्मुक्त वातावरण मे रहने तथा परिश्रमी जीवन व्यतीत करने के कारण, इनके गीतो मे भी उन्मुक्तता और हर्षोल्लास की प्रधानता है। हर्षोल्लास के समान ही कागडा-निवासियो के जीवन मे रुमान भी समाया हुआ है। वन-पक्षियो के समान, वनस्थलियो और चरागाहो मे स्वच्छन्द विहार करते हुए लडके-लडकियो मे एक बहुत ही पवित्र-सा प्रेम-सम्बन्ध स्थापित हो जाता है, जिसका वर्णन इनके गीतो को सुन्दरता और रस प्रदान करता है।

रूखा-सूखा खाने, मोटा-झोटा पहनने, और रात-दिन के परिश्रम के बावजूद, ये लोग अपने जीवन से इतने सन्तुष्ट है कि इस पर राजभोग और शीश-महलो का आवास न्यौछावर कर देते है। एक लोकगीत मे बताया गया है कि महाराजा ससारचद एक गद्दी-सुन्दरी को अपने महलों मे रख लेता है, पर वह सुन्दरी अपनी भेड-बकरियो को याद करती है, और अपने 'गद्दी' को नही भूलती।

धरेलू जीवन के बाद इन गद्दियो को अगर किसी से प्यार है तो वह चम्बा शहर है—उनका अपना शहर, जहाँ का चौगान और रावी की साय-साँय इनके गीतो मे साँस लेती है। कागडा के पर्वतो के हिम-धवल शिखर, निर्मल जल के शीतल निर्झर, सफेद फूलो से लदे कैथा के वृक्ष, जगली गुलाबो की चारो ओर फैली बाड, कचनार के गुलाबी फूल, नदियो के तट पर कल्लोल करते हुए सारसो के जोडे और समूचे परिवेश की सुन्दरता, यहा के निवासियो के चेहरो पर ही नही, बल्कि इन लोगों के गीतों मे भी झलकती है।

इस प्रकार कागडा के लोकगीत यहाँ के लोक-जीवन का दर्पण है। इनका सहज प्रवाह और सगीतात्मकता बताती है कि कागडा के युवक और युवतियाँ भी एक प्रकार की कोमलता और सगीत के स्रष्टा है। इनकी बोल-चाल मे सगीत-जैसी लचक, इनके चेहरे पर गीतो-जैसी कोमलता, इनके हृदय निर्मल जल के समान स्वच्छ, तथा इनका समूचा जीवन बहते पानी-सा पवित्र होता है।

इन गीतो मे पर्वतवासियो की सभ्यता, मनोभाव, स्वप्न और उमगे फूट-फूट पडती है। कागडा के गीतो मे निहित, इस अछूती सादगी और सौन्दर्य के सागर पर जितना गर्व किया जाय, थोडा है। लोकगीतो की कविता, एक महान् कविता है। इस कविता मे भावनाओ की बहुलता और सचाई, विशेष गुण है।

ये गीत लोगो की साधारण बोल-चाल की भाषा मे रचे होते है। इनमे उनकी अपने-जैसी सादगी और स्वच्छता होती है। कागडा के लोकगीतो की पजाबी दुआबे

की पंजाबी से मिलती-जुलती है। कुछ-एक शब्दों का उच्चारण तो बिल्कुल दुआबी-सा है। यदि अन्तर है तो केवल इतना कि इन गीतों को ऊँचे और टीप के स्वरों में गाने के कारण, शुरू और आखिर के कई शब्द खींचकर लम्बे किये हुए होते हैं। ह्रस्व मात्रा को दीर्घ बोले जाने से इन शब्दों में एक अनोखा रस भर जाता है जो शायद दूर-दूर पर बने पहाड़ी मकानों में रहने वाले लोगों की वाणी में आ जाना कुछ स्वाभाविक है और कुछ आवश्यक भी। कांगड़ा के लोकगीतों की बोली सच्ची और मीठी पंजाबी है। इन गीतों में बिलासपुर, मंडी, सुकेत और चम्बा के गीत भी सम्मिलित हैं। इन सबकी भाषा पंजाबी है, और कई बार यह जानना कठिन हो जाता है कि ये गाने कांगड़ा के हैं अथवा इन रियासती इलाकों के?

जन-मानस की, पीढ़ी-दर-पीढ़ी चली आ रही इस धरोहर को संगठित रूप में प्रस्तुत करते हुए मुझे बड़ा आनन्द आया है। इन गीतों की ताजगी और सजीवता हमें इनको बार-बार पढ़ने के लिए प्रेरित करती है। ये गीत ताज़े और अछूते हैं। इनकी आभा को समय की प्रचण्ड धूल-मिट्टी भी नहीं ढक सकेगी।

मैं आशा करता हूँ कि प्रेम वीरता, आशा, निराशा की इन लय-धुनों के द्वारा, सब दिल वाले, अपनी खामोश मोहब्बत की समाधि पर श्रद्धा के फूल चढ़ाते रहेंगे। इन गीतों की गुन्जार, प्यार करने वालों की सूनी रातों को ही नहीं भरेगी, बल्कि इनके बोल, खेतों और नदियों के किनारे पर भी गूँजते रहेंगे, गूँजते रहेंगे।

कांगड़ा देश

कांगड़ा देश निआरा

नी मेरा कांगड़ा देस निआरा

डुघी-डुघी नदीआँ ने सैली-सैली धाराँ
ओ सैली सैली धाराँ
छैले छैले गभरू ते बाँकीआँ नाराँ
श्रो बांकीआँ नाराँ
बोलण बोल पिआरा
नी मेरा कांगड़ा देस निआरा

चिव चिव, चिव चिव, चिड़वा जो करदा
ओ चिड़वा करदा
उडी उडी, डाली डाली बहिंदा
ओ डाली डाली बहिंदा
बोले बोल पिआरा
नी मेरा कांगड़ा देस निआरा

ज्वाला जी माता

तै कांगड़ा धौलीधार माता नैं बैकुंठ बनाइआ

पान सुपारी मईआ ध्वजा ले नरेला
पहिलड़ी भेट चढ़ाइया मईया
तैं बैकुंठ बनाइआ है कांगड़ा धौलीधार माता

सूहा सूहा चोला मईआ अग बराजे
केसरी तिलक चढ़ाइआ मईआ
तैं बैकुंठ बनाइआ है कागड़ा धौलीधार माता

नगी नगी पैरी देवा अकबार आइआ
सोने दा छतर चढ़ाया मईआ
तै बैकुंठ बनाइआ है कागड़ा धौलीधार माता

पहाड़ाँ दे बिच बिच

जीणा पहाड़ाँ दा जीणा

पहाड़ाँ दे बिच बिच नदीआँ जो बगदी
लाई तारी लग्गी जाणा
जीणा पहाड़ाँ दा जीणा

पहाड़ाँ दे बिच बिच कुकू जो बोले
असाँ सुणी जली जाणा
जीणा पहाड़ाँ दा जीणा

पहाड़ाँ दे बिच बिच हरे देहे बूटे
देखी कने दिल लाणा
जीणा पहाड़ाँ दा जीणा

जीणा पहाड़ाँ दा जीणा

पहाड़ाँ दा रहिणा चंगा

पहाड़ाँ दा रहिणा चंगा ओ राजिआ
पहाड़ाँ दा रहिणा चंगा ओ

शहिराँ शहिराँ बिच नालू जो वगदे
पहाड़ाँ 'च वगदीआँ गगा ओ

झिकले शहिराँ बिच गरमी जो हूँदी
पहाड़ाँ दा सीत ना जाँदा ओ

शहिराँ शहिराँ बिच अफसर रहिदे
पहाड़ाँ 'च कोई नहीं आउँदा ओ

झिकले शहिराँ बिच मोटराँ ते गड्डीआँ
पहाड़ाँ 'च टट्टू नहीं जाँदा ओ

शहिराँ 'च हूँदीआ बड़ीआँ धोखेबाजीआँ
पहाड़ाँ दा धरम ही चगा ओ

पहाड़ाँ दा रहिणा चगा ओ राजिआँ

झिक्के दे माणू इत्थे आई रहुदे

चलदी पुरे दी ठडी ठडी वा ओ
मन भाँदा खाओ ने जग भाँदा लाओ
सज्जणे आन ने दुशमणे भीं ओ
दीड लाई पट्टू गरडू मरीना
जीणा पहाड़े दा जीणा

पहाड़ बूटी कन्ने जगमग करदा
दिक्खो दिक्खी सनैगी छैल उच्चे लगदा
ठंडे नाड़े पाणी छै छै वगदा
आई करी डम्बा पाणी घुटो घुट्ट पीणा
जीणा पहाड़े दा जीणा

जिवके दे म्हाणू इथे आई रहुदे
तन ओदे उजले ने मन ओदे गदे
उह के जानण पैसे दे वंदे
फट्टे दा चोला कीआँ करी सीणा
जीणा पहाड़े दा जीणा

जीणा पहाड़ाँ दा जीणा

ठडी-ठंडी हवा चलदी
बरफाँ दा पाणी पीणा
जीणा पहाड़ाँ दा जीणा

होरनाँ दी बागी सब फुल्ल फुलदे
मेरे बागे फुल महिंदी
राजी रही ओ अड़ो ओ जुग-जुग जीओ
दुनीआँ ईहाँ ही कहिंदी
जीणा पहाड़ाँ दा जीणा

होरनाँ दी बागी सब फुल्ल फुलदे
मेरे बागे फुल्ल गोभी
खूब कमाँणा रज्जी के खाणा
होणा किसे दा नही लोभी
जीणा पहाड़ाँ दा जीणा

होरनाँ दी बागी सब फुल्ल फुलदे
मेरे बागे खटनालू
डुगीआँ खड्डाँ ते निरमल पाणी
अक्खी बक्खीं दो कुआलू
जीणा पहाड़ाँ दा जीणा

देसाँ विचों देस कांगड़ा

सारिग्राँ देसाँ विचो देश कागडे दा
सारिआँ देसाँ विचों देस कागड़े दा
न्यारा असाँ जो पिआरा हो

पाणी हवा सारे देस दी ठंडी
पैर पठानकोट ते सिर इस दा मंडी
दखशण दिशा विच वसदा हमीरपुर
उत्तर दिशा धरमसाला हो

चीलाँ ते बणा जंगल इस विच
दुधे दहीएं दे उभार इस विच
बिजली ते गांसे दी खान जे इस विच
लैलाँ दी खान वनिआरा हो

बैजनाथ चौमुंडा दा मंदर
बजरेसरी चिंतपूरनी दा मंदर
ज्वालामुखी जीआ मंदर इस विच
आसापुरी जेही धारा हो

सारिआँ देसाँ विचों देस कागड़े दा
न्यारा असाँ जो पिआरा हो

वे कांगड़े दा टीला

कांगड़े दा टीला वे अड़िया
सुहणा साडा देस कागड़े दा टीला

जवाला माई ऐथे वसदी

कुल्लू वसदे महेश के अड़िआ
दूर हो जांदे कलेश वे कागड़े दा टीला

बरफा दी टोपी पहिन खड़ोती
खड़ी है धौलीधार वे कागड़े दा टीला

खड़ी है धौलीधार वे अड़िआ
सभ नूँ दसदी पिआर वे कागड़े दा टीला

नदीआँ ते नाले एथे वगदे
एथे वगदी विआस वे कागड़े दा टीला

एथे वगदी विआस वे अड़िआ
सभ दी बुझाँदी पिआस वे कागड़े दा टीला

कागड़े दा टीला वे अड़िआ
सूहणा साडा देस कागड़े दा टीला

पलमा दा चिलके पाणी

ओ आरा चिलके पत्थर गाटीआँ
ओ पलमा दा चिलके पाणी

ओ वरीआँ ते डरना प्रीत कीआँ लाणी
ओ वरीआँ ते डरना प्रीत कीआँ लाणी

ओ बोढड़ वाले ते भरना प्रीत कीआँ लाणी
ओ बोढड़ वाले ते भरना प्रीत कीआँ लाणी

ओ ठंडे लोरी बागाँ ते डेरा कासी रामाँ
ओ गोरीआ ते भरना घसीट कीआँ लाणी

ओ रड़े गोही बागाँ ने फेरी काशी रामाँ
ओ बगीआँ ने भग्ना प्रीत कीआँ लाणी

लोकी कांगड़े दी पिआरी

जाती धरम दा रखवारा
जग जाणदा है सारा
कोई कोई जमदा
दुनीआं नूरपुरे दी पिआरी
लोकी कांगड़े दी पिआरी
नेरे बच्चिआँ जु मारां बच्चा बच्चा मनंदा

शिमला सपाटू घूम आइओ रे

घूम आइओ घूम आइओ घूम आइओ रे
शिमला सपाटू घूम आइओ रे

घूम आई मैं तो नैनीताल ओ
शिमला सपाटू की ऊँची-ऊँची पहाड़िआ
फिरे इठलानी नई नवेली
घूम आइओ घूम आइओ घूम आइओ रे
शिमला सपाटू घूम आइओ रे

घूम आइओ मैं तो नैनीताल ओ
नैनीताल लोके ताल सुहाने
फिरन इठलाने छैल छबीले
घूम आइओ घूम आइओ घूम आइओ रे
शिमला सपाटू घूम आइओ रे

प्रेमगीत

गल्लाँ होई बीतीआँ

वाड़ूए मुगाड़ूए नु कजा झाँकदी
झखां कजो मारदी
दो हत्थ उटणे दे लाइग्रा फुलमो
गल्लाँ होई बीतीआँ

उटणा लवाण तेरी नाईं चाचीआ
राँझू सकी भाबीआँ
जिन्हाँ दे मना विच चाओ राँझू
गल्लाँ होई बीतीआँ

कुणी ब्राह्मणे तेरा विआह लिखिआ
राँझे विआह लिखिआ
उम दी ना पाए प्रमेशर पूरी
गल्लाँ होई बीतीआँ

फुल्ल दे पराह्ते मेरा विआह लिखिआ
फुलमा विआह लिखिआ
बापू कीनी कुड़माई फुलमा
गल्लाँ होई बीतीआँ

बाहरे बाहरे राँझू, दो जनी चली
भाईओ डोला चलिआ

ब्राह्रे बाह्रे फुल्लमो दी लाश चली
गल्लाँ होई बीतीआँ

रक्खो ते कहारो मेरी पालकीआँ
रक्खो पालकीआं
फुल्लमो जो दाग लगाणा जानी
गल्लाँ होई बीतीआं

बाहँ हत्थे गांझू चिना जो चिणी
गांझू चिना जो चिणी
देहूणे हत्थे लाइआ लाटू भाइओ
गल्लाँ होई बीतीआँ

दोस्ती नीं लाणी फुल्लमो कच्चिआ कन्ने
जानी कवारिआँ कने
विआही करी हुंदे बेईमान मेहिओ
गल्लाँ होई बीतीआँ

बाबू रामा रैंजरा

चंद घेरिआ बदलीआ मच्छी घेरी जाले
तूँ घेरिआ मूमुआ बणा दे नाले

बड़ी लैणी कोकड़ी बीजी देणा कोदा
लाई लैणी ममता बैठी लैणा मोदा

शिमले दे साहब जतोग्री दे गोरे
नीं मोही बाबूआ जादू दे जोरे

चाह्ड़ी लैणी खिच्चड़ी डाली लैणा घिउ
असी जाणां जंगला जो लाई लैणा जिउ

थोडी रखिआ खिड़की नाँ डाही रखिआ मंजा
त्रिहाली रखिआं चलणो बाबू आउणा संझा

बन्हे दीआँ सड़कां कुटी चूना रोडी
पज बाहीआँ बैंता दी लक्क दिता तोडी

मकदरा दे पहाडे फुलिआ पाजा
मकेना नहीं जाणा पकड़ी लेंदा राजा

बाबू दे दरशन वेखणे दे चगे
इकी हत्थे शीशा नाँ दूए हत्थे कंघे

बाबू रामा रेजगा गारडाँ दा जोड़ा
किथे पाइआ अज कल्ह् नीला घोडा

नाँ हुण मिजो छोड़ दे बीरो

दिन चढ़ने जो आइआ वो कुमारीए,
दिन चढ़ने जो आइआ
ओ मेरी सौ दिन चढ़ने जो आइआ
नाँ हुण मिजो छोड़ दे बीरो

भरी लै वो भरी लै भरी गडवीआं
जो इस वो बौड़ी दा पाणी
ओ मेरी सौ इस वो बौड़ी दा पाणी
नाँ हुण मिजो छोड़ दे बीरो

अंगणे ओ आई बही जा घुमारीए
गोदीआ बाल्क निआणा
ओ तेरी सौ गोदीआ बालक निआणा
ताँ हुण मिजो छोड़ दे बीरो

ना अज गल्लाँ कीतीआँ घुमारीए
मुंने दा ना चुकिआ चाओ
ओ तेरी सौ मुंने दा ना चुकिआ चाओ
ताँ हुण मिजो छोड़ दे बीरो

असां तुसां राजी रहिणा वो घुमारीए
जनी जली मरदे लोकी
ओ तेरी सौ जनों जली मरदे लोकी
ताँ हुण मिजो जाणी दे बीरो

राजा हेड़े चढ़िआ

नगारे चुकी राजा हेडे ते चढिआ ई
गद्दण तमाशे जो आई
मेरिआ बाँकिआ गद्दीआ

बाहाँ पकड गद्दण अंदर कीनी
भिनलू नाँ दिता चढ़ाई
मेरिआ बाँकिआ गद्दीआ

भुजाँ दा सोंगा गद्दणी छोड़ी छोड़ी देणा
पलजाँ दा होए जो आवो
मेरीए बाँकिए गद्दण्डे

पल्घाँ दा सोणा राजा जी राणीआँ जो वणिआँ
भुजाँ दा सौंणा पिआरा
हो मेरिआ बाँकिआ राजिआ

लूंडे दा खाणा गद्दणी छोड़ी छाड़ी देणा
सोने दे थालाँ जो आवो
मेरीए बाँकीए गद्दणे

थालाँ दा खाणा राजा जी राणीआँ जो वणिआँ
लूंडे दा खाणा पिआरा
मेरिआ बाँकिआ राजिआ

उन्नाँ दा चोला गद्दणी छोड़ी छोड़ी देणा
रेशमी पुशाकाँ जो आवो
मेरीए बाँकीए गद्दणे

रेशमी पुशाकाँ राजा जी राणीआँ जो बणीआँ
ऊनाँ दा चोला पिआरा
मेरिआ बाँकिआ राजिआ

इक दिन राजा गद्दणी गल्लाँ गल्लीं पुच्छदा वो
गद्दी पिआरा की मैं
वो मेरीए बाँकीए गद्दणे

थोड़ी थोड़ी मानता राजा जी तुसाँ दी की लगदी
गद्दीए दी बज्जी जाँदी छुरी वो
मेरिआ बाँकिआ राजिआ

थोड़ी-थोड़ी बुरी राजा छेलूए दी आउँदी
गद्दीए दे ताईं बगदी छुरी ओ
मेरिआ हरीसिंघा गद्दीआ

महिलां दे हेट गद्दी भेडाँ जो चारे
मुरली दी धुणक सुनाई वो
मेरिआ बाँकीआ गद्दीआ[1]

मींए चपली बणाँदे तेरी सौंह

थोड़े मींए हल बी नी बाँह्दे हो
थोड़े चपली बणाँदे तेरी सौंह

थोड़े मींए कुरसीआँ पर बह्दे हो
थोड़े चपली बणाँदे तेरी सौंह

मीआँ बैठा बाँदरां दे पहिरे जो
मैना फुलके पकांदी तेरी सौंह

फुलके पकाई मैना झूरे हो
मुके कुत कने खाणे तेरी सौंह

खन्नी रोटी दहीं दा कटोरा हो
चली मींए जो तुहागी तेरी सौंह

मैं नहीं खाणा दहीं दा कटोरा हो
मेरी सरद तमीरा तेरी सौंह

१. यह गीत महाराजा संसारचंद और बदला की गद्दण नोखू का है। राजा शिकार खेलने बंदला के गांव आया और वहां उसने नोखू गद्दण को देखा और जबरदस्ती पालकी में बिठाकर नदौण ले गया।

घिआड़ी घिआड़ी उंगलीआं ब्रेहृंदा हो
राती नूगे दी कुटारी तेरी सौंह

जिहाँ कुकड़िआले दा छेड़ा हो
तिहाँ सौए जो नरेडा तेरी सौंह

छैला दिखी मुली किजो गिआ हो
नैना जाती दी चमारी तेरी सौंह

मीआँ मेरा पतणे दा ताल्ह वो

मीआं मेरा पतणे दा ताल्ह वो
मीआं रुड़ी मत्त जादा मेरी सौंह

मीआँ बैठा बाँदरा दे पागा वो
मैं ताँ फुलके पकादी तेरी सौंह

फुलके पकाँदी फूगी जांदी वो
तिजो काहे करने दिणी तेरी सौंह

अधी रोटी दहीए दा कटोरा वो
मीआँ खाई ले तुहारी मेरी सौंह

अग्गे-अग्गे मीआं खीरे घोड़ा वो
पछे जिणकू चमारी तेरी सौंह

---

१. एक राजपूत मियाँ ने मैना नामक एक चमारी से विवाह कर लिया। विवाह के बाद चाहे मियाँ को वे सारे काम करने पड़े जो उनकी हैसियत के विरुद्ध थे किन्तु फिर भी अकड़ उतनी ही रही। यह गीत उनके बारे में है। कांगड़ा के गीतों में मियाँ और चमारी के प्रेम के कई गीत मिलते हैं। अगला गीत भी इसी विषय पर है।

जानी दी मैं हूलीआं चुगणी वो
मीआं भूली मत्त जादा मेरी सौंह्

मीआं मेरा छलीआं दा पारा वो
मीआं मई मन्त रहंदा तेरी सौंह

आर घर मेरे पारा तेरे वो
गभे नदीआं वहूरी तेरी सौंह्

ओ मुंडिआ प्रिथी सिघा

कुथूं ते उगसी काली बदली
ओ मुंडिआ प्रिथी सिघा
कुथूं तो वरसिआ ठंडा नीर ओ

छाती ते उगमी काली बदली
ओ कुडीए इदर देईए
नैनां तो वरसिआ तत्ता नीर ओ

कीदीआं सो तेरीआं भाबीआं
ओ मुंडिआ प्रिथी सिघा
कीदी सो तेरी नार ओ

तेरे भ्रहीआं तां मेरीआं भाबीआं
ओ कुडीए इदर देईए
तेरे ते ब्याई मेरी नार ओ

कुथूं सो आईआं तेरीआं भाबीआं
ओ मुंडिआ प्रिथी सिघा
कुथूं तो आई तेरी नार ओ

उथूँ ताँ आईआँ मेरीआँ भाबीआँ
ओ कुड़ीए इंदर देईए
महल्ले ते आई मेरी नार ओ

मरी वो जान तेरीआ भाबीआँ
ओ मुंडिआ प्रिथी सिघा
जली बली जाए तेरी नार ओ

कुथूँ ताँ उगमी काली बदली

कुथूँ ता उगमी काली बदली
ओ मुंडिआ प्रिथी सिघा
कुथूँ ताँ उगमिआ ठंडा नीर वो

छाती नाँ उगमी काली बदली
नी कुड़ीए इंदर देईए
नैणाँ नाँ उगमिआ ठंडा नीर वो

किह्नी ते रँगी मेरी पगड़ी
ओ मुंडिआ प्रिथी सिघा
किह्नी ते कढ़िया रुमाल वो

भाबो नीं रँगी मेरी पगड़ी
नी कुड़ीए इन्दर देईए
नारा ताँ कढ़िआ रुमाल वो

बिज ताँ कड़के तेरी भाबो
ओ मुंडिआ प्रिथी सिघा
नार जो डसे काला नाग वो

बिज तां हुंदा काली कुलजी
नी कुडीए इन्दर देईए
नाग तां हुंदा कुल्ले दा प्रोहत वो

मोहणा फांसी चढ़ी गिआ

तूं नी दिसदा ओ मोहणा तूं नी दिसदा
भाईए गेआ कीर्तिआं ने तूं नी दिसदा

तेरे फिकरे वे मोहणा तेरे फिकरे
मेरा दिल लगा सुकणे तेरे फिकरे

आइआ मरणा ओ मोहणा आइआ मरणा
भाईए री गलाइआ नर आइआ मरणा

फांसी चढ़ना ओ मोहणा फांसी चढ़ना
दिने रे बारा बजे फांसी चढ़ना

परवाना लिखीता ओ मोहणा परवाना लिखीता
राजे तेरी फांसी रा परवाना लिखीता

खाई पेहनी लै ओ मोहणा खाई पेहनी लै
अपणी मरजी रा खाई पेहनी लै

दान करी लै ओ मोहणा दान करी लै
अपणीए मरजी दा दान करी लै

तूं नी बचदा ओ मोहणा तूं नी बचदा
राजे री कलमा ने तूं नी बचदा

लगिआ मुकणे ओ मोहणा लगिआ मुकणे
नीला-तीला खून तेरा लगिआ मुकणे

फाँसी चढ़ी गिआ वे लोको फाँसी चढ़ी गिआ
भाइए री गलाइआ पर फाँसी चढ़ी गिआ[1]

णा बच गिआ

तूँ न जाली मुखादा ओ मोहणा
तेरा नीला तीला खून मुक्कदा

कैथो लुकदा वे मोहणा कैथो लुकदा
ओ फूल नदीआं वाडीआं कैथो लुकदा

मैं नही लुकदा ओ माँ मैं नही लुकदा
राजे दीआँ राणीआं जो हार गुंददा

खाई ले रोटी ओ मोहणा खाई ले रोटी ओ
माता दीआँ पक्कीआँ खाई लै रोटीआं

मै नही खाणीओ माता तेरी रोटीआं
कल्ह बारों बजे फाँसीआं चढ़ना

दुद्ध पी लई ओ मोहणा दुद्ध पी लई
पी लई दुद्ध छोल्हआ बकरी दा

---

१ यह बिलासपुर का गीत है। कहा जाता है कि एक ब्राह्मण था, जिसका [illegible] मोहन था. राजा की लड़की से प्रेम हो गया। जब राजा को पता लगा तो मोहन को फाँसी लगवा दी। यह गीत [illegible] और बिलासपुर में [illegible] [illegible]न है, और लोग इस इश्क के शहीद के प्रति बड़ी सहानुभूति प्रकट करते

मैं नहीं पीणा ओ माता मैं नहीं पीणा
मेरा अन-जल सुखी रहि मैं नहीं पीणा ओ

कस बजनी ओ मोहणा कस बजनी
तेरी पंज रंगी मुरली कस बजनी ओ

भरा बजनी ओ माता भरा बजनी
मेरी पंज रंगी मुरली भरा बजनी ओ

कस पहिनणा ओ मोहणा कस पहिनणा
तेरा मखमली कुरता कस पहिनणा ओ

भाई पहिनणा ओ माता भाई पहिनणा
मेरा मखमली कुरता भाई पहिनणा ओ

कस लाणी ओ मोहणा कस लाणी
तेरी पंज रंगी धोती कस लाणी ओ

भाई लाणी ओ माता भाई लाणी
मेरी पंज रंगी धोती भाई लाणी

घर दल्या तेरा मखमली तौलीआ
भूले कीलीआ तेरा मखमली तौलीआ

वेखीए डरदा ओ मोहणा वेखीए डरदा
कल्ह आरां बजे फांसी चढ़ना

मैं नहीं डरदा ओ माता मैं नहीं डरदा
मेरे धरमे दे भार नाल तखता टूटदा

खंभे गडीए ओ मोहणा खंभे गडीए
बिलासपुर आउणाए खंभे गडीए

गडन देओ माता खंभा गडन दिओ
मैं राजे नूं सलाम कर वच आऊँगा

कुंजू ते चंचलो

कपड़े धोआँ छम छम रोआँ चंचलो
मुख बोल जबानी हो
हाए वो मेरीए जिंदे मुख बोल जबानी हो

मेरे कने हथ मत लादा कुंजूआ
बिच्च गजरा निशानी हो
हाए वो मेरीए जिंदे बिच्च गजरा निशानी हो

तेरे पिछे होइआ बदनाम चंचलो
किजो बणदी बिगानी हो
हाए वो मेरीए जिंदे किजो बणदी बिगानी हो

रानी दो बराती मत आउँदा कुंजूआ
बैरी भरीआ बंदूका हो
हाए वो मेरीए जिंदे बैरी भरीआ बंदूका हो

मेरी तेरी प्रीत पुराणी चंचलो
तू ता कदर ना पाणी हो
हाए वो मेरीए जिंदे तू ता कदर न पाणी हो

मेरी बाही लाल चूड़ा कुंजूआ
अग्गे गजरा निशानी हो

हाए ओ मेरीए जिंदे अग्गे गजरा निशानी हो

लोक नां गलांदे काली-काली चम्बलो
तू नां मरुए दी डाली हो
हाए ओ मेरीए जिंदे तू नां मरुए दी डाली हो

तू नां चल्लिआ प्रदेशां कुँजूआ
मिजो देई जा निशानी हो
हाए ओ मेरीए जिंदे मिजो देईजा निशानी हो

पंज ओ रुपईए मिजो नाल चचलो
अँगूठी दिदा निशानी हो
हाए ओ मेरीए जिंदे अँगूठी दिदा निशानी हो

मेरा ओ चेता नी भुलाइआ कुँजूआ
मिजो करी लैंणा चेता हो
हाए ओ मेरीए जिंदे मिजो करी लैंणा चेते हो

ये नां रहिणी निता दी याद चंचलो
भावें मरीए जाहींणा हो
हाए ओ मरीए जिंदे भावें मरीए जाहींणा हो

नित जो होइआ सलामा कुँजूआ
शिव जी करला रखवाली हो
हाए ओ मेरीए जिंदे शिव जी करला रखवाली हो

---

१ यह चम्बा की एक प्रसिद्ध प्रेम-कथा है और इसका गीत कई रूपों में मिलता है आम तौर पर लड़कों की जोड़ियाँ गाती हैं एक लड़का चचलो बनता

राहे विच बंगलू तेरा

भला मीआँ मनलेटूआ ओ राहे विच बंगलू तेरा
तेरी सौंह राहे विच बंगलू तेरा
कि पल भर बहिणा रे

मार्तीआँ दीआँ छावा दुख-सुख करना रे
तेरी सौंह राहे विच बंगलू तेरा
कि पल भर बहिणा रे

हुइ बडी दे ठिआले पल भर बहिणा रे
भला मीआँ मंगलेटूआ राहे विच बंगलू तेरा
कि पल भर बहिणा रे

कि कामलोगीए दीआँ बाई पर पाणी पीणा रे
कि कुछड़ बालक निआणा रो दूबे पिआणा रे
कि पल भर बहिणा रे

जेठ महीने दीआँ धुपाँ कि करनी तापी रे
भला मीआँ मंगलेटूआ राहे विच बंगलू तेरा
कि पल भर बहिणा रे

छीणी

अमीचंद राजा बूह पर न्हान्दा
छीणी पाणीए आई
सदिआं चौहाँ कहारां नूं
छीणी डोले जे पाई

छोड़-छोड़ राजिआ सालूए दा लड
मै हां नार पराई
मैं कीहाँ छड्डाँ साल्लूए दा लड
मैनूँ प्रीत जो आई

अदरों निकली राणी
डोला किस दा आइआ
राणी पुछदी गोलीआं नूँ
डोला किस दा आइआ

गोलीआं आखण राणी नूँ
छीणो नौकण आई
राणी बठाई पीढे
छीणा पलँगे बहाई

राणी ने दित्तीआँ पिनीआँ
तेरे पेईए ने आईआँ
अद्धी जो पिनी खा लई
जीआ तिर मिर ल्लाई

सारी जे पिनी खा लई
छीणी मर जै गी
मखिओ अमीचद राजे नूँ
छीणी मर जै गी

राजा जे पुछदा राणीआं नूँ
छीणीआं कीआ ए जे होइआ
अदरों निकलिआ काला नाग
उन्ने डंग चलाइआ

राजा जे पुछदा मालीआ
छीणी कीआ ए जे हांडआ
अंदरों निकलिआ काला नाग
उन्ने डंग चलाइआ

सदिओ चौहाँ कहारां नूं
छीणी डगां नूं नेदी
चंनण रुक्ख कटाइआ
छीणीआँ दाग जे दिने

पानो गुजरीए

रेहलूए दे मेरीआँ पण्णीआँ रहीआँ की राजा गुलेरीआ
पण्णीआँ दे बदले तिजो पर्णाआँ ओ दिगा
तिल्ले दा भरगा जरीमाना की पानो गुजरीए

रेहलूए दे हारे मेरा कुरता रहीआ की राजा गुलेरीआ
कुरते दे बदले तिजो कुरता मैं दिगा
बटनाँ दा भरगा जरीमाना की पानो गुजरीए

रेहलूए दे हारे मेरा कडीआ जो रिहा की राजा गुलेरीआ
कडीआ दे बदले तिजो कडीआ ओ दिगा
डोरों दा भरगा जरीमाना की पानो गुजरीए

रेहलूए दे हारे मेरा बिन्ना रिहा की राजा गुलेरीआ
बिन्ने दे बदले तिजो बिन्ना ओ दिगा
झालराँ दा भरगा जरीमाना की पानो गुजरीए

रेहलूए दे हारे मेरी डल्ली ओ रही की राजा गुलेरीआ
डल्ली दे बदले तिजो डल्ली ओ दिगा

मघीआँ दा भन्गा जरीमाना की पानो गुजरीए

खाणा पीणा वे नँद लाणा

खाणा पीणा वे नँद लाणा वे घुमारूए
भरीआ चिलमा दम लाणा
वे घुमारूए भरीआ चिलमा दम लाणा

सोलनी दा टिकट कटाई दे वे घुमारूए
शिमले दी सैर कराई दे वे घुमारूए
नेरीआँ मोटराँ दे विच वे घुमारूए

खाणा पीणा वे नँद लाणा वे घुमारूए
भरीआ चिलमा दम लाणा
वे घुमारूए भरीआ चिलमा दम लाणा

जाती मेरीआ जो सभ कोई जाणदे
मित्रो ना जाती दा भेद
जाती पाती दा भेद मिटाना वे घुमारूए

खाणा पीणा वे नँद लाणा वे घुमारूए
भरीआ चिलमा दम लाणा
वे घुमारूए भरीआ चिलमा दम लाणा

पिपले दे हेठ गोरी कीह् खड़ी

पिपले दे हेठ खड़ोती की
कन्नी गोरी कीह् खड़ी
किआ तेरे पेईए दूर
किआ घरी सस्स बुरी

बन्ना चलेदीआ सपाहीआ की
तिजो मेरी किआ पई
ना मेरे पेईए दूर
ना घरी सस्स बुरी

सिरे जो दिगा तिजो चौंक
कने दिगा फुल्लाँ जोड़ी
चली पै सपाहीआँ दे नाल
दिगा पिआरीए सुख घड़ी

अग्ग नाँ लग्गे तेरी चौंकि की
नदीआँ रूड़िओ फुल्लाँ जोड़ी
जद घरी आहूँगा लाल गोरी दा
नाँ हल करनी सुख घड़ी

वहिने जो दिगा पीड़ा की
कतने जो चरखड़ी
चली पै सपाहीआँ दे नाल
रहिणा पिआरीए सुख घड़ी

अग्ग नाँ लग्गीओ तेरे पीहड़े की
नदीआँ रुड़िओ चरखड़ी
जद घरीं आहूँगा लाल गोरी दा
नाँ हल करनी सुख घड़ी

हथाँ जो दिगा तिजो चूड़ी की
गले जो सत लड़ी
चली पै सपाहीआँ दे नाल
दिगा पिआरीए सुख घड़ी

अग्ग ना लग्गे तेरीआँ चूड़ीआ की
नदीआँ लड़िओ सत लड़ी
जद घर आहूँगा लाल गोरी दा
नाँ हल करनी सुख घड़ी

धन्न-धन्न तेरे माँ-बाप गोरीए
जिनाँ तूँ धेतड़ी जाई
धन्न तिस रसीए दा भाग
जिस दे तूँ लड़ लाई

इक गल्ल सुणदी जाइआँ

खूहे पर बैठीए हाँ नी मुटिआरे
इक गल्ल सुणदी जाइआँ नी बाँकीए नारे नी

राहीआ जाँदिआ हो वो सिपाहीआ
किआ गल्ल गलाँदा नूँ बाँकीआ राहीआ ओ

धुपाँ कन्ने जल्ली वो चले हाँ नी मुटियारे
पानीए दा घुट पिला नी बाँकीए नारे नी

डोल ते रस्सा मैं देई देंदी वो सिपाहीआ
आपूँ ही भरी के पी ओ बाँकीआ राहीआ ओ

आपूँ ना अगा लक्खा वारी पीदे नी मुटिआरे
तेरे हत्थी पीणे दा चाव नी बाँकीए नारे नी

पाणी ताँ पिआई बी दित्ता आ सिपाहीआ
होर किआ गलाँदा नूँ ओ बाँकिआ राहीआ ओ

पाणी तां असां पी वी लित्ता नी मुटिआरे
हुक्के दा दम वी लगवा नी बाँकीए नारे नी

चिलम तमाकूए की मैं देई दित्ती हां ओ सिपाहीआ
आपूं ही भरी भरी पी ओ बाँकिआ राहीआ ओ

आपूं तां असां लक्ख वारी पीदे हां नी मुटिआरे
तेरे हत्थों पीणे दा चा नी बाँकीए नारे नी

तमाकू तां असीं भरी दित्ता हा ओ सिपाहीआ
होर किआ गलांदा तू ओ बाँकिआ राहीआ ओ

तमाकू तां असां पी वी लित्ता हां नी मुटिआरे
रोटीआं दा टुकड़ दे नी बाँकीए नारे नी

दाल तां चौल मैं देई दित्ती हां ओ सिपाहीआ
आपूं पका आपूं खा ओ बाँकिआ राहीआ ओ

आपूं तां असीं लक्ख वारी खांदे हां नी मुटिआरे
तेरे हत्थीं खाणे दा चा नी बाँकीए नारे नी

रोटी तां असां करी वी दित्ती हां ओ सिपाहीआ
होर किआ गलांदा तूं ओ बाँकीआ राहीआ ओ

रोटी तां असां खा वी लिन्नी हां नी मुटियारे
सोने जो कपड़े दे नी बाँकीए नारे नी

लेफ तलाई मैं देई दित्ती हां ओ सिपाहीआ
आपूं बिछा आपूं सौं ओ बाँकीआ राहीआ ओ

दुक्ख मैं तौ की वड़ा दित्ता नी मुटिआरे
धरमे दी भैण हाँ तूँ नी बाँकीए नारे नी

आए गए दी सेवा करनी हाँ वो सिपाहीआ
असाँ दा है पहिला चा ओ बाँकिआ भाईआ ओ

खूहे दीआँ बोलाँ सँभाल

खूहे ऊपर खड़ोनीए मुटिआरे नी
पाणी दा घुट्ट पला बाँकीए नारे नी

कच्छ वड़ा कच्छ लोटका जी सिपाहीआ जी
आपूँ डोलो आपूँ पीउ असाँ तेरे महिरम नाही

आपणा ताँ भरिआ निन्न पीणा मुटिआरे नी
तेरे हत्थाँ दा न्हाँदे पतलीए नारे नी

भँन घड़ा कर ठीकरी चल सिपाहीआ जी
तूँ चल मेरे नाल पतलीए नारे नी

तेरे जिहे दो छोकरे जी सिपाहीआ जी
माँडे बापूए दे चरबेदार औंदिआ राहीआ जी

तेरे ताँ जिहीआँ दो गोरीआँ पतलीए नारे नी
साडी माँऊ दीआँ पैनहार पतलीए नारे नी

घर गई सस्स पुछे नूँह सेगोए
एडी देर कुथू लाई पतलीए नारे नी

खूहे दे ऊपर छोकरू माए मेरीए नी
बैठा था झगड़ा पाए असाँ उहदे महिरम नाही

किहो ताँ जिहीआँ उहदीआँ अक्खीआँ नूँहे मेरीए नी
किहो जिही उही नुहार पतलीए नारे नी

नणदा ताँ जिहीआँ उहदीआ अक्खी माए मेरीए
तेरे ताँ जिही उहदी नुहार असाँ उहदे महिरम नाही

तेल कटोरीआ पाई लिआ नूँहे मेरीए नी
करिआ सिपाहीआँ दो टहिल पतलीए गोरीए नी

तेल कटोरीआ चोई गिआ जी सिपहीआ जी
दरे दीआँ भित्ताँ खोल्ह वाँकिआ माहीआ जी

दरे दीआँ भित्ताँ कीहाँ खोल्हाँ मुटिआरे नी
खूहे दीआँ बोलाँ सँभाल पतलीए नारे नी

निक्कीआँ ता हुदीआँ विआही गिआ जी सिपाहीआ जी
हुण होई मुटिआर बाँकीआ राहीआ जी

अंबे दा बूटा कंत साडे लाँदे

अंबे दा बूटा कंत साडे लाँदे
ते मरूआ किआरीआ असीं लानीआँ
ओ जिंदे असीं लानीआँ
ओ चंदा असीं लानीआँ

अंबे की पाणी कंत साडे दिंदे
ओ मरूए की पाणी असीं दिनीआँ

दुक्ख मैं तौ की बड़ा दित्ता नी मुटिआरे
धरमे दी भैण हौ तूं नी बाँकीए नारे नी

आए गए दी सेवा करनी हाँ वो सिपाहीआ
असाँ दा है पहिला चा ओ बाँकिआ भाईआ ओ

खूहे दीआँ बोलाँ सँभाल

खूहे ऊपर खड़ोतीए मुटिआरे नी
पाणी दा घुट्ट पला बाँकीए नारे नी

कच्छ घड़ा कच्छ लोटकी जी सिपाहीआ जी
आपूं डोलो आपूं पीउ असाँ नेरे महिरम नाही

आपणा ता भरिआ निन्न पीणा मुटिआरे नी
तेरे हत्थाँ दा च्होंदे पतलीए नारे नी

भँन घडा कर ठीकरी चल सिपाहीआ जी
तूं चल मेरे नाल पतलीए नारे नी

तेरे जिहे दो छोकरे जी सिपाहीआ जी
साडे बापूए दे चरबेदार जाँदिआ राहीआ जी

तेरे ताँ जिहीआँ दो गोरीआँ पतलीए नारे नी
साडी माँऊ दीआँ पनहार पतलीए नारे नी

घर गई सस्स पुच्छे नूँह मेरीए
एडी देर कुथू लाई पतलीए नारे नी

खूहे दे ऊपर छोकरू माए मेरीए नी
बैठा था झगड़ा पाए असां उह्दे महिरम नाहीं

किहो तां जिहीआं उह्दीआं अक्खीआं नूंहे मेरीए नी
किहो जिही उद्दी नुहार पतलीए नारे नी

नणदा तां जिहीआं उह्दीआं अक्खी माए मेरीए
तेरे तां जिही उह्दी नुहार असां उह्दे महिरम नाहीं

तेल कटोरीआं पाई लिआ नूंहे मेरीए नी
करिआ सिपाहीआं दी टहिल पतलीए गोरीए नी

तेल कटोरीआ चांई गिआ जी सिपहीआ जी
दरे दीआं भितां खोल्ह बांकिआ माहीआ जी

दरे दीआं भितां कीहां खोल्हां मुटिआरे नी
खूहे दीआं बोलां सँभाल पतलीए नारे नी

निक्कीआं ता हुंदीआं विआही गिआ जी सिपाहीआ जी
हुण होई मुटिआर बांकीआ राहीआ जी

अंबे दा बूटा कंत साडे लांदे

अंबे दा बूटा कंत साडे लांदे
ते मरूआ किआरीआ असीं लानीआं
ओ जिदे असीं लानीआं
ओ चदा असीं लानीआं

अंबे की पाणी कंत साडे दिंदे
ओ मरूए की पाणी असीं दिनीआं

ओ जिदे अऊं दिनीआ
ओ चन्ना अऊं दिनीआ

अँबे की गोडी कंत साडे दिद
ओ मरूए दी गोडी अऊं देनीआ
ओ जिदे अऊं देनीआ
ओ चदा अऊं देनीआ

अबे दी छाइआ कन्त साडे बहिंदे
ओ मरूए दी छाया अऊं बहिनीआ
ओ जिदे अऊं बहिनीआ
ओ चदा अऊं बहिनीआ

ओ पाणी कीआँ कगी भरनाँ

खड़ीआं कुआलीआं वस मेरे पीडीआं
हो पीड लग्गी जली सखीआ
हो पाणी कीआँ कगी भरना नूरपुरे दीआ घटीआं

भिआगा जो हुँदिआं मैले दा टोकरू
सिरे पर रखी देंदीआं
हो पाणी कीआ कगी भरना नूरपुरे दीआ घटीआ

छल्लीआँ दी रोटी सरसा दा साग
निखदा कालीआ हंडीआं
हो पाणी कीआँ कगी भरना नूरपुर दीआ घटीआं

नूकिआ घड़ोलू सीनी पर धरिआ
मत बल पई जांदे सखीआ
हो पाणी कीआं कगी भरना नूरपुरे दीआ घटीआं

ते सुंदर

पाणी भरी लैणा इंघे नालूए
जाती दा किआ पुछला भन्न खाई मैणा इक आलूए

फुल्ल फुल्लिआ समेत छड़ीआ
अज्ज गयी नेरे प्राहुणे कन्न जाणा मुकेन मडीआ

फुल्ल फुल्लिआ कोगी पिपली
सुंदरे दा बोलना सुणी गयी अन्दरे नीं बाहर निकली

फुल्ल फुल्लो के सुक्की औ गिआ
चल गयी नम्म चलोए साडा अनजल मुक्कीओ गिआ

फुल्ल फुली के लोंडी औ दित्ता
कौनी माडी चुगली लाई कौनी सुंदर बिछोड़ी औ दित्ता

घडा भरीआ दिलो बिल्लीआं
गगीए दा बोलणा सुणी सुंदर जलदा दिलो दिल्लीआं

लग अंगने चा बज्जे नब्जे
लुकी छिपी आइआ सुंदरा नेरे बरीआं ने लैणे बदले

कधी भल्ली देणी पेर देई के
इक आनी मिल गयीए चाहा मागी दिआ जहिर देई के

डा भरी जा

छैला पडतुआ मेरा घडा भरी जा
घडा भरी जाई बलमां ओ छैला पडतुआ

चुकिआ घड़ोलू गोरी पाणीए जो जाँदी
खिआ डिंगे नैरे वाही जो भलीआ भलीआ

वाही करे हत्थ मत लांदा भलीआ
मत लांदा भलीआ जो वगा भज जाँदीआँ

सस्स आँ ननाण दिंदी गाली आँ
हो वगा भज जांदीआँ

सस्स नें ननाण मेरा जनमे दी वैरन
उदी वहा भिजां दिंदी गालीं आँ

मेरा भरोद घड़ा आँ ठैला पड़तूआ
घड़ा भरी जाई बरमा

घड़ोलू कीआँ भन्निआँ

घड़ोलू कीआँ भन्निआँ
कोई पुछे दिन दे सईआँ नूँ

सिरा दे वे मालूआ नाका दे बालूआ
चलदी वे निजो ठोकर लगिआँ
घड़ोलू कीआँ भन्निआँ

मंडी शिवरात्री कुलू दे दसीहरे
मुकेता गो नुलाड़ीए जे खरीदिआ वे
घड़ोलू कीआँ भन्निआँ
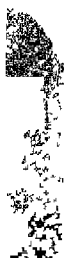
मूने दा ना घड़ोलू रुपे रा नी बणिआ
माटीए रा बणाइआ है
घड़ोलू कीआँ भन्निआँ

पाणी वो भरी के बौंडी पर रखिआ
चकदिआँ भज्जी गिआ हो
घड़ोलू कीआँ भन्निआँ

े ना मार अक्खीयाँ

या मर घड़े दा त्रिल मंघड़ा
मिलणा ताँ मिल छोरीए
असाँ टर जाणा मंडी कांगड़ा

ओ घड़ा भरना धोई-धोई के
ए ताँ नार बगानी छोल्आ
कैमी भरदा रोई-रोई के

मेरी कुरती लाणी कीगरी
दूर ने ना मार अक्खीआँ
नेड़े आ मिल ले जिदड़ी

े ते चतरू

चतरू ने मुरली बजाई वो
चन्नो छोरी पानीए जो आई वो

वैरीआँ वैर कमाइआ वो
चतरू भरती कराइआ वो

कंत मेरा मोही लिआ

कंत मेरा मोही लिआ
मोहणीआं चालां दे नाल
इस तो बाद आ गई नींदा
ना बैठी पीहे नूँ डाह

सुण नी सदीए गवांढणे
मेरे घर मत आ
कंत मेरा मोही लिआ
मिठ्ठे बोलाँ दे नाल

ना मैं तेरे घर गई
ना मैं लिआ तेरा
कंत आपणे वरजी लिआ
डाढिआं सगलां दे नाल

चरखा गोरी दा रँगला[1]
बैठी पीहे नूँ डाह
कंत मेरा मोही लिआ
मोहणीआँ चालाँ दे नाल

चंबे दीए डालड़ीए

चंबे दीए डाल्ड़ीए
मोईए बेआस ना हो

---

१ इस लोक-गीत में दो पड़ोसिनों का आपस में झगड़ा चलता है। एक पड़ोसिन दूसरी से कहती है कि तू मेरे घर आना बन्द कर दे, क्योंकि मेरा पति तेरी तरफ खिंच गया है। वह उसको जवाब देती है कि तू अपने पति को रोक ले।

ओने अज्ज आई पुजणा
बनी बनी खिली खिली पो
आउंदे कने दुलीआं बसाई देणी
मेरी दिले दी कली खिलाई देणी
मोईए शताबी ना पो
चबे दीए डालडीए
मोईए बेआस ना हो

ओने अज्ज आई पुजणा
बनी बनी खिली खिली पो
ओने आउणा नजो साउगी लई जाणा
तुसाँ इथों जाई करी नीआं बसेरा पाणा
मोई चाओ ए चाओ
चबे दीए डालडीए
माईए बेआस ना हो

दिल जान जानीआँ

तेरा लौंगा लाइ के मेरा नाका दुक्खदा
तेरा लौंगा मैं नहीं लाणा दिल जान जानीआँ

तेरी बगाँ ने ला मेरी बाँह दुक्खदी
तेरी बंगाँ मैं नहीं लाणी दिल जान जानीआं

तेरा फुल्ल बूट पा मेरे पैर दुक्खदे
फुल्ल बूट मैं नहीं पाणे दिल जान जानीआ

तेरी घोड़ी चढ़ के मेरा लक्क दुक्खदा
मैं ते जीप मंगाणी दिल जान जानीआ

तेरे वाले ने ला मेरे कान दुखदे
तेरे वाला मैं नहीं लाणे दिल जान जानीआं

तेरा कैंठा ने ला मेरा गला दुखदा
तेरा कैंठा मैं नहीं लाणा दिल जान जानीआ।

दिल जान सुहणिआ

लौंग पाई लै लै बाँकी लगदी
इह लौंग नूँ पाई लै दिल जान सुहणीए

लौंग पाई के मेरा नाका दुखदा
मिजो नीली लिआई दे दिल जान सुहणिआ।

हारा पाई लै लै बाँकी लगदी
इह हारा नूँ पाई लै दिल जान सुहणीए

हारा पाई के मेरा गला दुखदा
मिजो पैंडल लिआई दे दिल जान सुहणिआ

फुल बूटा पाई लै असां जोन लघणी
इह फुल बूटा पाई लै दिल जान सुहणीए

फुल बूटा पाई के मेरा पैर दुखदा
मिजो सैंडल लिआई दे दिल जान सुहणिआ

नूँ घोड़ी चढ़ी जा नी बाँकी लगदी
इह घोड़ी नूँ चढ़ी जा दिल जान सुहणीए

घोड़ी चढ़ी के मेरा नाका दुक्खदा
मिजो जीप लिआई दे दिल जानि मुहणिआ[1]

जीऊड़ा किजो डोलणा

जीऊड़ा नी डोलणा मँदणा नी बोलणा
करी लीणी मौज कंता
जीऊडा किजो डोलणा

भरी के बदूकड़ू मोडे पर रखिआ
मारी लैणी तित्तरे दी जोड़ी
चदा जीउड़ा किजो डोलणा

अग्गे अग्गे बीड़ू पिच्छे पिच्छे पिपड़ू
बोलीआँ मी गईआं पक्कीआं
चदा जीऊडा किजो डोलणा

मरने ते नी डरनाँ

मंडीआँ जे तेरीआं राजा जे बसदा
रेहलू ई ताँ बसदी राणी
मरने ते नी डरनाँ भला प्रीत कीहाँ लाणी

खड्डाँ जे तेरीआँ पत्थर मुणीदे
जबर मुणीदा पाणी
मरने ते ना डरनाँ भला प्रीत कीहाँ लाणी

---

१. एक पहाड़न अपने प्रेमी से इस गीत में कहती है कि मैं तेरी कोई भी चीज़ नहीं पहनूंगी और प्रेमी को ताने देती है।

छोटा जिहा गभरू मुणींदा बस्सवा
नूँ मर जाएँ चुड़ुआ खस्समाँ
मैं तेरे नहीं ओ बसणा

चढ़ी चाँदनी रातीं

ठंडा पाणी चढ़ी चाँदनी राती
ओहले पतन्नू दा नाल्ला
पाणी पीणा तेरे हाथे दा गोरीए
लिआँ नूँ लोटे दी मझी

लोकें दे बागी फुलण जो फुल्लदे
म्हाड़े जो बागी केले
अज दी रातीं निभणा नाँ मिल लै
फेर संजोगाँ दे मेले
ठंडा पाणी चढ़ी चाँदनी राती

लोकें दे बागे फुलणू जो फुल्लदे
म्हाड़े बागे फुल गोभी
लैंणे देणे दी गल्ल नहीं वीणीए
नैणाँ तेदिआँ दे लोभी
ठंडा पाणी चढ़ी चाँदनी रातीं

मत जिंदा जो मेरी तरसाँदी ओ

देश ते चलिआ सिन्नकोट भावीए नी मुईए
चिट्टे चिट्टे दद गुलाबी होंठ भावीए नी मुईए
मत जिंदा जो मेरी तरसाँदी ओ

देर ते चलिया कसूर भावीए नी मुंईए
हड्डीआं दा होई जांदा चूर भावीए नी मुंईए
मन जिंदा जो मेरी नरमांदी ओ

देर ते चलिया जलधर भावीए नी मुंईए
मंजा डाह न ठंडे अंदर भावीए नी मुंईए
मन जिंदा जो मेरी नरमांदी ओ

देर ते चलिया गुलेर भावीए नी मुंईए
तकके जो निआंणा बेसर भावीए नी मुंईए
मन जिंदा जो मेरी नरमांदी ओ

देर ते चलिया नादौन भावीए नी मुंईए
मुड़ी के आंदा नहीं माड़ा औण
मन जिंदा जो मेरी नरमांदी ओ

चाँचड़ी दा दाणा

जो तूं चाँचड़ी दा दाणा
तां मैं चाँचड़ी बण जाणा

जे तूं चांचड़ी बण जाणा
तां मैं नौकरीआं चले जाणा

जे तूं नौकरीआं चले जाणा
तां मैं रोंदीआं चुप्प नहीं जाणा

जे तूं रोंदीआं चुप्प नहीं जाणा
तां मैं घरे जो आई जाणा

जे तूँ घरे जु आई जाणा
ताँ मैं चरखे तंद नहीं पाणा

जे तूँ चरखे तंद ना पाणा
ताँ मैं होर विआह कराणा

जे तूँ होर बिआह कराणा
ताँ मैं अद्धो-अद्ध वँडाणा

कुंडा किहने खड़काइआ

बाराँ ता बरिहाँ कन गए होईआँ
उजाड़ी मेरा घर है मेरा

इक दिन होइआ इक दिन होइआ
मुसाफिर आइआ जी
मँगदा है कोठीआ डेरा
कोठीआ डेरा नहीं मिलदा
तूँ मेरी भाबी मैं तेरा दिउर
कंने तेरे दा छोटा भाई
चौका लगानीआँ रसोई बणानीआँ
सीणा नाँ राजे दी नगरी

अद्धी-अद्धी रानी पहिर सवेला
कुंडा किन्हे खड़काइआ
अंदर मेरे कोह्गग दी सोटी
मार भन्ना बक्ख तेरी
अंदर तिखीआँ तलवाराँ
मार फोड़ाँ सिर तेरा

तूँ मेरी गोरी मैं तेरा कंत
माण तेरा मैं लिआ

घड़ी दे मुनिआरा

घड़ी दे मुनिआरा हत्थी दे मुँदरू
जिन्हाँ दे लाई दे बोर वो
जिन्हा दीआँ नूँ वे तकदा
तेरीआँ जो तक्कदे होर वो

घडी दे मुनिआरा मेरे कन्नाँ दे काँटे
जिन्हाँ दे लाई दे बोर वो
जिन्हाँ दीआँ नूँ वे तक्कदा
तेरीआँ जो तक्कदे होर वो

घड़ी दे मुनिआरा मेरे पैरों दीआ झाजराँ
जिन्हाँ दे लाई दे बोर वो
जिन्हाँ दीआँ नूँ वे तक्कदा
तेरीआँ जो तक्कदे होर वो

मिझो बालू घड़ाई दे

मैं जो गलाइआ मिझो बालू घड़ाई दे
बिआहे जो होणा किआ जाणा हो इमरूआ

हुण दी फसल दे दाणे तूँ आउण दे
मिझो घड़ाई देणा बालू हो रहिनीरू

मैं जो गलाइआ मिझो बूट नूँ लिआई दे
बिआहे जो होणा किआँ जाणा हो इमरूआ

हुण दी फसल री करी लै निहाल तूँ
निझो लिआई देआँ बूट हो

आप तां बैठा बैठा हुक्का तूँ पीदा
मिझो नी लिआई देंदा काटे

हुण दी कणक री करी लै निहाल तूँ
निझो घड़ाई देसाँ काँटे

जिंद जान सोहणीए

मेरा जुत्ता पाई के तूँ तां बाँकी लगनी हो
मेरे जुत्ते जो पाई ले जिंद जान सोहणीए

तेरे जुत्ते जो पाई के मेरे पैर दुखदे हो
मैनूँ सैंडल मँगवाई दे जिंद जान सोहणिआ

मेरा चोला पाई के तूँ तां बाँकी लगदी हो
मेरे चोले जो पाई ले जिंद जान सोहणीए

तेरा चोला पाई के मेरे अंग दुखदे हो
मैनूँ जम्पर सुआई दे जिंद जान सोहणिआ

मेरा जामा पाई के तूँ तां बाँकी लगनी हो
मेरा जामा जो पाई ले जिंद जान सोहणीए

तेरा जामा पाई के मेरी लक्क दुखदी हो
मैनूँ साड़ी मँगाई दे जिंद जान सोहणिआ

महिलाँ दे थल्ले जाँदिआ जवानाँ

महिलाँ दे थल्ले थल्ले जाँदिआँ जवानाँ
महिलाँ दे अंदर आइआ
हरे रुमाले वालिआ राँझणा

महिलाँ दे अंदर कीआँ आवाँ गोरीए
साथी चले जांदे दूर
महिली चुबारे बैठीए गोरीए

साथीआँ तेरीआँ जो चिट्ठीआँ भेजाँ जवानाँ
नाले भेजा चौकीदार
हरे रुमाले वालिआ राँझणा

महिलाँ दे थल्ले-थल्ले जाँदिआ जवानाँ
महिलाँ दे अंदर आइआ
हरे रुमाले वालिआ राँझणा

महिलाँ दे अंदर कीआं आवाँ गोरीए
लोकि जा गई जाँदे चोर
महिली चुबारे बैठीए गोरीए

लोके तेरे जो पीहरु भेजाँ जवानाँ
नाले भेजाँ चरखेदार
हरे रुमाले वालिआ राँझणा

किन्हे रँगी तेरी पगड़ी जवानाँ
किन्हे कढ़िहआ रुमाल
हरे रुमाले वालिआ राँझणा

भैण रंगी मेरी पगड़ी गोरीए
नारे कढिआ श्रो रुमाल
महिली चुबारे बैठीए गोरीए

किहो जिही तेरी भैनड़ी जवानाँ
किहो जिही तेरी नार
हरे रुमाले वालिआ राँझणा

तेरे जिही मेरी भैनड़ी गोरीए
तेतों सवाई मेरी नार
महिलीं चुबारे बैठीए गोरीए

बिज्ज पवे तेरी भैनड़िआ जवानाँ
नार डसे काला नाग
हरे रुमाले वालिआ राँझणा

बिज्जु हुंदी मेरी भैनड़ी गोरीए
नाग कुले दा परोहत
महिली चुबारे बैठीए गोरीए

महिला दे अंदर कीआं आवां गोरीए
महिलां दे अंदर बैठीए सुहणीए
महिली चुबारे बैठीए गोरीए

लम्भू लंबड़ बुरा

अक्खी नी गोरीए तेरीआं जिउं अंब दीआं डली
कजला सोभी सोभी पउंदा
मन डोली डोली जांदा
कजला पाणा नहीं ओ दिंदा

मेले जाणा नही ओ दिदा
लभ्भू लंबड़ बुरा

अक्खी नी गोरीए तेरीआँ रंगे दीआँ फलीआँ
कैसे सोभी सोभी पउँदे छल्ले छापाँ ओ भला
छापाँ पाणा नही ओ दिदा
अक्खी लाणा नही ओ दिदा
मेले जाणा नही ओ दिदा
लभ्भू लबड़ बुरा

मत्था जो गोरीए तेरा जिउँ बदली दा चन्ना
कैसे सोभी सोभी पउँदे बिंदीआँ टिक्के ओ भला
बिंदीआँ लाणा नहीं ओ दिदा
टिक्के पाणा नही ओ दिदा
मेले जाणा नही ओ दिदा
लभ्भू लंबड़ बुरा

गल्ल सुणी जा

गल्ल सुणी जा हो मेरी गल्ल सुणी जा
ओ अड़िआ गल्ल सुणी जा
ओ भलिआ गल्ल सुणी जा

चोली फटे ताँ मैं टाकीआँ लावाँ
अंबर फट्टे कीआँ सीणा
गल्ल सुणी जा ओ

दिखदीआ दिखदीआँ गुजरीआँ रातां।
पता नही तिजो कुण जिहीआँ रांकाँ
चंदरीआ जात कुजाता

गल्ल सुणी जा हो मेरी गल्ल सुणी जा
ओ अड़िआ गल्ल सुणी जा
ओ भलिआ गल्ल सुणी जा

मेरा बनाई दे रुमाल

दिल दिआ पिआरिआ
मेरा बनाई दे रुमाल

बजाजी दे जाँदा
कपड़े लै आँदा
दिल दिआ पिआरिआ ओ
मेरा लिआई दे रुमाल

दरजी दे जाँदा
कपड़े सी आँदा
दिल दिआ पिआरिआ ओ
मेरा सिआई दे रुमाल

धोबी दे जाँदा
कपड़े धुआँदा
दिल दिआ पिआरिआ ओ
मेरा धुआई दे रुमाल

अगणाँ ताँ तेरे चंबा खिड़िआ

बाहर तां कुण खड़ा सज्जणा
पखलिआ माहणूआ ओ

रसते ते भुलिआ नी इयाणीए
पखला बो मैं माहणू ओ

अगण ताँ तेरे चबा खिड़िआ गोरीए
लाई वो लैणा कालिआँ केसाँ वो

जली वी जाइओ चंबे फुल मजणा
भाइआ जली वो जाइओ काले केस ओ
जिन्हाँ वी कारन चबा लाइआ सज्जणा
भाईआ ओ वी गए परदेस ओ

की वो जलन चंबे फुल गोरीए
कीं वो जलन काले केस ओ
जिन्हाँ दे कारन चंबा लाइया इयाणीए
आई रहीए इत देस ओ

दो चाई दे पत्ते

दो पत्ते चाई दे पतीला पाणी दा
सवाद नही ओ लगदा खसम खाणी दा

अज्ज बणावाँ चाह हाए कल्ल दणावाँगे
परसों चीनो जाके हाए किन्ने लावाँगे
दो पत्ते चाई दे पतीला पाणी दा
सवाद नही ओ लगदा खसम खाणी दा

कुड़ी दा भाईआ कहिंदा मैनूँ गलास भरी दे
नही ते आपणी कंडी हाए गहिणे धरी दे
दो पत्ते चाई दे पतीला पाणी दा
सवाद नही ओ लगदा खसम खाणी दा

दिल मेरा मोहिआ तूँ ने

परसा परसू परसरामाँ
दिल मेरा मोहिआ तूँ ने

साडी वागीं पक्के केले
अज विछड़े कल मेले
ओ आ के मिल ले परसरामाँ
दिल मेरा मोहिआ तूँ ने

आईआँ गड्डीआँ देंदी हरना
तीन जनीआँ बाहर खड़ीआँ
ओ आ के मिल ले परसरामाँ
दिल मेरा मोहिआ तूँ ने

साडी वागी पक्के नीबू
फड़ ले डाली तोड़ ले नीबू
हँस हँस के परसरामा
ओ दिल मेरा मोहिआ तूँ ने

प्रदेसाँ ना जा

घोड़े जो पानी आ हिग
गोरी कीहाँ जोगी तुसाँ प्रदेस चले
प्रदेसाँ दे मामले डाहडे ओ ढोला

तेरे घोड़े जो पानीआ सजी
नूँ बड़ा मुसती घर रोंदी ना छड्डी
प्रदेसाँ दे मामले डाहडे ओ ढोला

तेरे घोड़े जो पानीआँ घाह
मैं कत्ताँ तूँ लाह घर बैठा खा
प्रदेसाँ दे मामले डाहडे ओ ढोला

तेरे घोड़े जो पानी दाणा
मैं कत्ताँ तूँ लाणा घर बैठा खाणा
प्रदेसाँ दे मामले डाहडे ओ ढोला

दिल मेरा लै गिआ चोर

हरी भरी वाँराँ ते साजन चलिआ
दिल मेरा लै गिआ चोर
उचे-उचे परबत रिम-झिम बरखा
तेरी याद आई बड़े ज़ोर

रस्म भरी याद तेरी कपटी जा दिलड़ू
अक्खीआँ नी आवे धरू
पारीए ही जाणा देसों
तेरा करी दें चूर

जीजा चलिआ नौकरीआँ

सुण सालीए ओ
जीजा चलिआ नौकरीआ
जो मँगणा सो मँगले जीजा चलिआ नौकरीआ

ओ जीजा जी
इक्क लिआइओ लाल चूड़ा इक्क लिआइओ बिंदीआ
इक्क लिआइओ सुच्चे मोती इक लिआइओ चुन्नीआ

ओ सालीए ओ
कित्त पाउणा लाल चूड़ा कित्त लाणीआं बिंदीआ
कित्त पाणे मुच्चे मोती कित्त लाणीआं चुन्नीआ

ओ जीजा जी
हथ पाणा लाल चूड़ा मथे लाणी बिंदीआ
गले पाणे मुच्चे मोती सिरे लैणीआं चुन्नीआ

ओ सालीए ओ
कुन देखे लाल चूड़ा कुन देखे बिंदीआ
कुन देखे मुच्चे मोती कुन देखे चुन्नीआ

ओ जीजा जी
मथुरा देखे लाल चूड़ा सस्स देखे बिंदीआ
ननाण देखे मुच्चे मोती होर देखे चुन्नीआ

ओ सालीए ओ
लिआई दे मेरा लाल चूड़ा लिआई दे मेरी बिंदीआ
लिआई दे मेरे मुच्चे मोती लिआई दे मेरी चुन्नीआ

ओ जीजा जी
टुट्टी गिआ लाल चूड़ा गुआची गईआं बिंदीआ
भज्जी गए मुच्चे मोती फटी गईआं चुन्नीआ

ओ सालीए ओ
जीजा चलिआ नौकरीआ
होर मँगणा सो मँग लै जीजा चलिआ नौकरीआ

कदने घर आमणा जी

कच्चीआँ कलीआँ ना तोड़ राजे दिआ नौकरा जी
पकणे दे दिन चार सुक जाँदीआँ कलीआँ ओए

सुनी पई नूँ ना छेड़ राजे दिआ नौकरा जी
सुनी पई दा दिल दूर असी नहीं बोलणा जी

कच्चीआँ कलीआँ सँभाल राजे दीए बेटीए नी
असी चले परदेस मुड़ नहीं आमणा ए

अगे नीं फड़ाँ तेरा लीड़ा पिछे फड़ाँ बाँह तेरी जी
सच्च दसो बेईमान कदने घर आमणा जी

पती जिन्हाँ दे सदा मुसाफ़र

हरीए नी मेरीए नस्सीए खजूरे
पत्त जिन्हाँ दे पीले ओ
पती जिन्हाँ दे सदा मुसाफर
नाराँ दे किआ हीले ओ

राजे बिना कोई राज जे भूरे
बैद बिना कोई रोगी ओ
पती बिना कोई नार जे फिरदी
फिरदे तीन वियोगी ओ

बागे दे विच तोता जे बोले
मैं समझिआ कोई माली ओ
कढ के कलेजा तैनूं जे दित्ता
पिंजरा रहि गिआ खाली ओ

२१६

आपा ताँ चलिआ माए नौकरी चाकरी

आप ताँ चलिआ माए नौकरी चाकरी
नूँहाँ जो छड्डी चलिआ घरे

आप ताँ खाऊ माए र्खीआँ मिस्सीआँ
नूँहाँ जो दिआँ घा चूरीआँ

बारा ने बर्मे खट्ट घर आइआ
नूँह तेरी नजर ना आई

सभ सभ सईआँ न्हाण गईआँ
बहू मेरी न्हाण गई

सभ सभ सईआँ माए न्हा घर आईआँ
बहू तेरी नज़र नही आई

सभ सभ सईआँ बागे जो गईआँ
बहू मेरी फुल्ल चुगण गई

सभ सभ सईआँ माए फुल्ल चुग आइआँ
बहू तेरी नजर नही आई

पज सत्त फेरीआँ पुत्ता बीर सहुण आइआ
बहू मेरी मा-पिआँ दे ड़ई

सहुरे जाँदा मस्सू सहुरे जो पुच्छदा
धी तुसा दी नजर नहीं आई

सस्सू भी बोलिआ सहुरे भी बोलिआ
धी म्हारी सहुरे गई

उन्हे चढी पुत्त नूँह जे सुत्ती
नूँहाँ जो लई लगाई

इक अवाज मारी दो आवाजाँ मारी
पुत्ता सुत्तिआँ जो लई जगाई

इक आवाज मारी माए दो आवाजाँ मारीआ
सुत्तडी जागदी वो नही

इक छमक मार पुत्ता दो छमकाँ मारिआँ
सुत्तड़ी जागदी वी नही

इक छमक मारी माए दो छमकाँ मारीआँ
सुत्तड़ी जागदी वो नही

अज्जदे दिन माए बडा जुलम कमाइआ
मुक्कीआँ मार बजाई।

साधुए बणी जाणा माए जोगीए बणी जाणा
घरे तेरे कदी नहीं आणा

साधूए नी बणना पुत्त जोगीए नी बणना
तिज्जी लैणा विआही

असीं परदेसिआँ चले जाणाँ

तेल वकेदी ए तेलणी
छतिआँ साडिआँ तेल पाईआँ

तेल पाणा मो डोहल जाणा
असी परदेसीआँ चले जाणा

खूहे पर खडोतीए गुजरीए
छतिआँ साडिआँ दही पाईआँ

दही पाणा मो डोहल जाणा
असी परदेसीआँ चले जाणा

चन्ना माढ़ा चढ़िआ ओ

चन्ना माढ़ा चढ़िआ ओ उप्पर रजौरीआ
वणी जाइआँ पँखरू ने मिली जाइआ चोरीआ
वड़ा है बसोस मेरी जान ओ

चन्ना माढ़ा चढ़िआ ओ उप्पर रिआसीआ
थोड़ा थोड़ा नाप जिंदे मघी ओ दोआसीआ
कीआँ मिलण होगा मेरी जान ओ

चन्ना माढ़ा चढ़िआ ओ चढ़िआ पिछे उसरे
पारे कीआँ जाणा नवी ठाठाँ मारे
वड़ा है बसोस मेरी जान ओ

चन्ने जी दी हट्टी पर विकदीआँ किल्लीआँ
इक वारी मिलें चँना वादै चाढ़ा छल्लीआँ
कीआँ मिलन होगा मेरी जान ओ

चिट्टी चिट्टी चादर चन्ना फुल पाणी फेरमां
हुई दिले दा बोल तीजो तेरमां
बड़ा है वसोस मेरी जान ओ

चन्न माड़ा चढिया ओ चढिया पिच्छे टिक्कारी
घर जिंदे कीआं आमां राजे दीए नौकरी
कीआं मिल्लण होगा मेरी जान ओ

सँभल सँभल चलणा जरूर

माए नी मेरीए जमूए दा राजा
चंबा कितनी कु दूर
उचे उचे परबत डुगी डुगी नदीआं
सँभल सँभल चलणा जरूर
उचे उचे परबत खिखरा ए पैंडा
सँभल सँभल चलणा जरूर
दुख सख साज किसे नहीं पुछणा
असां निभाणां जरूर

हुां गलांदिआँ सच्च बो

हउँ गलादीजां सच्च बो
मेरे बाँकू दिअ चाचूआ

आपूं ता चला जादा नौकरी चाकरी
मिजो ता देई जादा खुन्दा डानरी
खाणे जो देई जादा लूणा माकड़ी
आपूं ता खादा दाल भत्त ओ

नौकरी करी के रूपईए लिआंगा
तेरे गले रा जो वहिणा बणागा

नक्के जो लिग्राई दिगा नत्थ वो
मेरे बाँकू दिए भाईए

रोटी पकाँदी ताँ गरमी लगदी
भाँडे माँजदी ताँ सरदी लगदी
छोटा जिहा नौकरू रख वो
मेरे माँकू दिआ चाचूआ

नौकराँ दा मिजाज भारी
कम्मे दी करदे टाल मटाली
तनखाह ताँ मंगदे पूरी दस वो
मेरे बाँकू दिए भाबीए

तेरे बिना मैं हुण नहीं रहिणा
चली सोगी सच्च वो कहिणा
गल्लाँ बणा चाहे लक्ख वो
मेरे बाँकू दीआ चाचूआ

रोई रोई ना कर मैली अक्खीआँ
सद्दी लैंगा तैनूं हौसला रक्खीआँ
डेग बी लई लैंगा बक्ख वो
मेरे बाँकू दीए भाबीए

कजो घबराँदी नूं अज्ज वो
मेरे बाँकू दीए भाबीए

मंझली सँझली के चल्लियाँ छोरी

हरे हरे बागाँ दी छाउँ नी पड़िए
रामाँ जोड़ी के मेले

सभ लोकी मेले जो आईआँ छोरी
लाई वारी वाँके चोले

सभ सभ बागी कूंजाँ जे फुल्लीआँ
साड्डे वागे गोभी
खाणे पीणे दा लालच ना अड़ीए
तेरे नैणाँ दा लोभी

इक हत्थी तेरे सिरो दा ढलू
दूए हत्थे तेरे लोटा
सँभली सँभली के चलिआँ छाती
सभाँ लगू गा खोटा

चलणा ताँ चल गंगीए

तेरे मिलणे दा वेला वो
मिलणा ता मिल गगीए
छड्ड ताँ सारा झमेला वो
चलणा ता चल गगीए

कम्म घरे दा करदी मैं
विहल नहीं है लभदी
वेवस्स मैं होई आँ
दिले बिच अग्ग बलदी

गड्डी आई सटेशन ते
सीटी बजाँदी होई
साडे प्रेम दे गीत जिवें
लोकाँ नूं सुणाँदी होई

गड्डी भरी होई माणूआँ दी
देखी के डर लगदा
मैं ताँ दूर नी जाणा है
चंगा अपणा घर लगदा

तेरे बागे' च हुगी पिपली
जद छोरू मुरली बजे
गणी सुणने जो बाहर निकली
जद धोरु मुरली बजे

घड़ा भग्गिआ छोई धाई के
जद तेरी याद आवे
छोरी मरदी वो रोई रोई के
जद तेरी याद आवे

गंगीए बदाम रंगीए

घड़ा भरना गराग्गिआ कने ओ गराग्गिआ कने
मून मुक्के फिकरी ओ जानी
भूरे पिजरा लसारिआ कन्ने ओ लामारिआ कन्ने
गंगीए बदाम रंगीए ओ जानी

फुल्ल फुलिआ डाले तुनीए ओ डाले तुनीए
लिखी लिखी कजो भेजदी ओ जानी
मैं ताँ आणा अठारी उन्नीए ओ अठारी उन्नीए
गंगीए बदाम रंगीए ओ जानी

फुल्ल फुलिआ तोगीआ डाले ओ तोगीआ डाले
सब गम झलिड जांदे ओ जानी

गम झलिया जादा ना वछाड़े दा ओ वछौड़े दा
रंगीए बदाम रंगीए ओ जानी

फुल्ल फुलिआ डाले की करी ओ डाले की करी
लोक बोलदे ताप लगूदे वो जानी
मेरा खून सुक्के तेरे फिकरी ओ तेरे फिकरीं
रंगीए बदाम रंगीए ओ जानी

चिट्टे चौल खाणे चीनीआ कन्ने ओ चीनीआ कन्ने
कम तेरा खादा खनमें जो जानी
मैं तां जूड़ा करना भौकीनीआ कने ओ भौकीनीआ कने
रंगीए बदाम रंगीए ओ जानी

चिट्टे चौलां दी पकाणी खिच्चड़ी ओ पकाणी खिच्चड़ी
इक तेरा घर गाहूमणे ओ जानी
दूजी बालगा दी जोड़ी विछड़ी ओ जोड़ी विछड़ी
रंगीए बदाम रंगीए ओ जानी

ओ सभ सभ फुलनूं फुल्ले

ओ सभ सभ फुलनूं फुल्ले बागी फुल्ली सोभी
उड़दे तेरे नैणां नाल नैणां दा ओ सोभी

ओ सभ सभ फुलनूं फुल्ले फुल्ल ना रही चमेरी
ओ कन्ना जो मैं झुमकू जे सिरा माथे जो जंजीरी

ओ सभ सभ फुलनूं फुल्ले बागी फुल्लिआ तीरा
ओही राती सुपना होइआ तेरे बादल दी तीरा

कंडी

उठीआँ उठीआँ नी कंडीए परगड़ा होइआ ना
तिजो कीआँ पता ससू परगडा हुण होइआ ना

चिड़ीआँ झरमर लाई नी अडीए हुण परगडा होइआ ना
उट्ठी ए कंडी विच हरी मांन भरी दिदी ना

पुच्छे हुण ससू जो कडों बिनूआँ कुथ् रखिआ ना
किल्लिआ तेरा बिनाँ नी कंडीए कढ्ड लिआ तेरा घडा ना

चुकिआ घड़ोलू जो कंडीआ पाणीए जो हुण जांदी ना
भरिआ घड़ोलू जी कंडीआ बिनूआँ पर धरिआ ना

पारे जांदिआ भाईआ जाती दा कुण हुना ना
जाती दा मैं हुना जी भैणे पंजले दा पंजला ना

उट्ठी ए हुण कंडी विचारी गले लगी मिली ना
चुकिआ घड़ोलू जी कंडीआ मुड़ी परे जो आदी ना

घचोड़िआ जी घडोली घर आई कंडीआ रखिआ घड़ालोआ ना
तिजो किआ होइआ नी कंडीए हूणा मड़णी होई बैठी ना

नवाँ लक्खाँ दा हार जी ममो खूहे विच पिआ ना
नवाँ लक्खाँ दा हार गुआइआ नी
कंडीए दसां लक्ख दा बणवाणी ना

भेजिआँ हुण चिट्ठीआँ ससू हुण कंत घर आइआ ना
नवाँ लक्खाँ दा हार जी कंडीआ खूहे दे विच पाइआ ना

दूराँ दूराँ जो भेजीआँ चिट्ठीआँ डोए मगवाए ना
खूहे दे उपर गए जी कंडीए हार नहीं हुण मिलदा ना

सच सच गलाइआ सी कंडीए हार किज्जो दित्ता ना
पारे पारे आदिआ भाईआ जाती दा कुण हुदा ना

जाती दा मैं हुंदा नी भैणे पॅजले दा पॅजला ना
उट्ठी ए हुण कडी बिचारी गली लग्गी मिली ना

उट्ठी ए हुण कडी बिचारी नवाँ लक्खाँ दा हार नी
खोलिआ हार जी कडीआ भाईए दे गले पाइआ ना

साउण गिआ प्रदेस

साउण साउण वरसी रिह्मा जी ढोला
साउण गिआ प्रदेस कद घर आउणा
दरमाँ दीआँ दोरीआँ दई भेजिआँ जी गोरीए
तूँ आपणीआँ समू दी करो लैणो कारी

कोरे नाँ कोरे कागद लिखदी
तुसाँ दीआँ भैणा दा विआह
दरमाँ दीआ गोरीआ दई घल्लगी
तूँ आपणीआँ नणदाँ दा करो लैणा विआह

कोरे नाँ कोरे कागद लिखदी
मेरीए नारी दा है बुरा हाल
दीआँ जी राजआ छुट्टीआँ
मेरीए नारी दा है बुरा हाल

तेरी सौं असां जो

कल्ल की हाजरी तेरी वो घुमारूआ
कल्ल की हाजरी तेरी
तेरी सौं कल की हाजरी तेरी
मन मोइआ छोड़ दे बैरीआ

दिन चढने नूं आइआ वो घुमारूआ
लो दिन चढ़ने नूं आइआ
तेरी सौं दिन चढने नूं आइआ
मन मोइआ छोड़ दे बैरीआ

रज के न कीतीआं गल्लां वो घुमारूआ
ओ दिल दा ना चुकिआ चाअ
तेरी सौं दिल दा ना चुकिआ चाअ
मन मोइआ छोड़ दे बैरीआ

चंबे ला बजी री ढोकली घुमारूआ
लो जंमूआं बजी रा नगारा
तेरी सौं जमूआं बाजी रा नगारा
मन मोइआ छोड़ दे बैरीआ

दिल दा लगदा चाअ वो घुमारूआ
दिल दा लगदा चाअ
तेरी सौं दिल दा लगदा चाअ
मन मोइआ छोड़ दे बैरीआ

तुसां जो पिआरी नौकरी घुमारूआ
लो असां जो पिआरी सेजा

तेरी सौ असाँ जो पिआरी सेजा
मन मोइआ छोड़ दे बैरीआ

लै चल्ल संग अपणे

डुग्गी डुग्गी वासी लगदी दुआसी
सानूँ लै चल सँग अपणे

खरचा थोड़ा रमना बहुता गोरीए
नूँ ना रही जाइआँ घर अपणे

अमा तेरी सस्स मेरी ढोला
सानू मेहणीआँ लावे

सस्स दा कहिणा सिर पर सहिणा गोरीए
नूँ ना रही जाइआँ घर अपणे

भैण तेरी नणद मेरी ढोला
सानूँ मेहणीआँ लावे

रोटी पकाइआ सौस गुँदाइआँ गोरीए
महुरिआँ दे घर पहुँचाइआँ

भावी तेरी जठाणी मेरी ढोला
सानूँ मेहणीआँ लावे

इक्क गल्लाँ दो नूँ गलाइआ गोरीए
अधो अध बणाईआँ

डुग्गी डुग्गी बासी लगदी दुआसी डोला
मानूँ लै चल सँग अपणे

बुरा साजना दा बिछोड़ा

कलेजूए लगिआ हो दाग वो
बुरा साजना दा बिछोडा
नही ओए गम जांदा ओ जादा
बुरी ममता री आग वो

कलेजूए लगिआ हो दाग वो
दिने राती याद आँवदी
मन नही चैन पाँदा ओ पाँदा
बड़े बुरे होए भाग वो

कलेजूए लगिआ हो भाग वो
बीती गल्लाँ याद आँवदी
दीडकोए मन रौदा ओ रौदा
बुरी छोरूए दी याद वो

ओ कीआँ चलदी म्हड़ी

ओ कीआँ चलदी सपोलीए दी चाल ओ
ओ कीआँ चलदी म्हड़ी
सपोलीए दी चाल ओ

बाही गोरीए तेरे चूड़ा जो सोहवे
नक्के सोहवे बलाक ओ
ओ कीआँ चलदी म्हड़ी

सुट्टी लैंदी उड़दे पंखेरूआ कीओ
चूड़े तेरे दी झणकार ओ
ओ कीआँ चलदी म्हड़ी

निम्हा निम्हा तेरीआँ ओ अक्खाँ दा कज्जरा
दिले बिच मारदा कटार ओ
ओ कीआँ चलदी म्हड़ी

मिजो भुल्लणाँ वीना

मेरीए जिंदे निजो मेरी मौ
मिजो भुल्लणा वी ना
सच्च बोलिआ हो

खेताँ दे खेताँ घूमे मेरी जानी
याद तेरी आवणी हो
सच्च बोलिआ हो

जान मेरी उबूण रखणी
दई जा छापा निशानी हो
सच्च बोलिआ हो

जिन्दड़िआँ दे मेले

नव नव फुल्लणाँ फुल्लीं नमाए
एउ बागीं फुलीरी गंभी

खाणे पीणे दे लालची नाईं
तेरिआँ नैंना दे लोभी
भला राजू रीहणा मेरी जिंदड़ी अडीग
जिन्दड़िआँ जिन्दड़िआँ दे मेले

उचीआँ धारा पर पिपल सुकिग्रा
ठंडे नाले दा खूआ
गोरीआँ दे भला खाखड़ू सुके
इह किग्रा चरज हुआ
भला राजू रहिणा मेरी जिंदडी अडीए
जिउंदिआँ जिउंदिआँ दे मेले

भला राजू रहिणा मेरी जिंदणी ग्रडीए
जिउंदिग्राँ जिउंदिआँ दे मेले
ठडीग्राँ नालाँ दीए बासदीए नी
डुगीग्राँ नाला दे पाणी
भला राजू रहिणा मेरी जिंदडी अडीए
जिउंदिआँ जिउंदिआँ दे मेले

नाम कटाई घर आ आपणे

होरनाँ सपाहीआँ दे चिट्टे चिट्टे कपड़े
तेरा कजो मैला भेस
ओ तेरी सौं तेरा कजो मैला भेस
नाम कटाई घर आ आपणे

अठवें दिने सपाही लैन पता करदे
हत्थी जो पई जाँदे छाले
ओ तेरी सौं हत्थी जो पई जाँदे छाले
नाम कटाई घर ग्रा आपणे

कचीग्राँ बारकाँ सपाही साडे रहिंदे
पक्कीग्राँ रहिंदे जमादार
ओ तेरी सौं पक्कीआं तेरे अहुदेदार
नाम कटाई घर आ आपणे

दिलदा महिरम कोई न मिलिआ

हरीए नी भरीए मवन्न खजूरे
पतलू जिन्हा दे पीले ओ
कँदलू जिन्हा दे मवा मुसाफर
नारां दे कीआ होले ओ

राज बिना कोई राजा जो भूरे
वैद बिना कोई रोगी ओ
ओ कन्द बिना कोई नार जो भूरे
तिन्नूं फिरन बिजोगी ओ

टुटिआ फुटिआ फटा पुराना कपड़ा
कोई न सींदा दरजी ओ
दिलाँ दा महिरम कोई ना मिलिआ
जो मिलिआ अलगरजी ओ

कोठे चढ़ के लिखण जो बैठी
दखणे दी कलमी वा ओ
हत्थां दे कागज फर फर उडदे
कलम गई गुम्म ओ

बाग लगावां बगीचा लगावां
विच वो रक्खां माली ओ
भर भर बूटिआं पाणी जो दिंदा
इक न रखदा खाली ओ

बागां दे विच तोता बोले
मैं बुझिआ कोई माली ओ

कढ के कलेजा खाली करदी
पिंजरा रहि गिआ खाली ओ

ओ नौकरा ओ चाकरा

पारी जाँदिआ नौकरा ओ चाकरा
कीनी रँगी दी पगड़ी तेरी
कीनी कढिआ रुमाल ओ

भैणे रँगी दी पगडी मेरी
नारे कढिआ रुमाल ओ
दो नैनाँ ने मारिआ

केही जेही तेरी भैनडी ओ
केही जेही तेरी नार हो
ओ नौकरा ओ चाकरा

तेरी जिही मेरी भैनडी ओ
नीते दुगनी मेरी नार ओ
दो नैनाँ ने मारिआ

नारा दे ओ नूँ छोडी नौकरा
ओ नौकरा ओ चाकरा
दो नैनाँ ने मारिआ

किहड़े देसाँ चले जाना

किहड़िआँ देसाँ ते आइआ जी लोका
किहड़िआँ देसाँ जी चले जाणा
दखणी देसाँ ते आइआ जी गोरी
पछमी देसाँ चले जाणा

किहड़ा नूँ पत्तण लङ्घणा जी लोका
किहड़ा नूँ तख़्त, मल्लणा
चंबे दा पत्तणा लंघणा जी गोरी
लाहौरे दा तख़्त मल्लणा

चौंका ताँ पाँदीआँ चोकण जी लोका
बालण लाँदिआ किलाँ पिआरे
किहड़िआँ देसाँ ते आइआ जी लोका
किहड़े देसाँ चले जाणा

सस्स ताँ ननदा डाढीआँ जी लोका
मैं रहीआँ धूंए दे रज्ज वे
किहड़िआँ देसाँ ते आइआ जी लोका
किहड़े देसाँ चले जाणा

बाराँ माँहीं

पकड़ी रकेब बंदी पास खड़ोती
तुसी चले प्रदेश साडे जिगरे थोड़े

छोड़दे रकेब तैनूँ राम दुहाई
मापिआ दे देश तैनूँ शरम ना आई

मापिआँ दे देश साडा असल ठिकाणा
सहुरिआँ दा देश सानूँ कायम जाणा

चेत दे महीने नी मैं रखीआँ मुरादाँ
तुसीं चले प्रदेश असाँ भुल ना रखे

बिसाख महीने नी माए दाखाँ पक्कीआँ
तुसाँ रहे प्रदेश असाँ भुल ना चखीआँ

जेठ दे महीने तेज धुपाँ पईआँ
तुसाँ रहे प्रदेश असाँ बाहर सहीआँ

हाड़ दे महीने अम्बीआँ पक्कीआँ
तुसाँ रहे प्रदेश असाँ तोड़ ना चक्खीआँ

साउण महीने पीघाँ पईआँ
तुसाँ रहे प्रदेश असाँ झूट ना लईआँ

भादों महीने रातां हनेरीआँ
तुसाँ रहे प्रदेस असाँ हनेरे कट्टीआँ

अस्सू दे महीने पित्तर मनावाँ
तुसाँ रहे प्रदेश असाँ मने नी भावाँ

कतक दे महीने नी आई दीवाली
तुसाँ रहे प्रदेश असाँ भुल्ल ना मनाई

मग्घर महीने लेफ भराए
तुसाँ रहे प्रदेश असाँ सन्दूके पाए

पोह माघ विच पैंदे पाले
तुसाँ रहे प्रदेश असाँ बाहर हँडाले

फग्गण महीने होली आई
तुसाँ रहे प्रदेश असाँ रंग ना पाई

गोरी मनों किउं विसारी

उडी उडी मेरे तिलीअर काले
लमी लाई वे उडारी
जा आखीं मेरे नउ-राहु वे दूरों
गोरी मनों किउं विसारी

दिलदा टुकड़ा मैं कागज बणावां
उंगलीआं कट कानी
अक्खां दा कज्जला मैं स्याही बणावां
हंझूआं दा पाणी आ पाणी

गल्लीं लाई लौं

कीथी वसिआ मेरा कमला झल्लेआ
तां कुथू वसिआ बामणां
गल्लीं लाई बामणां

ओ तुसाबू दिग्गी नरेले दिग्गो
ओ गल्लीं लाई ओ बामणा
गल्लीं लाई लो

दुक्ख तैनूं किहड़े किहड़े

तूं दस दे मेरी सरकार
दुक्ख तैनूं किहड़े किहड़े

मैनूं दुखड़े पई हज़ार
दस्सां तैनूं किहड़े किहड़े
तेरी माता लड़े मेरे नाल
दस्सां तैनूं किहड़े किहड़े

तेरी भैण लड़े मेरे नाल
दस्सां तैनूं किहड़े किहड़े
मैं चले जाणा तेरे नाल
दस्सां तैनूं किहड़े किहड़े

नार तेरी मरना ओ जिहर खाई

थोड़े थोड़े पाणी ओ मछली जो तड़फे
इज्जां करी तड़फे ओ नौकरे दी नार
आपूं बी नी आउंदा ओ लिखी बी ना भेजदा
किजा करी कटणी ओ बाल बरेस

आपूं बी मैं आउंगा लिखी बी मैं भेजूंगा
हस्सी हस्सी कटणी ओ बाल बरेस
महीन महीन कतणा ओ महिंगे भौंई वेचणा
इंज करी कटणी ओ बाल बरेस

लिखी लिखी कागदां मैं नौकरे जो भेजदी
नारा तेरी मरना उमे जिहर खाई
भरी जो कचहिरी ओ नौकर चिट्ठी बांचदा
रोई रोई भिजदा रेशमी रुमाल

जिदे चली जाणा

ना कर गोरी मैली अक्खीआं
असां प्रदेसी चली जाणा
की चली जाणा

नदी नाओं संजोग मेले
की जाणे कदी मुडी होणा
जिदे चाली जाणा

और होंदआ जाणा प्रदेस गोरी
मने विच नई आँदा याद तेरी
जिदे तुरी जाणा

साजन लंघी गए काली धार

फुल फुला सुलताज दा नी माए
सुलताज दा नी माए
मूरख तोड़ी न जाँदा
तोड़े सह् चतर सुजान

सीसिआँ भरी फलेल दीआँ नी माए
रखनी सन्दूके 'च पाई
मूरख डोल्ही न जाँदा
डोल्हे सह चतर सुजान

आ गए साजन ओ गए नी माए
लंघी गए काली धार
उच्चे नाँ चढ़ी कै देखदी माए नी
बरकत मरदाँ दे नाल

बामणा रे छोरूआ

बामणा रे छोरूआ हल्ली नाले ना जा भला रोटी खाई
बामणा रे छोरूआ पाणी ना जा क्यारी रमजा

बामणा रे छोरूआ दूर बसेरा तेड़े बसना
बामणा रे छोरूआ हाथ जोड़ी सुणो रे मेरी अरजा

बामणा रे छोरूआ कटों दे कलेजा बैरी मेरे
बामणा रे छोरूआ बैरीआं नूँ देना रे अफीम खवाआ

मेरे बाँके बाँके माहणूआँ

राह तेरी देखी देखी हारी गई अक्खीआँ
रोई रोई दिन बीते तड़फी के रत्तीआँ
तेरे बिना मेरा होर कौण माहणूआँ
आ मिल ओ आ मिल ओ मेरे बाँके बाँके माहणूआँ

कजो भुलाई दित्ता सच्च सुच्च दस्सीयाँ
ताहने लोक मारन हस्सीआँ सक्खीआँ
जीणा वो भार होईआ तेरे बिना माहणूआँ
आ मिल ओ आ मिल ओ मेरे बाँके बाँके माहणूआ

बामणा दा छोरू

बामणा दिआ छोरूआ
नदीआँ कनारे लैना बँगला

बामणा दीए छोरोए
गालीआँ ने देंदी तेरी माँ

बामणा दिआ छोरूआ
तेरे पिछे बोलिआ लोकाँ मैनूँ बदमास

भला ओ बामणा दीए छोरोए
गोरे गोरे हत्थ रोटी तल दे

केड़े बदमास ने खाणी
रोटी दाग लगदा रोटी किन्ने खाणी

चंबा दे हटीआँ बिकदे गलास
तूसी छडीआ आउणा जाणा असी छडीआ आस

चंदा दी कुड़ीआं मांडा रंग डालीआं
ओ मांडा रंग डालीआं

राजे दिआ नौकरा

उच्चिआं राकिआं बंगला बनादी
पल भर बंगलूए बहि लै नूं
राजे दिआ नौकरा

दुद नां नेरे चबे दीआं कणीआं
खोंडा दी दाउण नाटि लै नूं
राजे दिआ नौकरा

जुल्फां तां तेरीआं नाग नाग लमीआं
शीशा भरी तेले दी पाई लै नूं
राजे दिआ नौकरा

अक्खीआं तां तेरीआं अंबे दीआं फाड़ीआं
मूए सलाईआं अड़ी लै नूं
राजे दिआ नौकरा

चौधरी पुतरे की समझा

अजें टुंडा लताक्न गुद लैंदी
हो गुद लैंदी
चौधरी पुतरे की समझा

साडी बाहीआं बेगमा नी ला हुं
पलै पलैं साडे फेरा नी पा हो
चौधरी पुतरे की समझा

जे अऊँ जानीग्राँ पोठे दी वाडीआ
वढण नी दिदा मिगी छा
चौधरी पुतरे की समझा

अऊँ गुदा लल्ारन गृद लैंदी
हो गृद लैंदी
चौधरी पुतरे की समझा

झूठे दा बणी गिआ सच्च लोको

साडे गलाए दा सच्च लोको
जंमू कशमीर दा ढक्क लोको
चंदा नहीओं लाणा
फंद्र मजूरीआ नहीओं लाणा

झूठे दा बणी गिआ सच्च लोको
रस्सी दा बणी गिआ सप्प लोको
चंदा नहीओं लाणा
फंदू मजूरीआ नहीओं लाणा

फंदू दिले दा काला लोको
कमे दा करदा टाला लोको
चदा नहीओं लाणा
फंदू मजूरीआ नहीओं लाणा

डगे खड़ोए दे गल्लाँ जे कीतीओं
लोकाँ मनाई लिआ सच्च लोको
चदा नहीओं लाणा
फंदू मजूरीआ नहीओं लाणा

सूलीआँ टँगोई गई जान

नी तेरी माँ सूलीआँ टँगोई गई जान
भली होई जाण पछाण

उठदिआँ बहिदिआँ की निकल्दे हउके
भुली गए घरां दे चुल्हे चौंके
रहिंदा नित तेरा ही धिआन
नी तेरी माँ सूलीआँ टँगोई गई जान

भली होई राजे दी नौकरी वो सिपाहीआ
भली चंगी फसी गई दुखे दीआं फाहीआं
भुली गिआ खाण ते पहिराण
नी तेरी माँ सूलीआँ टँगोई गई जान

कागां उडावाँ ते सदेसड़े भेजां
वाझ तेरे मीकी रेशमी सेजां
दौड़ी दौड़ी आउँदीआं खाण
नी तेरी माँ सूलीआँ टँगोई गई जान

सानूं लै चलो नाले

डुग्गी डुग्गी वार्मा
लगदी उदासी
ढोला जी सानूं लै चलो नाले

डुग्गी डुग्गी नदीआं
तारू से पतले
गोरीए तूं किने खिआली पई

नीवें नीवें वासो
जीऊड़ा उदासी
ढोला जी सानूँ लै चलो नाले
डुग्गी डुग्गी नदीआँ
वेड़ा पुराण
गोरीए तूँ किने खिआली पई

मेकी छोड़ी देणा परदेस

मेकी छोड़ी देणा परदेस
ओ दगेवाज माहणूआ
मेरी जिंदे मैं नहीं ओ रहिणा
जिये रहेगा उथूं मैं रहिणा
मेकी छोड़ी देणा परदेस ओ

कुथू गए तेरे सारे कुनामे
छडी सिक्का मिओ किस्दे भरोसे
मेकी छोड़ी देणा परदेस ओ

असां तां आपू छोडी मैं दित्ता
दगेबाजे का साथ मैं कीता
मेकी छोडी देणा परदेस ओ

किल्लीआं बतना छोड़ी दित्ता

किल्लीआं बतना छोड़ी दित्ता
इतने माथें माथें भी त्रिओगी पानी
बुरा ओ लोक इस गंगया दा
अणदेसीए जो दोस दिदाए जानी
कीआ कुसै कंते हस्सणा बोल्णा
कीआ कुसै कंते गल्ल गलाणी

देवी दिनिया मिगी सिक्ख देई जाइआँ
कीआ मैं सस्स ननाण मनाणीं

भरी भरी पूर लँघानीआँ

जलो नी अकलो कीए नी
मिजो कजला बाण्हा दे नैणा ते
जिह्ना दे कारण कजला बाह्नीआँ
उन्हाँ चले जाणा अज ओ

जाँदे जाँदे चली गए अज ना
जाई खलोते नेड़ीआँ दे पार
रजी ना कीतीआँ गल्लाँ गुड़ीआँ
साडे मन का ना बुझिया चाओ

उजल उजल बलटाहीए नूँ नी
उजली के भुट पिच्छ ने
चला चलेंदे याद करेंदे
होनी होली निच्छ वे

मोते नूँ ला गए अंदरे लाँ भैण
चाबीआँ लै गए मुग के
नदीआँ दा नू नाकआ जा बाँहा
साँजो बी पार लँघाई दे

हत्थे दी दिनी मुंदरी जी भाई
गले दा दिनीया हार वे
अज रहिणा चल साडीआ नगरी
चल जाणा रोहीआ पार वे

छाती दा वणानीआ बिड़ला नी
नाह्री दा बद लगानीआँ
सिरे पुट्टी बटणी सिहलीआ जी बीबा
भरी भरी पूर लघानीआँ

नदीआँ दा मैं तारू गोरी
तिजो लंघाई दिआँ पार नी

जली जाए तेरी कंम बो

मीकी बी लई चल कछ बो
माह्ड़े बाँकूं दिआ चाचूआ
मूहों ता गलानीआँ सच बो
माह्ड़े बाँके दिआ चाचूआ

आपूँ ताँ जाँदा नौकरी चाकरी
मिजो देई जाँदा खुरपा दातरी
जली जाए तेरी कम बो
माह्ड़े बाँके दिआ चाचूआ

फुल्लके पकादिए गरमो जे लगदी
भाँडे माँजदी मैं चंगी नाँह लगदी
नौकर चाकर रख बो
माह्ड़े बाँकू दिआ चाचूआ

लोकाँ दे जातक बाजीआ खाँदे
म्हाड़े बी दीखी दीखी उन्हाँ कछु मंगदे
जली जाए तेरी कमाई बो
म्हाड़े बाँके दिआ चाचूआ

मुड़ी ना आवाँ देश तेरे

मैं चलिआ नी माए नौकरी चाकरी
नूँहाँ जो सुखी रखिआँ

आपूँ ता खाइआँ माए सक्कीआँ सुक्कीआँ
नूँहा जो पूरीआँ तलाइआँ

आपूँ ताँ सोइआँ माए टुटड़े खटोलड़े
नूँहाँ जो पलँगा डाहिआँ

आपूँ लिआ माए टुटड़ा खँदोलू
नूँहाँ जो सेफ भराइआ

बारां ते बारिहाँ मैं घर आइआ
नूँह तेरी नजर ना आए

हत्थ कटोरा पुतर देहीए दा
नदीआँ नूँ न्हाउण गई

नदीआँ दे कँढे कँढे फिराइआँ
नूँह तेरी नजर ना आई

हत्थ कटोरा तेले दा
सिर मुँड़ाउण गई

नाईआँ दे विहड़े मैं फिरी आइआ
नूँह तेरी नजर ना आई

हत्थ कुंजीआँ लई करी
पुन्नरा नथ पाउणा गई

पहिली कोठड़ी माए मैं खोल्हाँ
बेसर डब्बीआँ पई

दूसरी कोठड़ी माए मैं खोल्हाँ
लाश किस दी गई

जोगी होआ माए बैरागी होवाँ
मुड़ी ना आवाँ देश तेरे

डाडे दी बेड़ी

डाडे दी बेड़ीए नी सौकणी नं मेरीए
तेरे पर झुली रिहा मीआँ जसरोटीआ

चिट्टी न चादरी मच्छी कढ्ढे सीलीए
तेरे पर झुली रिहा मीआँ जसरोटिआ

किन्ही चादर सीनीए किन्ही चादर दित्ती
कौन लई आइआ गोहड़ा पिआरा

असाँ चादर दित्तीए आबी चादर सीतीए
भाई मई आइआ गोहड़ा पिआरा

पूणी नहीउं मुकदी तंद नहीं टुट्टदी
सस्स नहीउँ आँखदी पाणीए जो जाणा
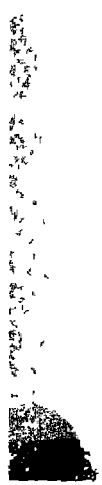
पुच्छ पुच्छ रहीआँ आपणे सहुरे
किहड़ी मुहिम पुत्तर तोरिआ सी
आजा नूँहे भर दे हुक्का मेरा
अगले बाजार खेलदा सी

पुच्छ पुच्छ रहीआँ नणद आपणी नूँ
किहड़ी मुहिम बीर तोरिआ सी
आजा भाबो बैठ जा कोल मेरे
जंमुआ दीआँ गलीआँ वार खेडे

खबर पवे ससू सहुरिआ नूँ
दरसे दे कारन मारिआ ढोल मेरा
खबर पवे अम्मा बाबले नूँ
निकी हुँदी जिही विआही सी

मैं बरान होईआँ

लोक देंदे बदनामी तेरी सुण तेरी जिंदे
मैं बरान होईआँ

अंगण नी बैणा नेरे बऊए पनी बैणा
लोक देंदे बदनामी तेरी सुण तेरी जिंदे
मैं बरान होईआँ

कोदरूए दाणा मनूँ लगदा पुराणा
पलसाँ दे चिजण मँगाणी सुण तेरी जिंदे
मैं बरान होईआँ

कच्चीआँ कलीआँ ना रोल

आँगण पधरा चोगान
किह्नीं घोड़ा पीड़िआ
आँगण पधरा चोगान
देरे घोड़ा पीड़िआ

घोड़िआँ दी पकड़ी लगाम
जाडे दी वाग फड़ी
सच्च दसो जी महाराज
कद घर आउणा ए

छिआँ महीनिआँ दी रात
वरिह्आँ दी इक घड़ी
तूँ मेरी चचल जेह्ी नार
बिसरे ना इक घड़ी

फुल्लाँ दी भरी ए चंगेर चवे दी इक कली
खंड दी भरी ए परात मिसरी दी इक डली
तूँ मेरी चचल जेह्ी नार
बिसरे ना इक घड़ी

कच्चीआँ कलीआँ ना रोल
मूरखाँ माहणूआँ
पकण दे दिन चार
रसे भरीआँ डालीआँ

पुजिआ गुणीआ दे रोग
मैं नहीं जांदा गोरी ए

नौकरां मनिआ गलाइआ
गुण दे बोरीए

आखी कुणी गल्ल कीती
होर मने विच खुशी बडी
तूं मेरी चंचल जेही नार
बिसरे ना इक घडी

कच्ची कली तोड़ी गिआं

छोटे-छोटे गुट्ठ छम-छम हुँदा
मैं दूहाँ ते पछाणी तेरी चाल जी लोका

कच्ची कली तोडी गिआ बिच बने सुटी गिआ
पापा ते ना डरिआ बेईमान जी लोका

आपू चलिआ शिमले जो मैं रोंदी आजू
गेदीआ दरद नई आए जी लोका

कोई हुदी जोड़ीआं कोई हुदे जोड वे
कोई हुदे जिवें जो जलाने जी लोका

मेरा ढोल गिआ प्रदेस

उह भाबी कीहाँ गलांदे जेठ
मेरा ढोल गिआ प्रदेस
मेरा कंथ् गिआ प्रदेस
अडीए कीहाँ गलांदे जेठ

चम्बल खूहे दा पाणी जो भरणा
लोटा माँजी सिरे पुर धरना

दुखी आहे लिरे ने केस
अड़ीए कीहा गलांदे जेठ

पतलीआं पतलीआँ बाहीआँ मेरीआँ
नाजक नाजक उंगलिआँ मेरीआँ
जाणा है मडीआँ दे हेठ
अड़ीए कीहाँ गलांदे जेठ

अलबेलूआ मेरा हसी हसी जांदा

अलबेलूआ मेरा हसी हसी जांदा
अलबेलूआ, अलबेलूआ

छल्लीआँ दी रोटी चपा चपा मोटी
छाई दा कटोरा
चूरी चूरी खांदा अलूआ
अलबेलूआ, अलबेलूआ

कणकाँ दी रोटी सरहूआं दा साग
छोड़ी मत जांदा अलूआ
अलबेलूआ, अलबेलूआ
अलबेलूआ मेरा हसी हसी जांदा

पंज लड़ी किन्हें दित्तीआँ

बारहों जे वरे कन घर आइआ
आई बैठिआ ठंडी छावाँ
मरूए दी छाँव वे पणी
मेरी जान मरूआ हो पंज पत्तरा

आआ कता बैठ न पलगे
किहड़ आदर देऊ
चितरा दुशालो ओढणा देऊँ
लटकण दीप जलाऊँ

पखूए फुलामदे पलूआ जो गिरिआ
नजर पई गले हार
पंज लडीआ कीहने दित्तीआ मेरी जान
गले माला किन्नै दिन्नीआं

हउँ नहीं जाणदी कंता तू मेरिआ
जाए आपणी मावाँ जो पुच्छ
पीढ़ी पर बैठी माता तूँ मेरीए
मेरे लाजो जो पंज लड़ी किन्नै दित्तीआँ

मैं नहीं जाणदी पुत्तर तूँ मेरिआ
जाए आपणी लाजो जो पुच्छ
हउँ तुजो पुच्छदा लाजो तूँ मेरीए
सच्च वी देणा बोल

झूठ बलादे नरकाँ जे जांदे
साच्चिआं दे हुंदे बेड़े पार
पंज लडी माला मा जो देवरे दित्तीआं
देवरे दित्ता गले दा हार

लिआओ मेरा घोड़ा लिआओ मेरा जोड़ा
लिआओ मेरी ढाल तुलार
छोटा भाऊ बड्ढी सुट्टणा
पंज लड़ी उने दित्तीआँ

भाइआँ दी जोड़ी सलामत जोड़ी
वडी देणी बाँकी जो नार
विआह आपणा होर करना
पञ लड़ी उने दित्तीआँ

तुसाँ चले प्रदेस

नौकरा मुसाफरा जिन्ने पीड़े घोड़े
तुसाँ चले प्रदेस साडे जिगरे थोड़े

खड़ी सी खड़ी नूँह सहुरे दे दरबार
सहुरे दी नजर नूँह पई गई

कीआँ नूँहे तेरा मैला मैला भेस
किने गुणे नूँहे होई पिलड़ी

पुत्तर ताँ तेरा सहुरिआ चलिआ प्रदेस
इन्हाँ गुणा मैं होई पिलड़ी

देही नी देही नूँह तूँ चतर सुजान
जाँदिआ नौकराँ नूँ हाँडिआ

चेतर ना जाई पीआ फुल हर भोन
बसाखीए ताँ दाखा पिआरिआँ पकीआ

जेठ ना जाई पीआ गरमी दा जोर
हाड़ ताँ अंबीआँ पकीआँ

सौरे ना जाई माहीआ बरखा दा जोर
काले ताँ राताँ हनेरीआँ

सुके ना जाई पीआ पिनर सराप
कतक दीवाली असां खेलणी

मग्घर ना जाई पीआ लेफ भरा
पोहे तां पाले पिआरिआ चौगणे

माघे ना जाई लोहड़ी दा तिउहार
होली असां खेलणी

होए नी होए माए बारां माह
जांदिआं नौकरां नू जाण दे

कोरि तां कुज्जे देहो जमा
जांदि दा मगन मना

जाइउ ए जाइउ मेरे शिरी महाराज
जांदे दी लगी जावे नौकरी

कीआं करी कहणी बालड़ी बरेस

सवज पखेरूआ ओ सावां दिआ असीआ
किधर गुज़ारी ओ आज खड़ी रैन

सावा दिशा वासीआ ओ संतां दिआ वुनीआ
उधर गुज़ारी ओ आज खडी रैन
चने रीए बेड़ीए नी मीकणे तू मेरीए
त मेरा लोभी नी पार लंघाइआ

आप वी नीं आउँदा चिट्ठी वी नी भेजदा
किआं करी कहणी इह बालड़ी वरेस

आप वी मैं आउँगा नी चिट्ठी वी मैं भेजूंगा
हसी हसी कट्टणी इह बालडी वरेस

जिवें थोडे पाणीए ओ मछली तडपदी
उवें तडपदी ओ नौकरां दी नार
धागा वी नी टुट्टदा ओ पूणी वी नी मुक्कदी
सस्स वी नी बोलदी ओ नी बहूए पाणीए जाणा

लिखी लिखी चिट्ठीआं मैं नौकरे जो भेजदी
नारा लेरीआ मरना ओ जहिर खाई
भरीआँ कचहरीआं नौकर चिट्ठीआं बाचदा
रोई रोई भिज्जदा ओ रेशमी रुमाल

केसरी बाणे आलिअ फुल्ला तोरी दा

केसरी बाणे आलिआ फुल्ल तोरी दा
धरमी होए गल्ल ताँ मुँह नहीं मोड़ी दा
केसरी बाणे आलिआ खभ नितरे दे
देश दे होइए टुकड़े धरम दे मित्तरे दे

केसरी बाणे आलिआ फुल्ल मरए दा
बलीदान नहीं भुल्लणा हरी मुंह नलूए दा
केसरी बाणे आलिआ फुल्ल काणी दा
बलीदान नही भुल्लणा राणी झाँसी दा

मेरे दिले दिआ महिरमा

सिरी तेरे काला साफा
वागीं जाँदा छैल पछाणी लिआ ए
मेरे दिले दिआ महिरमा

सुक ना जाईं पीश्रा पितर सराप
कतक दोवाली श्रसॉ खेलणी

मग्घर ना जाई पीश्रा लेफ भरा
पोहे ताँ पाले पिआरिश्रा चौगणे

माघे ना जाई लाहड़ी दा निउहार
होली असां खेलणी

होए नी होए माए बाराँ माह
जाँदिआ नौकरों नू जाण दे

कोरे ना कुज्जे देह्री जमा
जांदे दा सगन मना

जाइउ ए जाइउ मेरे शिरी महाराज
जाँदे दी लग्गी जावे नौकरी

कीओं करी कहणी बालड़ी बरेस

सवज पखेरुश्रा श्रो सावाँ दिआ ग्रसीआ
किधर गुज़ारी श्रो श्राज खड़ी रैन

सावां दिआ वासीश्रा श्रो संताँ दिश्रा धुनीश्रा
उधर गुज़ारी श्रो श्राज खड़ी रैन
चबे दीए बेडीए नी लोकणे नू मेरीए
नं मेरा लोभी नी पार लंघाइआ

श्राप बी नां आउंदा चिट्ठी बी नी भेजदा
किश्राँ करी कहणी इह् बालड़ी बरेस

आप वी मैं आउँगा नी चिट्ठी वी मैं भेजूंगा
हसी हसी कट्टणी इह बालडी ब्रेस

जिवें थोड़े पाणीए ओ मछली तडपदी
उवें तडपदी ओ नौकरां दी नार
धागा वी नी टुट्टदा ओ पूणी वी नी मुक्कदी
मस्स वी नी बोलदी ओ नी बहूए पाणीए जाणा

लिखी लिखी चिट्ठीआं मैं नौकरे जो भेजदी
नारा तेरीआ मरना ओ जहिर खाई
भरीआं कचहरीआं नौकर चिट्ठीआं बाचदा
रोई रोई भिज्जदा ओ रेशमी रुमाल

केसरी बाणे आलिअ फुल्ला तोरी दा

केसरी बाणे आलिआ फुल्ल तोरी दा
धरमी होए गल्ल तां मुँह नहीं मोड़ी दा
केसरी बाणे आलिआ खभ तितरे दे
देश दे होइए टुकड़े धरम दे मित्तरे दे

केसरी बाणे आलिआ फुल्ल मरए दा
बलीदान नहीं भुल्लणा हरी मुंह् नलूए दा
केसरी बाणे आलिआ फुल्ल कासी दा
बलीदान नहीं भुल्लणा राणी झांसी दा

मेरे दिले दिआ महिरमा

सिरी तेरे काला साफा
बागी जांदा छैल पठाणो लिआ ए
मेरे दिले दिआ महिरमा

मन दिआ आशका
नैणाँ तेरिआँ मोही लई
हेठ तेरे लिलड़ा घोड़ा
इकीआ चढ़दा छैल पछानी लिआ ए

मेरी दोसतीए

ऐसा कैसा वो रुमाल मेरी दोसतीए
मैं ताँ लेआ पछिआणी मेरी दोसतीए

इह ताँ पिआरे री निशानी मेरी दोसतीए
मैं ताँ छाती मोडी लाणी मेरी दोसतीए

मजा घरी फेरा ब्राह्णा मेरी दोसतीए
तेरा अंबला सरह्राना मेरी दोसतीए

तेरा सुक्खणू तरू टोरा मेरी दोसतीए
तेरा जाह्णू निकलोरा मेरी दोसतीए

जिह्या कोपरे दा लड्डू मेरी दोसतीए
ऐसा कैसा वो रुमाल मेरी दोसतीए

मैं ताँ दोहड़ नोई लैणी मेरी दोसतीए
मैं ताँ जोर्जी वो भंडाणी मेरी दोसतीए

बणी नणी जातरा जो जाणा मेरी दोसतीए
ऐसा कैसा वो रुमाल मेरी दोसतीए

तेरे नणा दे लुहारे

रुड़दी रुड़दी रावी विच्च बूटा है जवार दा
मौकणी दे बोले तोले फट है तलवार दा
पारीं तू जाँदिआँ राजे दिआ नौकरा

कल खिलूए दी रमज सुणा दे गलावो झिउरीए
तेरे नैणाँ दे लुहारे वंदी मोर लई ए
पारी तू जाँदिआँ राजे दिआ नौकरा

तुसा छोडआ आणा जाणा असा छोड़ी आस वो
कल खिलूए दी रमज सुणादे गुलावो झिउरीए
तेरे नैणाँ दे लुहारे वदी मोह लई ए

ऐसा साकारी ना वो मिले

पारलीआ बाग तिनराँ दे जोड़े
ना वो मिले मेरी जान वो बगालोआ
ऐसा साकारी ना वो मिले

घर ताँ तेरे दूर वो बगालोआ
ना वो मिले मेरी जान वो बगालोआ
पार लीआ बाटा साईआ दे जोड़े

ऐसा सकारी ना वो मिले
ना वो मिले मेरी जान वो बगालोआ
ऐसा साकारी ना वो मिले

दूरे दूरे दीआं सलामा ओ

असी ओवारे खड़े
तुसी पारे खड़े
ओ दूरे दूरे दीआं सलामां ओ सेईओ

ओ साजण मिलणा लगे
ने मिली करी खिड़णा लगे
जिआं फट चलदे तलवारी सेईओ

ओ डरदे डरदे रेहीओ
वो इन्हां नारी कच्छा
जिन्हां चरखे दा शेर बणाइआ सेईओ

असी ओवारे खड़े
ते तुसी पारे खड़े
ओ दूरे दूरे दीआं सलामा ओ सेईओ

सोगी चल जमेदारा

हार सोने दीआं लरजां जिंदे
गोरी रोई रोई करदी दरजां जिंदे
सोगी चल जमेदारा

हार सोने दा दाणा जिंदे
असा चढ सिमले नूं जाणा जिंदे
सोगी चल जमेदारा

हार सोने दा गूठा जिंदे
असी कदी नहीं बोल्लिआ झूठा जिंदे
मेल्ले चल जमेदारा

मेले चल जमेदारा उए

सुनिआर सोने दीआं लग्जा जिदे
गोरी रोई रोई करदी अरजां जिदे
मेले चल जमेदारा उए

सुनिआर सोने दी गूठी जिदे
गोरी रोई रोई हुदी पुठी जिदे
मेले चल जमेदारा उए

सुनिआर सोने दी कैठी जिदे
गोरी रोई रोई कर्मा बैठी जिदे
मेले चल जमेदारा उए

मेरे पिअ परदेश

मैं निक्की अयाणी हो मैं निक्की अयाणी हो
नीऊँ कीआं लाणा हो कथा
मेरिआ लोभीआ हो आ घरे

सेज रंगीली ना सेज रंगीली
मेरा पीआ परदेश हो कथा
मेरिआ लोभीआ हो आ घरे

पाई के बसीले ना पाई के बसीले
तैं जाणी जिद ठग्गी हो कथा
मेरिआ लोभीआ हो आ घरे

तुसा नीं आउणा ते तुसां नीं आउणा
ते लिखी लिखी भेजे हो कथा
मेरिआ लोभीआ हो आ घरे

मैं निक्की याणी ते मैं निक्की याणी
मेरा पीआ परदेश हो कथा
मेरिआ लोभीआ हो आ घरे

हुण किउँ दिला तों बसारी

अग्गे बी भाइआ मना ने पिआरी
हुण किउं दिला तों बसारी

तेरे जेहीआ धीआँ भैणे मेरे बी होईआ
तां हुण दिला तो बसारी

नौ लक्खा हार भाइआ पल्ले तों दिआँगी
पीआ जो लई विआही

घरे तां आउँदीआँ सस्स जा पुच्छदी
नौ लक्खा हार किथे सुआईआ

नदीआ दे कंडे सस्सू नहाण जो लग्गी
नदीए लिआ रुढ़ाई

सद्दो जे बहुए भटेड़े-दे बेटड़े
नदीआ देंगे सुखाई

नदीआँ दे नीर सस्सू कदे नहीं सुक्कदे
जले दीआँ मछलीआँ खाइआ

सद्दों नी बहूए मटेड़े दे बेटड़े
डगीआं देण कनाई

सिर भी जिक्किआँ मटेड़ीआँ पैराँ भी जिक्किआँ
बाहीआं जो रक्खीआं बाहर

इन इन राही मेरा वीर जो जाँदा
गले नूँ लैगा लगाई

नौकरी जो चल्लिआ मेरा छोटा देवर
भाई पुच्छदा घरे दा हाल

होर ताँ भाईआ सभ राजी बाजी
भाबी इगे चनाई

किआ कीती बदनामी किआ कीता गुनाह
किदे खातर डगिआ चनाईं

ना कीती बदनामी ना कीता गुनाह
तौं लक्खीआ हार गुआइआ

इक दे बदले साहे दो लक्ख दिता
मना दी जोड़ी वछोड़ी

उड़ उड़ कूँजड़ीए

उड़ उड़ कूँजड़ीए,
बरगा दे धिआड़े ओ
मेरे गमां जिन्दिआँ दे मेले हो
वे मना जाणी मेरी जान

उड़ उड़ कूँजड़ीए
पर तेरे सूने दो मढाँवाँ

रूपे दीआँ चूजाँ हो
वे मना जाणी मेरी जान

उड़ उड़ कूंजड़ीए,
चिकनी बूंदा मेघ वरसे
पर तेरे भिज्जे हो
उ मेरे गामा जाणी मेरी जान

उड़ उड़ कूंजड़ीए,
ऊचे पीपल नीघा पेईआँ
झूटे लाँदीआँ सेईआँ हो
वे मना जाणी मेरी जान

उड़ उड़ कूंजड़ीए,
जिदे रेहले फिरी मल्लिले
मुआ मिलदा ना कोई हो
वे मना जाणी मेरी जान

अंब पक्के घर आ

लिखी लिखी चिट्ठीआँ मै भेजाँ बलोचा ओ
अब पक्के घर आ भलिआ लोका ओ

अब पक्के घर कीआँ आवाँ बलोचणीए,
साहिब छुट्टी नही दिंदा कि भलिए लोकणीए,

लिखी लिखी चिट्ठीआँ मै भेजाँ बरकिआँ ओ
साई मुई घर आ कि भलिआ लोका ओ

माई मुई ता खरा होइआ बलोचणीए
लोका विहगा होइआ कि भलिए लोकणीए

लिखी लिखी चिट्ठीआँ मैं भेजाँ बलोचा ओ
भाई मूआ घर आ कि भलिआ लोका ओ

भाई मूआ ता बुरा होइआ बलोचणीए
बाँह मेरी टुट्टी गई कि भलिए लोकणीए

लिखी लिखी चिट्ठीआँ मैं भेजाँ बलोचा ओ
भैण कुआँदड़ी होई कि भलिआ लोका ओ

पैसिआ दी गठडी मैं भेजाँ बलोचणीए
भैणा जो तूँ विआह कि भलिए लोकणीए

लिखी लिखी चिट्ठीआँ मैं भेजाँ बलोचणीए
साहिब मूआ घर आवाँ कि भलिए लोकणीए

साहिब मूआ ताँ खरा होइआ बलोचा ओ
हुण तूं घरे जो आणा कि भलिआ लोका ओ

ामणा दिआ छोरुआ ओ

बामणा दिआ छोरुआ
सोइआ मुलख बगाना नीवें चलणा
भला बेईमान छोरुआ ओ

बामणा दिआ छोरुआ
मोइआ तूध पिछे होई बदनामी वे
भला बेईमान छोरुआ ओ

बामणा दिआ छोरुआ
वो रुसी मत जाँदा राटी खाई लै
भला बेईमान छोरुआ ओ

बामणा दिआ छोरुआ
मोड़आ उच्चिआँ लो बँगुला बणाई दे
भला बेईमान छोरुआ ओ

बामणा दिआ छोरुआ
वो उस पर बोले काला काला काग ओ
भला बेईमान छोरुआ ओ

बामणा दिआ छोरुआ
वो कजीदा नें भरिआ जरीमाला
भला बेईमान छोरुआ ओ

बामणा दिआ छोरुआ
वो कीतीआं दा भिरिआ जरीमाना ओ
भला बेईमान छोरुआ ओ

इक गल्ल सुणी जाईआँ

कूंजा जाए पईआँ बरोट
चिट्टे दंद गुलाबी होंट
गल्लाँ करन पंजाबी लोक
नाँ इक गल्ल सुणी जाईआँ

कूंजा जाए पईआँ नदौण
ठंडे पाणी नाँ निरमल न्हाडण

इक घुट्ट पी जाइआ दिओरा
ताँ इक घुट्ट पी जाईआँ

कूँजा जाए पईआँ गुलेर
भाबी मंगदी निक्के दी वेर
इक लक्ख देई जाइआँ दिओरा
ताँ इक गल्ल सुणी जाईआँ

कूँजा जाए पईआँ कलेसर
भाबी तोले दी मंगदी केसर
तुरत घडाई दे वो दिओरा
इक गल्ल सुणी जाईआँ

कूँजा जाए पईआँ पपरोले
भाबो रोंदी डुग्गे खोले
इक गल्ल सुणी जाइआँ दिओरा
ते इक गल्ल सुणी जाईआँ

कूँजा जाए पईआँ मंडीआँ
चिट्टे चाउल रिझदे हंडीआँ
दुध भत्त खाई जाइआँ दिओरा
ताँ इक गल्ल सुणी जाईआँ

कूँजा जाए पईआँ पत्तणे
मेरा दिल नहीं लगदा कत्तणे
चरखा भन्न सुट पों दिओरा
ते इक गल्ल सुणी जाईआँ

कूंजा जाए पईआँ सकेत
इक कुछड़ हूआ पेट
तीजा खेले वालू रेत
ते इक गल्ल मुणी जाइआँ

ओ दूरे दिआ वासीआ

चबे दीआँ धारां पैण फुहारां
ओ दूरे दिआ वासीआ हुण घरे आए जा

बदलां घिरी घिरी हार वणाणा
रल मिली सखीआँ ने झूले पाए हो
ओ दूर दिआ वासीआ हुण घरे आए जा

पँखेरू ते पंछीआ ने कितणे संदेश भेजे
बिजली दी चम-चम हिली हां कलेजे हो
ओ दूर दिआ वासीआ हुण घरे आए जा

लग पए जी रोग दिलाँ दे

जद मेरे पीआ तुसी घर ते तुरे
लग पए जी सानूँ रोग दिलाँ दे

भरीआँ कचहिरी बिच चिट्ठी जो पुज्जी
डिग गई जो साडी कलम दुआत
घड़ी दिन टिक्की चढ़ने नूँ आइआ
लग पए जी गोरी राह सड़काँ दे

घड़ी दिन टिक्की चढ़ने नूँ आइआ
आ पकड़ी जी नबज गोरी दी

उठ मेरी नानीए उठ मेरी पिआरीए
हट गए नी तेरे रोग दिलां दे

झुल्ल बड़े दिआ पत्तरा

झुल्ल बड़े दिआ पत्तरा
सुच्चे पत्तरा ओ
माड़े सज्जणे लाइआ

कीआं फुल्लां मैं बूआ जिआणीए पयोनाणीए
बूटा बाझ पाणीए कुमलाइआ
माड़े सजणे लाइआ

दोओं नैने दा नीर बरसानीआं
बूटा उमरी आइआ
माड़े सजणे लाइआ

विवाह-गीत

इक दिन पुत्तर पराइआ

यशोधा माए मैं नही दुध खाइआ
धिवले डोली गवाइआ
हथड़ू वी घणे माहीआ पलड़ू वी घणे
दुध कीआँ छमकाइआ
छोटे छोटे हथड़ू माए छोटे छोटे पलड़ू
छिका कीआँ हत्थ आइआ

यशोधा माए मैं नही दुध खाइआ
हथड़ू वी डड्डे माइआ पलड़ू वी डड्डे
चुकी गले कने लाइआ
यशोधा माए मैं नहीऊ दुध खाइआ
दई दई तूँ माए मेरीए कालीआ कंमलीआ
इक दिन पुत्तर पराईआ

मेरा जोबन घट घट जाए

खूहे दे सिरे खडोनीए
तूँ पैराँ छल मल धो
लाटर चंबा खिड़ी गिआ
तूँ बैठी हार परो

माए नी सुण मेरीए
तूँ बापूऐ जो समझा

धीआँ होईआँ वडेरीआँ
कोई नौकर दे लड़ ला

धीए नी वड़बोलीए
तूं ऐडे बोल न बोल
जिथे कट्टीआँ बारा ताँ वरमाँ
इक महीना कट्ट होर

सू लैण दे धीए माझीआँ
धीए खिल नी लैण दे कपाह
बीज लैण दे धीए कमादीआँ
जद कट्ट देणा तेरा विआह

बाराँ ताँ बरिहआँ माए इउँ रही
जिहीआँ वेल्हण नाल वहार
अब न कटूगी एक घड़ी
मेरा जोबन घट घट जाए

उह ताँ गाँउदीआँ मंगल चार

घर वसुदेव दे जंमिआ पुत्तर यशोधा पलंघ चढ़ी
नंद करदा है गाईया दे दान सोने दे सिंग मढ़ी

भट्ट ब्राह्मण दिंदे ने सीस जीवे साडा क्रिशन हरी
उह ताँ अत्ण ब्रिज दीआँ नाराँ सोलाँ सगार करी

उह ताँ गाँउदीआँ मगल चार जीवे साडा शाम हरी
घर वसुदेव दे जंमिआ पुत्तर यशोधा पलंघ चढ़ी

नद वारदा है मोतीग्राँ दे दान थाल कटोर भरी
उह ताँ ग्राण बृज दीग्राँ नारा सोलाँ सगार करी

भट्ट ब्राह्मण दिदे सीस जीवे साड़ा क्रिशन हरी
उह ताँ गाँउदीग्राँ मगल चार जीवे साड़ा शाम हरी

तेरे सहुरुए आए

मरुए दी छावाँ बेटी खेलदीए
दो वनजारे ग्राए
लुक जा छुप जा धीए लाडलीए
तेरे सहुरीए ग्राए

मैं कीआँ लुकाँ कीग्राँ छुपाँ
माए बावल धरमी ने सदाए
माए ताइग्रा धरमी ने सदाए
दो वनजारे ग्राए

मरुए छावाँ बेटी खेलदी हो
लुक जा छुप जा धीए लाडलीए
तेरे सहुरीए ग्राए
दो वनजारे ग्राए

इहनूँ होर पाइउ जी

इहनूँ होर पाइउ जी
लाड़े दे बाबे दा पेट बड़ा कुड़ाला
इहनूँ होर पाइउ जी
लाड़े दे बाबे दा पेट बड़ा कुड़ाला
उड़ोंली भत्ते दी मुकाई
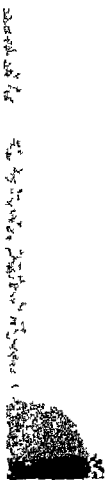
वाटी मद्धरे दी मुकाई
टोंची पाणीआं दी मुकाई
इदा पेट वडा चुकना
इह खाँदा ऊनाँ दूणा
इहनूं होर पाइउ जी

होर मलो अंग मेरे

दो वणजारे मैं सौदे जो भेजे
सो बणजारू ना आए
थोड़ा बुटणा भाइआँ भाइआ जो देणा
होर मलो अंग मेरे

दो वणजारू मैं नीरे जो भेजे
सो वणजारू ना आए
थोड़ा थोड़ा नीर भरावाँ जो देणा
होर डोल्हो अंग मेरे

दो बणजारू मैं तेले जो भेजे
सो वणजारू ना आए
थोड़ा थोड़ा तेल मेरे भाइआँ जो देणा
होर मलो अंग मेरे

बजणाँ लागीआँ झाँजराँ

गज मोतीआँ दा सिहरा बन्निआ मन मेरे
आउ हरी साडे विआह रघुनंदन आए
लाल लगे लाड़े पाटीआं वसी घर आए

आउ हरी साडे मोरे लाल लगे लाड़े डोगे
आउ हरी साडे अंगणे लाल लगे लाड़े कगणे
आउ हरी साडे बेड़े लाल लगे लाड़े दे सेहरे

आउ हरी साडे बिआह रघुनंदन आए
बाजे बजे कुछ वाजे बजे बजणाँ लागीआँ झाँजराँ
आउ हरी साडे बिआह हरी दिखणा आइआ

नाइए जो दोश ना देणाजी

बीडी बीड़ी लाड़ा पगडीआ बन्नदा
नाईए जो दोश ना देणा जी
नाईआ नाईआ मेरे धरमाँ दीआ भाइआ
तूं मेरी बणन बणाई जी

सेजी मेंजी लाड़ा कपडीआ पहिनदा
भैणा जो दोश ना देणा जी
भैण भैणे मेरीए चजलीए भैणे
तैं मेरी बणत बणाई जी

भैणाँ दीआँ इछिआँ पूरीआँ

घोडी दुमँध सहोडी मुमब बडजे
मर्ली सहि तेजन घोडी
मरदार घोड़ी आन बधी
सरम लाड़ा सहि घोड़ीआँ चढ़िआ
तेरी माउ दे गले हार सोहे
भैणाँ बाही चूड़ीआँ
तेरीआँ भाबो दे गल्ले हार सोहे
भैणाँ दीआ इछिआँ पूरीआँ

आउ नी भैणो बहो नी भैणो
सभ सहि भैणाँ मेरीआँ
गाई ताँ मैंसाँ तिजो देसाँ
होर बसतू तेरीआँ

सिर वन्ने दे वाले जो बंन्हदे
कने सोहदे कोकले
तेरे हथडूए रुमाल सोहे
पैरा पिडे मोठड़े

सेहरा तैनूँ देनीआँ

सेहरा तैनूँ दे देनीआँ बीरा पहिन के जा
मैं कीआँ पहिनाँ भैनड़ीए मेरा लशकर जाए
लशकर नूँ बीरा मोड लिआ बीरा पहिन के जा

वालि तैनूँ मैं देनीआँ बीरा पहिन के जा
मैं कीआँ पहिनाँ भैनड़ीए मेरा लशकर जाए
लशकर नूँ बीरा मोड लिआ बीरा पहिन के जा

कठा तैनूँ मैं देनीआँ बीरा पहिन के जा
मैं कीआँ पहिना भैनडीए मेरा लशकर जाए
लशकर नूँ बीरा मोड लिआ बीरा पहिन के जा

तेरे सेहरे नूँ लग्गे हीरे

नवाँ दूरे दा आइआ दई घलिआ राजे
रची गुंद फेरी गुंदी लिआ मेरी मालण सेहरा

तेरे सेहरे नूँ लगड़े आए औ
देखी विगसे सहि लाडिआ तेरा भाइआं

तेरे सिहरे नूँ लगड़े हीरे
देखी विगसे सहि लाड़िआ तेरे बीरे

तेरे सिहरे नूं लगड़े जामे
देखी विगसे सहि लाडिआ मेरे मामें

रच्ची गुद फेरी गुदी लिआ मेरी मालण सिहरा
नवाँ दूरे दा आइआ दई घलिआ राजे

वीरे दी घोड़ी

नीली नीली घोड़ी परीआँ बागाँ ते मोड़ी
घेरी घराई बँन्ही बापू जी दे अगणा
मार पलाकी बीर घोड़ीआ जा चढ़िआ
जी धरत कबे सारा लोक जे डरिआ

जी चड़ही करी जाणा वीरा साह्वरे देश
बंनो नपी थकदी वे कांता की देख
नीली नीली घोडी हरीआँ बागा ते मोडी
घेरी घराई बंन्ही बापू जी अगणा

घोड़ीआँ

इह घोडी मेरे बीरे दी विद्राबन से आई
मेल लई मेरे बाबे ने गोकल वजी ए बधाई

लै घोड़ी वीर तुर चलिआ अपणी से चतुराई
जाँदा ते मैं ना घेरसा बीरा दे बधाई

जो कुछ मंगणा सै मग लै भैणे देर न लाई
सुच्चा सूट रेशमा मेरा हार बधाई

अबल अबल मेरे बीरे दे कपड़े केसर दीआँ छड
ल घोड़ी बीर टुर चलिआ आपणी से चतुराई

इह् घोड़ी मेरे चाचे दी बिंद्रावन से आई
मोड़ लई मेरे चाचे ने गाकल वर्जा बधाई

निक्की निक्की घोड़ी

निक्की निक्की घोड़ी मेरे श्री रंग पतला
आण बधी मेरे बाणे दे बेहड़े
आणा कहिदा मेरा मोनीआँ दा दाणा
माई कहिदी मेरा बालक इआणा
मार फुगाटी लाला घोड़ीआ चड़िआ
धरती कम्बी सारा लोक जी डरिआ
ना डरो धरती ना डरो लोको
शाह जी दा बेटड़ा बिआहण नूँ चड़िआ

श्री रंग महिलां जो आणा जी

लिखी लिखी चिट्ठियां मैं बगलें जो भेजां
श्री रंग महिलाँ जो आणा जी

मैं कीआँ आवाँ मेरी बाँकीए बनरो
नाइए ने घट घट रोके

नाइए जो देवाँ मैं रोक रुपईआ
श्री रंग महिलाँ जो आणा जी

मैं कीहाँ आवाँ मेरी बाँकीए गोरीए
प्रोहतों ने घट घट रोके

प्रोहतों जो देवाँ मैं पलंघ ना पीढ़िआ
श्री रंग महिलाँ जो आणा जी

बस चलदा न कोई

खारीआँ बदल लइआँ हुण होई पराई
बाबल बेटड़ीए हुण होई पराई

बाबल मणस दिती बस चलदा न कोई
ताए बेटडीए हुण होई पराई

ताए ने मणस दिती बस चलदा न कोई
भाइए दी भैनडीए हुण होई पराई

भाइए ने मणस दिती बस चलदा न कोई
चाचे बेटडीए हुण होई पराई

चाचे ने मणस दिती बस चलदा न कोइ
खारीआँ बदल लईआँ हुण होई पराई

बाहर आ मेरी शाम सुन्दरी

बाहर आ मेरी शाम सुदरी
काहन लगनाँ जो आए जी
मै कीहाँ आवाँ काहना मेरिआ
बापू ते शरमाँदीआँ
बाप जो तेरा से सहुरा मेरा
उस ते कजो शरमाणा वे

बाहर आ मेरी शाम सुदरी
काहन लगना जो आए वे
मैं कीहाँ आवाँ काहनाँ जो मेरिआ
भाईए ते शरमांदीआँ

भाई जे तेरा मैं साला मेरा
भाई ते शरमाणा किआ

जे साडी बेटी

नूँ सुण नीवआं कुड़मा
अरज बदी दी नूणिओ जी

जे साडी बेटी कंम न जाण अंदर बही समझाओ ई
जे साडी बेटी धिओ डोल्हे पाणी करके जाणिओ जी

जे साडी बेटी मोटा कत्ते रेशम करके जाणिओ जी
जे साडी बेटी मंदा बोले चंगा करके जाणिओ जी

सुहाग मंगण बाबे दे गई

सुहाग मगण बाबे दे गई ओ
सुहाग मगण बाबे दे गई ओ
धीए हत्थ महिंदी सीस डोरी बाईं चूड़ा ला
सुहाग तैनूं राम देवेगा

सुहाग मगण नाए दे गईओ
सुहाग मंगण नाए दे गईओ
धीए हत्थ महिंदी सीस डोरी बाईं चूड़ा ला
सुहाग तैनूं राम देवेगा

सुहाग मगण चाचे दे गई
सुहाग मंगण चाचे दे गई
धीए हत्थ महिंदी सीस डोरी बाईं चूड़ा ला
सुहाग तैनूं राम देवेगा

बस चलदा न कोई

खारीआँ बदल लइआँ हुण होई पराई
बावल बेटडीए हुण होई पराई

बावल मणस दिती बस चलदा न कोई
ताए बेटड़ीए हुण होई पराई

ताए ने मणस दिती बस चलदा न कोई
भाइए दी भैनड़ीए हुण होई पराई

भाइए ने मणस दिती बस चलदा न कोई
चाचे बेटडीए हुण होई पराई

चाचे ने मणस दिती बस चलदा न कोइ
खारीआँ बदल लईआँ हुण होई पराई

बाहर आ मेरी शाम सुन्दरी

बाहर आ मेरी शाम सुदरी
काह्न लगनाँ जो आए जी
मैं कीहाँ आवाँ काह्ना मेरिआ
बापू ते शरमाँदीआँ
बाप जो तेरा से सहुरा मेरा
उस ते कजो शरमाणा वे

बाहर आ मेरी शाम सुदरी
काह्न लगना जो आए वे
मैं कीहाँ आवाँ काह्नाँ जो मेरिआ
भाईए ते शरमांदीआँ

भाई जे तेरा से साला मेरा
भाई ते शरमाणा किश्रा

जे साडी बेटी

नूँ सुण नीवओं कुड़मा
अरज बदी दी सुणिओ जी

जे साडी बेटी कम न जाणे अंदर बही समझाओ ई
जे साडी बेटी घिश्रो डान्हे पाणी करके जाणिओ जी

जे साडी बेटी मोटा कत्ते रेशम करके जाणिओ जी
जे साडी बेटी सदा बोले चंगा करके जाणिओ जी

सुहाग मंगण बाबे दे गई

सुहाग मगण बाबे दे गई ओ
सुहाग मगण बाबे दे गई ओ
धीए हत्थ महिंदी सीस डोरी बाहीं चूड़ा ला
सुहाग तैनूं राम देवेगा

सुहाग मगण ताए दे गईओ
सुहाग मंगण ताए दे गईओ
धीए हत्थ महिंदी सीस डोरी बाहीं चूड़ा ला
सुहाग तैनूं राम देवेगा

सुहाग मंगण चाचे दे गई
सुहाग मंगण चाचे दे गई
धीए हत्थ महिंदी सीस डोरी बाहीं चूड़ा ला
सुहाग तैनूं राम देवेगा

बस चलदा न कोई

खारीआँ बदल लइआँ हुण होई पराई
बावल बेटड़ीए हुण होई पराई

बाबल मणस दिती बस चलदा न कोई
ताए बेटड़ीए हुण होई पराई

ताए ने मणस दिती बस चलदा न कोई
भाइए दी भैनडीए हुण होई पराई

भाइए ने मणस दिती बस चलदा न कोई
चाचे बेटडीए हुण होई पराई

चाचे ने मणस दिती बस चलदा न कोइ
खारीआँ बदल लईआँ हुण होई पराई

बाहर आ मेरी शाम सुन्दरी

बाहर आ मेरी शाम सुदरी
काहन लगनाँ जो आए जी
मै कीहाँ आवाँ काहना मेरिआ
बापू ते शरमाँदीआँ
बाप जो तेरा से सहुरा मेरा
उस ते कजो शरमाणा वे

बाहर आ मेरी शाम सुदरी
काहन लगना जो आए वे
मैं कीहाँ आवाँ काहनाँ जो मेरिआ
भाईए ते शरमांदीआँ

भाई जे तेरा से माला मेरा
भाई ते शरमाणा किम्रा

जे साडी बेटी

नूँ मुण नीवआँ कुडमा
अरज बदी दी सुणिओ जी

जे माडी बेटी कम न जाणे अदर वही समझाओ ई
जे साडी बेटी घिम्रो डोल्हे पाणी करके जाणिम्रो जी

जे साडी बेटी मोटा कत्ते रेशम करके जाणिम्रो जी
जे माडी बेटी मंदा बोले चंगा करके जाणिओ जी

सुहाग मंगण बाबे दे गई

सुहाग मंगण बाबे दे गई म्रो
मुहाग नगण बाबे दे गई ओ
धीए हत्थ महिदी सीस डोरी बाई चूडा ला
सुहाग तैनूँ राम देवेगा

मुहाग मगण ताए दे गईओ
सुहाग मगण ताए दे गईओ
धीए हत्थ महिदी सीम डोरी बाई चूड़ा ला
मुहाग तैनूँ राम देवेगा

सुहाग मगण चाचे दे गई
सुहाग मगण चाचे दे गई
धीए हत्थ महिदी सीस डोरी बाई चूड़ा ला
सुहाग तैनूँ राम देवेगा

सुहा । मगण भाईए द गई ओ
सुहाग मगण भाइए द गई ओ

भैणे हत्थ महिंदी मीस डोरी वाई चूड़ा ना
सुहाग तैनूं राम देवेगा

बचनाँ दी बद्धी मै चल्ली आँ

बोल नी मेरी रण बण कोइलें
रण बण छोड़ कहाँ चल्लीए
बाबा जी साडा धरम दवारी
बचनाँ दी बद्धी मै चल्ली आँ
ताऊ जी साडा धरम दुआरी
बचनाँ दी बद्धी मैं चल्ली आँ

चाचू जी साडा धरम दुआरी
बचनाँ दी बद्धी मै चल्ली आँ
मामा जी साडा धरम दुआरी
बचनाँ दी बद्धी मै चल्ली आँ
किआ करे साडी ताई बिचारी
बचनाँ दी बद्धी मैं चल्ली आँ

सुहाग

चार बो खंबीआ गज गज लबीआँ
गड्डो कुड़ी दे मामे दे अंगणे
मामा बे धरमी धरम करेदड़ा
अज तेरे धरमे दी वेलाँ

चार वो खबीआँ गज गज लम्बीआँ
गड्डो कुडी दे ताए दे अगणे

ताईआ वे धरमी धरम करेंदा
अज तेरे धरमे दी बेला
चार वो खवीआँ गज गज लम्बीआँ
गड्डो कुड़ी दे बाप दे अगणे
बाप जे धरमो धरम करेंदा
अज्ज तेरे धरमे दी बेला

मन मेरा मोहिआ तुमने

अज नौणी कल बुटणा परसों भूमाँ ते डोले चढना
आगे मिली जाए परसरामाँ मन मोहिआ तुमने

आँदी गडीआँ दिदी हरना आगे खड़ीआँ भूमाँ तिन जनीआँ
आगे मिली जाए परसरामाँ मन मेरा मोहिआ तुमने

एओ जिंदगी दो दिन दी हसणा खेडणा जिंदगानी
आगे मिली जाए परसरामाँ मन मेरा मोहिआ तुमने
परसरामाँ बेईमाना मन मेरा मोहिआ तुमने

बागी साडी अंब केले केले नूँ दिल बोले
पकड डाली तोड केला केले नूँ दिल बोले
परसरामाँ बेईमाना दिल मेरा मोहिआ तुमने

बागी साडी निंबू पके निबुआँ नूँ दिल बोले
पकड डाली तोड निबू निबूआँ नूँ दिल बोले
परसरामाँ बेईमाना दिल मेरा मोहिआ तुमने

रस्स लाजाँ

रंग रस्स लाज पहिली कि मंगल गाईआ
गोकल ताँ गोपीआँ मोहण वाले
श्री क्रिशन बिआहुण आइआ

सिर सून सहिरा मुकट सोहण
अग कंचन चौलिश्रा
राणी तॉ पूजे लाजे पहिली
मुखे ते अमृत बोलणा

रग रस्स लाज दूसरी
कि रस्स पिआईश्रा
बाईआँ ते पकडी कॅनिआँ कुमारी
राम धुनष संगारिश्रा
धन्नुशे सॅगार बाले
राम आइआ श्री क्रिशन बिश्राहण श्राइश्रा

राणी ते पूजे
रंग रस्स लाज तीसरी
कि लगण गणारी
इ दर ते ब्रह्मे लगण गाइश्रा
वेदी पडण आइश्रा
राणी ते पूजे

रग रस्म लाज चौथी कि खारा गडिश्रा
ऑचले ते पकड़ बिश्रालणा
बीरा बडडिआ तेरे धरमें दी बेडी श्राइए
रॅगॉ छे गधोरी कुरकशेतर नाहण श्राइआ
राणी ते पूजे लाज चौथी
रुकमणी बर मोहिआ

रग रस्स लाज पचमी कि राधे रुकमणी
ठुमकुए ठुमकुए चाल चलदी
पैर नेहतर रूट लई गल हार डाल
सगार सोहणे मुखे ते श्रमृत बोलदी

राणी ते पूजे लाज पंजमी
हत्थाँ ते दान करदी ए

राणी ते पूजे
रंग रस्स लाज छिटमी
सौरस बेदीआँ रूप वाला
सेजे पर सुनिआइआ
राणी ते पूजे लाज छिटमी
हत्था ते दान करदीए

रंग रस्स लाज सतमी
कि मतिओ लाजाँ पूरीआँ
जनक ने वर दीआँ सीआ दे
बिदी माता लिखिआ जोडीआँ
राणी ताँ पूजे लाज सतमी
मत्ते लाजाँ पूरीआँ

बापुए ते सरमाँदी ए

बार आउ मेरी सिआम सुन्दरी
कान्ह बिआहणे जो आइआ
मै कीआँ आवाँ आप मेरे सुआमी
बापूए तो सरमाँदीए
बापू तेरा धरम करदा
हत्थ लोटा चूलीआँ भरदा
लै वे सरम जवाईआ
बार आउ मेरी सिआम सुन्दरी

घोड़ी तेरी वो बीरा

घोड़ी तेरी वो वीरा
मोहणी जे बणदी काठीआं दे नाल

वागे दे तल्ले तल्ले ज होई जा
चोट ना मारिआँ सुणाउ रे
शहिर नवाबे दे घर वसणाँ
वाले तेरे वे वीरा

सोहणे बणदे डोराँ दे नाल
मै वलिहारी वे मेरिआ सुरजणा
वागे दे थल्ले-थल्ले होई आउ
चोट नगारिआँ दी सुणाउ
शहिर नवावे दे घर वसणा
वाले तेरे वे वीरा

नूँह गोरी आई

हरे भधेहा मेरे मने भेत्रा
किस दी सुहेनडी कुण गोरी आई
हरे भधेहा किस दी मुहेतडी कुण गोरी आई
रामचन्दर सहेतडी सीता गोरी आई
क्रिशणे सुहेतडी राधा गोरी आई
हरे भधेआ किस दी सुहेनडी कुण गोरी आई
सुहरे सुहेतडी नूँह गोरी आई

तुम कैसा घर बर लिआ

बाबे जी दे महिल में
मै रमी लग्गी रहिदी हाँ
उह उह वीवी राधके
तुम कैसा वर पा लिआ

राम वर पा लिआ
भगवान वर पा लिआ

पालकी जो बैठ के
घन्नीआ लाल आ गिआ

धीए घर जा अपणे

तेरिआँ महिलाँ दे अंदर वे
बापू जी मेरिआँ गुड्डीआँ रहिआँ
तेरी गुड्डीआँ खिलावे तेरी भैण
धीए घर जा अपणे

तेरिआँ महिलाँ दे अंदर वे
बापू जी मेरा डोला अड़िआ
तेरे डोले नूँ लावाँ कहार
धीए घर जा अपणे

आज मेरे भाग बड़े

आज मेरे भाग बडे
मेरे ऑगणे बनवारी आए
आज मेरे भाग बडे

पैदा करन जो ब्रह्मा जी आए
नाल आई सवित्री श्री
आज मेरे भाग बड़े

पालन करन को विष्णु जी आए
नाल आई लक्ष्मी श्री
आज मेरे भाग बडे

सीता रामचंदर जी आए
नाल आए लक्षमण जी
आज मेरे भाग बड़े

बेल फडी सदा शभू जी आए
नाल आई पार्वती
आज मेरे भाग वडे

वीन वजाँदे नारद जी ग्राए
नाल ग्राए भैरों जती
ग्राज मेरे भाग वडे

छोड़िया हो बापूए दा देस

उचे उचे बँगले नागन जे बैठदी
चौपड खेलदी तीन वल पामदी
भरीआँ पटरीआँ हो
हुण होइआँ तिआरिग्राँ हो

ग्रज पर छोडिग्रा हो बापूए दा देस जी
हो अम्मा दा पड़ोस जी हो
ग्रज पर छोडिआ हो साथणी दा साथ
पीपला दी पीव जी हो गुडीए दा खेलुणा हो

नदी हुंदी डुँघड़ी हो तार हुदा छोटड़ा हो
किहा करी लघणा हो नदीग्रा थे पार जी हो
हाथा लैदी मुँदड़ी हो गले लैदी हार जी हो
लंघी जाणा पार जी हो

अग्गे मोडी हाँउदी पिच्छे मोडी देखदी हो
टुलपुल भालदी हो छम-छम रोवदी हो
खडे होइआँ हेसीग्रो खडे होइआ ढोलीग्रो
पल भर देखण देयाँ बापू दा देस जी हो

बागे छोड़ी कुत्थे चली

मेरीए बागे दीए कोइले
बागे छोड़ी कुत्थे चली
मेरे बापूए बचनाँ दी बग्घी
बचनाँ दी बग्घी उठी चली

लेओ रे श्री रंग सिहरा

जिस दिन गरड़ भगवान जड़िआ
सखीए श्री रंग आइआ राम
निजारा चौर झूले सिर पर
मस्तक तिलक विराजे राम
भजन बाजे देही गाइण
सखीए श्री रंग आइआ

साठ सहेलीआँ रुकमणी मिलीआँ
हरी वर देखण जाणा राम
जब देखिआ हरी वर सुंदर बाँका
देखी पल्लड़ा पाइआ
तुम लिआउ रे मालिण फूल मरूआ
लेओ रे श्री रंग सिहरा

चौका पुआई करी बैठे वेदी
राधा तीं किशन दी जोड़ी राम
जब जोड़ पलुआ बैठी
लिआणे पाए पैरा पर मुंदरे
तुस रे मालण फूल मरूआ
लेओ रे श्री रंग सिहरा

बैल फडी सदा शभू जी आए
नाल आई पार्वती
आज मेरे भाग वडे

वीन बजाँदे नारद जी ग्राए
नाल ग्राए भैरो जती
ग्राज मेरे भाग वड़े

छोड़िया हो बापूए दा देस

उचे उचे बँगले नागन जे बैठदी
चौपड खेलदी तीन बल पामदी
भरीआँ पटरीआँ हो
हुण होइआँ तिआरिग्राँ हो

ग्रज पर छोडिग्रा हो बापूए दा देस जी
हो अम्मा दा पडोस जी हो
ग्रज पर छोड़िआ हो साथणी दा साथ
पीपला दी पींघ जी हो गुडीए दा खेलुणा हो

नदी हुदी डुँघड़ी हो तार हुदा छोटड़ा हो
किहा करी लघणा हो नदीग्रा थे पार जी हो
हाथा लैंदी मुँदड़ी हो गले लैंदी हार जी हो
लंघी जाणा पार जी हो

अग्गे मोड़ी हाँउदी पिच्छे मोडो देखदी हो
टुलपुल भालदी हो छम-छम रौवदी हो
खड़े होइआँ हेसीग्रो खड़े होइआ ढोलीग्रो
पल भर देखण देयाँ बापू दा देस जी हो

बागे छोड़ी कुत्थे चली

मेराए बागे टीए कोइल
बागे छोड़ी कुत्थे चली
मेरे बापूए वचनाँ दी बग्घी
वचनाँ दी बग्घी उठी चली

लेओ रे श्री रंग सिहरा

जिस दिन गरड़ भगवान जड़िआ
सखीए श्री रंग आइआ राम
निआरा चौर झूले सिर पर
मसतक तिलक विराजे राम
भजन बाजे बेही गाइण
सखीए श्री रंग आइआ

साठ सहेलीआँ रुकमणी मिलीआँ
हरी वर देखण जाणा राम
जब देखिआ हरी वर सुंदर बांका
देखो पगड़ा पाइआ
तुम लिआउ रे मालिण फूल भरूआ
लेओ रे श्री रंग सिहरा

चौका पुआई करी बैठे बेदी
राधा ताँ क्रिशन दी जोड़ी राम
जब जोड़ पलुआ बैठी
लिआणे पाए पैरा पर मुंदरे
तुस रे मालण फूल भरूआ
लेओ रे श्री रंग सिहरा

शिश्राम सुदर भजा वदी मैं तरी
वदो मैं तेरी
ना ड्रां मोड़े कोमल ग्राईं
ना मोड वाई ना तोड तणीआँ
तुमरे मालन फुल मरूआ
लेश्रो रे श्रो रँग सिहरा

तेरे महिला दे अदर

तेर महिलाँ दे अदर जो बापू
मेरा डोला अड़िआ ए
तेरे डोले दिगे छुडाई
जा धीए घर आपणे

तेर महिला दे अदर माए
मेरी गुड़िआँ रहिआँ
तेरी गुड़िआँ दिगी पुजाई
जा तूँ घर आपणे

तेर महिलाँ दे अदर जी
बापू मेरी माँ रोए
तेरीआँ माओ जो दिगे पतिआई
तूँ जा घर आपणे

आज लालण की है बारी

हरी आज भेटिआ हरी कल भेटिआ
हरी साजण करे ओ मै बारी
हरी आज भेटिआ हरी कल भेटिआ

बाल वाहन मै बारी मैं वैठी ए लाला
लालण करीओ मै वारी
हरी आज भेटिआ हरी कल भेटिआ

एक पीआँ मेरा साठ सुहागण
एक सुहागण निआरी
हरी आज भेटिआ हरी कल भेटिआ

जा मेरे पोआ प्रदेश सदारे
कमर कटारा है भारी
हरी आज भेटिआ हरी कल भेटिआ

छुह छुह कलीआँ मैं सेज रचावाँ
आज लालण की है वारी
हरी आज भेटिआ हरी कल भेटिआ

तूँ ताँ पहिन बीरा

मैं तुहानूँ आख रही पटोईए नी
बेटड़े नूँ चंगा सिहरा बणा लिआउ
लाड़े लाडले नूँ तूँ ताँ पहिन बीरा

घोडी ठुमक चले घोडी ठुमक चले
बागे मोड चले
तेरी लगीआँ प्रीताँ जालम तोड़ चले

मैं तुहानूँ आख रही सुनिआरे बेटडे नूँ
चंगे वाले घड लिआउ लाडे लाड़ले नूँ
तूँ ताँ पहिन बीरा

नणद परौणी आई

अजी सदिओ दरजी सीओ मेरी वरदी
जी मैं घर पेईड़े जाणा

अजी सदिआ कुहारो पीडो मरा डोला
जी मैं घर पेईडे जाणा

अनी उठाओं नी भावो गल लग मेरे
नी नणद परौणी आई
अनो सहुरे ताँ साडे न धीओ न जाई
तूं नणद किथे ते आई

अजी उठ मेरी भाबा बिनूओं दिओं
नणद परौणी आई
वीरे ताँ तेरे ने कमॉदी न बीजी
म बिनूआ किथे ते दीमाँ

अनी उठीओं नी भाबो धौल पकाईओं
नी नद परौणी आई
अनी भाईए ताँ तेरे ने कणक न बीजी
मे धौल किथे ते पकावाँ

अजी भाबो ताँ साडी ते पड़ोसन चंगी
नी जिन साडा आदर कीता
अजी सदिओ कहारो पीडो मेरा डोला
नी मैं घर साहुरे जाणा

अगे गई नूँ सास पुछदी
नी किआ लिआई बधाई
अजी वीरा ताँ मेरा राजे दा नौकर
नी भाबो दे धी घर जाई

अनी एडे नखरे ना ला मेरीए बहू
नी भाबो ने मूँह भी न लाई

अजी बारही ताँ बरसी वीर घर आइआ
रुठड़ी ताँ भैण मनाई

अणो थाल्ला दे विच थाल कटोरे
सो मेरी नणदाँ नूँ दीजो
अजी थाल कटोरे घर रख भावा
मैं लईआ लैणा वधाई

अनी हारों दे विच हार हुथेला
अनी से मेरी नणदा नूँ दे दीजो
अजी हार हुबेला घर रख भावा
मैं लईआँ लैणी वधाई

अनी बारही ताँ बरसी वीर घर आईआ
नी रुठडी भैण मनाई
लोइआँ ले ले वधाई
नी रुठडी भैण मनाई

भैटिआँ नी सखीए

लोकाँ दीआँ जाईआँ हरना गिआ
हरने नाँ टादण वीरा मैं चली
पैरे चुभा जा ताँ कॉडडा ए
ए वद्दीआ नी सखीए इत घरे

कुण जिस पैर दे कडे
कुण भूले ठडी वाई ए
भावो खेले इस पैर दे कडे भाई भूले ठडी वाओ
भैटिआ नी सखीए इत घरे

हर बूंदे भरे किआरी

तिजो सिहरा तिजो मुकट
तिजो गानी सजा दूंगी
हरे बूंदे भरे किग्रारी
तिजो वारस लगे पिग्रारी

तिजो वाले तिजो डोरों
तिजो मोती सजा दूंगी
हरे बूंदे भरे किआरी
तिजो वारस लगे पिग्रारी

मैं तॉ सिहरा मँगांदी

मै तॉ सिहरा मँगादी मुकट जड़िआ
सिआम जी बोलदे किउँ नही राधा खड़ीग्रा

मै तॉ पतली चादर बिच खड़ीग्रा
साडो ददाँ दीग्रॉ होई जादीआँ कणीग्रॉ

साडे पैरॉ दीआँ घसी जॉदीआँ तलीग्रॉ
सिग्राम जी बोलदे किउँ नही राधा खड़ीआ

मै तॉ वाले मँगांदी डोरा जडीग्रा
सिआम जी बोलदे किउँ नही राधा खड़ीग्रा

मेरे भाईआँ जो ना लागे मंदी गाल

कुथूँ तॉ ग्राए बाबल पहुणे
बैठी कुथूँ ते ग्राई जनेत
हसी बिगसी धरमीग्राँ बोलणा
तेरा जस्स होए

नेड़े ते आए बाबल पाहुणे
दूरे ते अई जनेत
हस्सी बिगसी धरमीआँ बोलणा
तेरा जस्स होवे

भाँडे ताँ दिआ बाबल सोहणे
भरी थाला नाल कटोरीआँ
हस्सी बिगसी धरमीआँ बोलणा
तेरा जस्स होवे

मँगिआ ताँ दिने ओ माती ओ
थाल चोले नाल
हस्सी बिगसी धरमीआँ बोलणा
तेरा जस्स होवे

सानूं ताँ लगण बाबल दाईआँ
मेरे भाईआ जा नी लगे मदी गाल
हस्सी बिगसी धरमीआँ बोलणा
तेरा जस्स होवे

गाई भैंस ताँ दिने ओ बाबल
कटूआँ बछूआँ नाल नी लिआई
हस्सी बिगसी धरमीआँ बोलणा
तेरा जस्स होवे

मिकूं ना लगण चाहीआँ
मेरे भाईआँ जो ना लगे मदी गाल
हस्सी बिगसी धरमीआँ बोलणा
तेरा जस्स होवे

श्वसुर का घर

मेरी उठी वे कलेजे पीड़

जलदी बुलाओ सहुरे की
जिन्हे खरचिआ डेड हजार, मैं नी बचदी
जलदी बुलाओ जेठे की
जिन्हे कीते वाजे बारे तिआर, मैं नही बचदी
मेरी उठी वे कलेजे पीड़ मै नही बचदी

जलदी बुलाओ देवरे की
जिहड़ा गिआ सी जवे दे नाल, मै नहीं बचदी
जल्दी बुलाओ उस कथ राजे की
जिन्हे लईआं लावाँ चार, मैं नही बचदी
मेरी उठी वे कलेजे पीड़ मै नही बचदी

अम्मा जी मैं नहींउ बसणा

जली जाए पहाडाँ दा देस
अम्मा जी मैं नहींउँ बसणा

खद्दरे दा चोलू नी अम्मा
ताणे जो दई देदे
उपर लाई देदे सूही कोर
अम्मा जी मै नहीउँ बसणा

दँदलू दराटू नी अम्मा
हथे विच दई देदे

दसी देदे ने दूरे दे खेत
अम्मा जी मैं नहींउँ वसणा

छल्लीआँ दी रोटी नी अम्मा
खाणे जो दई देदे
हत्थी देदे ने फफरू दा साग
अम्मा जी मैं नहींउँ वसणा

जली जाए पहाड़ाँ दा देस
अम्मा जी मैं नहींउँ वसणा

मेरा सालूआ

मैं महीन महीन कत्तदी तार नी
मेरा सालूआ
मेरी अम्मा ने भेजे पटार नी
मेरा सालूआ
जिन्न निकले सोने दे हार नी
मेरा सालूआ

मैं महीन महीन कत्तदी तार नी
मेरा सालूआ
मेरी नणद भेजे पटार नी
मेरा सालूआ
जिन निकले काले नाग नी
मेरा सालूआ

धरेकाँ फुलीआँ प्रदेसी बीरा

धरेकाँ फुलीआँ प्रदेसिआ बीरा
धरेकाँ दी ठाँडडी छाँ बीरा मिली जाइआँ

अगे तां शेर खांदा भैण कीआं आवां तेरे पास
शेरां जो पास पासीआ बीरा मिल जाएउं

अगे तां नदीआं भरीआं कीआं आवां तेरे पास
नदीआं ते बेड़े पाउनीआं बीरा मिली जाइआं

भावी तां तेरी डाहडी ए भैणें कीआं करी आवां तेरे पास
भावीए नूं पईआं मजाई दीआं बीरा मिली जाइआं

किथे तां बना मिले जो किथे रखां ढाल तलवार
भैणे मिली लिआ

किन्नूं सुणावां माए रो रो

प्हाड़े देसे खट्टीआ नां जांदा
प्हाड़े ना जांदा कोई

छल्लीआं दी रोटी माए खाणे जो दिदे
निउडे ओ करदे निओ निओ
खाणे कुखाणे माए खाणे जो दिदे
किन्नूं सुणावा माए रो रो

टुटिआ घड़ोलू माए पाणीए जो दिदे
बिन्ने जो करदे निओ निओ
खडीआं कुआलीआ चढ़िआ ना जादा
किन्नूं सुणावां माए रो रो

टूटा मजोलू माए सौणे जो दिदे
खिदा जो करदे निओ निओ
गोरे गोरे बदने मांगणू जो लडदे
किन्नूं सुणावा माए रो रो

कुण वो परौणा अज औंगा ए

गोहरे ताँ मेरे डिऊठड़ी ठणकी
कुण वो परौणा अज औंगा ए
गोहरे ताँ डिऊठडी मे
बीर वो परौणा आउँगा ए

ढल ढल घिउआ पक पक पोलूआ
सस कुठालीआ औणा ए
किहो ताँ विही भैणे सस है तेरी
किहो दिही नद तेरी ए

अग्गी दा पूला सस है मेरी
अबरे दी बिजली नंद मेरी ए
ठंडी ठंडी छौआँ बड़ी दा टिआला
रोई रोई वेदन लाई ए

हेरी जाइआँ भैणे मुडी जाइआँ भैणे
रौंदे बालके खलाइआ ए
बालके मेरे जुग जुग रोणाँ
अम्मा दे जाए कछ मिलणा ए

घर ताँ जादे जो अम्मा जे पुछदी
किही ताँ दिहीं भैण तेरी ए
ठंडी ठंडी छौआं माए बडी टिआला
रोंदीआँ भेणाँ छडी आए

जोगी तूँ होइआ पुत्रा वैरागी तूँ होइआ
भैणा दे देसे मत जांदा ए

जोगी मैं हुणा माए बरागी मैं हुणा
भणा द दस अलख जगादा ए

दाणावारी कुस्से जो मंदा नहीं बोलणा

कम्मी कारे जो हत्थ ना लांदी
लाई करी बहिंदीआ चांदी आज
दाणा वारी कुस्से जो मदा नही बोलणा
चंदे दी चाँदणी चंदे घणे

घड़े घड़ोलूए जो हत्थ ना लांदी
लाई करी बहिंदी आ नालूए जो
दाणा वारी कुस्से जो मदा नही बोलणा
चंदे दी चाँदणी चंदे घणे

ददलू दराटूए जो हत्थ ना लाँदी
लाई करी बहिंदीए झाँजरां जो
दाणा वारी कुस्से जो मंदा नहीं बोलणा
चंदे दी चाँदणी चंदे घणे

तां नजरी आउंदा बाबले दा देस ओ

पिपल वरोटीआ
तेरी छाओ मैं खड़ी ओ तेरी
खड़ोतरी मुकाँदी काले केस

हवा नी चलदी
मुकदे नी केस वो
उड़ी उड़ी आउंदा नदीआँ दा रेत वो
खड़ोतरी मुकाँदी काले केस वो

उवार पासे मैं खड़ी
पारे पारे मेरी माँ खड़ी

डुल्ही डुल्ही पाउँदा अक्खाँ दा नीर बो
खड़ोतरी सुकाँदी काले केस बो
किक्कराँ जो वढी मुट्टाँ
बेरीआँ जो छाँगी सुट्टाँ
ताँ नजरी आउँदा मेरे बाबल दा देस
खड़ोतरी सुकाँदी काले केस बो

लोकाँ दीआँ धीआँ
खाउँदीआँ गुड़ घिउ
मैं कजो खाँदी फफरूए दा साग बो
खडोतरी मुकाँदी काले केस बो

नाइआ तेरी लत्त भज्जे
बाम्हण तेरी माँ मरे
जिन्ही मै दई दित्ती उच्चे पहाड़ बो
पिपल बरोटीआ

सहुरिआँ दे देस नहीं जाणा

जली जाँदा सहुरिआँ दा देस ओ अम्मा जी
भिआग जे हुंदी माए बहुकड़ी फड़ाई दिदी
दस्सी दिदी पटीआँ दा फेर ओ अम्मा जी
मैं नही बसणा सहुरिआँ दे देस

भांडे ताँ माँजो माँजी हत्थ घसी जाँदे
आपूँ कदी कोई मिजो मूँहों नही लाँदे
जली जाए इहा दिहा जीणा ओ अम्मा जी
मै नही ओ बसणा सहुरिआँ दे देस

छल्लीआँ दी रोटी माए साग बणाई दिंदे
भरी करी झोले दा कटोरा पकड़ाई दिंदे

जली जाए इहो दिह्रा खाणा अम्मा जी
जली जांदा सहुरिआँ दा देस ओ

कित्थी बहीके न्हावाँ

सासू पुछाँ साहुवरे पुछाँ
कित्थी बहीके न्हावाँ
नी चंद चड़े दीआँ चानणीआँ
पछाड़े बहीके न्हाना

जेठा पुछाँ जठाणीए पुछाँ
कित्थी बहीके न्हावाँ
अँगणा चंबा खिड़ी रहिआ
विच बगीचे न्हावाँ

सोए दे साग नूँ

भेजी थी ओ सासूए सोए दे साग नूँ
केताँ वे लिआवाँ हो मै वारी मुईए

केताँ ते लिआवाँ सोए दा साग हो
अगण ना बोइआ पछबाड़े ना जमोइआ
केताँ ते लिआवाँ सोए दा साग हो

कोल कोल टापड़ू ए भर मिझो लगदा
देई छड्डी विखड़े देश हो मैं वारी मुईए
केताँ ते लिआवाँ सोए दा साग हो

इक मन बोलदा नदीआँ मैं डुब्बी मराँ

अम्मा दी मै लाडली बापूए दी पिआरी ए
चाचिआँ देई छड्डी चंदरे गुलेर ए

अम्मा बैठी रोदी बापू बैठा झूरदा
भाई मेरे तोपदे खड्डाँ खड्डाँ नालीआँए

चिट्टीए चिट्टीए चादरे मच्छी कंडे सीतीए
तिजो पर डुली रिहा डोगरे दा लोक ए
किनी चादर दीती किनी चादर सीतीए
किनी ऊपर डोलिहाँ अतर फुलेल ए

अम्मा चादर सीती भावो चादर सीती ए
आशकाँ ने डोलिआ अतर फुलेल ए
इक मन बोलदा नदीआँ मैं डुब्बी मराँ
इक मन आखदा बालड़ी बरेस ए

इक बख खाई लिआ जले दीआँ जलादीआँ
इक बख रही गिआ सपडे दे हेठ ए
मरदी मरदी बोलदी हाँ माए मेरीए
हुण मत धीआँ दिंदे चदरे गुलेर ए

कि बबीहा बोले

सस्स पुछदी नूहाँ गोरीए
तेरे मुक्ख पर जरदी आई नी
कि बबीहा बोले

माए जेठ महीने हल्दी कुट्टी
तिसते जरदी आई नी
कि बबीहा बोले

सस्स पुच्छदी नूहाँ गोरीए
तेरे अदर दीपक बलिआ नी
कि बबीहा बोले

जली जाए इहो दिहा खाणा अम्मा जी
जली जादा सहुरिश्रा दा देस श्रो

कित्थी बहीके न्हावाँ

सासू पुछाँ साहुवरे पुछाँ
कित्थी वहीके न्हावाँ
नी चंद चडेहू दीआँ चानणीश्राँ
पछाड़े बहीके न्हाना

जेठा पुछाँ जठाणीए पुछाँ
कित्थी बहीके न्हावाँ
अँगणा चंबा खिड़ी रहिआ
विच बगीचे न्हावाँ

सोए दे साग नूँ

भेजी थी श्रो सासूए सोए दे साग नूँ
केताँ वे लिश्रावाँ हो मै वारी मुईए

केताँ ते लिआवाँ सोए दा साग हो
अगण ना बोइश्रा पछबाड़े ना जमोइश्रा
केताँ ते लिआवाँ सोए दा साग हो

कोल कोल टापड ए भर मिञो लगदा
देई छड्डी विखडे देश हो मै वारी मुईए
केताँ ते लिश्रावाँ सोए दा साग हो

इक मन बोलदा नदीआँ मैं डुब्बी मराँ

अम्मा दी मैं लाडली बापूए दी पिश्रारी ए
चाचिश्राँ देई छड्डी चंदरे गुलेर ए

अम्मा बैठी रोंदी बापू बैठा झूरदा
भाई मेरे तोपदे खड्डाँ खड्डाँ नालीआँए

चिट्टीए चिट्टीए चादरे मच्छी कडे सीतीए
तिजो पर डुली रिहा डोगरे दा लोक ए
किनी चादर दीती किनी चादर सीतीए
किनी ऊपर डोलिहाँ अतर फुलेल ए

अम्मा चादर सीती भावी चादर सीती ए
आशकाँ ने डोलिआ अतर फुलेल ए
इक मन बोलदा नदीआँ मै डुब्बी मराँ
इक मन आखदा बालड़ी बरेस ए

इक वख खाई लिआ जले दीआँ जलादीआँ
इक वख रही गिआ सपडे दे हेठ ए
मरदी मरदी बोलदी हाँ माए मेरीए
हुण मत धीआँ दिंदे चदरे गुलेर ए

कि बबीहा बोले

सस्स पुछदी नूहाँ गोरीए
तेरे मुक्ख पर जरदी आई नो
कि बबीहा बोले

माए जेठ महीने हल्दी कुट्टी
तिसते जरदी आई नी
कि बबीहा बोले

सस्स पुच्छदी नूहाँ गोरीए
तेरे अदर दीपक बलिआ नी
कि बबीहा बोले

माए काल महीने हनेरीग्रा रातीं
ताही दीपक बलिग्रा नी
कि बबीहा बोले

सस्स पुच्छदी नूहाँ गोरीए
तेरी गोदी बालक खेले
कि बबीहा बोले

माए नदी किनारे नाहुणे गईग्राँ
बालक रुड़दा आइआ नी
कि बबीहा बोले

माए किसे मलाह नूँ दरद ना आई
मैं चुक्क गले नाल लाइग्रा नी
कि बबीहा बोले

बडरा डराउणा सहुरिआँ दा देस

बधीआँ पटारीग्राँ नी माए होइआँ तिग्रारीग्राँ
ग्रज छोडी जाणा नी माए बाबा जी दा देस
अगे अगे चलदी नी माए पिछे मुड़ देखदी
वडड़ा सुहाणा बाबा जी दा देस उए

अगे ग्रगे चलदी नी माए पिछे मुडी देखदी
बडड़ा डरौणा नी माए बुरिग्राँ दे देस
निकीआँ निकीग्राँ भुगीग्राँ काउग्राँ दीग्राँ ठुगीग्राँ
नी माए वडडा डरउणा नी माए सहुरिआँ दा देस

सजन साडे चले गए रावी दे पार

निकी निकी कूमली नी बागे बागे भूलदी
भुलीग्राँ बिचारीए नी दक्खणे दी हवा

अगे अगे चलदी जी पिछे मुडी देखदी
खरा जी मुह्रामणा बाबा जी दा देस ए

निकीआँ निकीआँ चुगीआँ नी कामाँ दीआँ ठुगीआँ
बुरा नी डरामणा सहुरिआ दा देस ए

तद नही टुटदी जी पूणी नही मुकदी
सस्स नही आखदी पाणीए जो जाणी ए

नंद वी टुट गई पूणी वी मुक गई
ससू बी आखिया जी पाणीए जो जाणा ए

घड़ा नहीं डुब्बदा दी लज्ज नही टुटदी
बुरा डरामणा सहुरिआँ दा देस ए

डुब डुब घडोलूआ जी सिरे दिआ वैरीआ
सजण साडे चले गए जी रावी दे पार

इक दिल बोलदा जी नदीआँ की डुब्बी मराँ
दूआ दिल बोलदा जी बालड़ी बरेस ए

कौन सानूँ रोमदा जी कौण सानूँ भूरदा
कौण सानूँ टोलदा जी नदीआँ दे फेर ए

इक बख खाई लिआ जलीए दिआ जलादीआँ
दूआ बख रही गिआ जी सपड़े दे हेठ ए

ओ कदी घरे आउणा

घालूआ मजूरा ओ डेरा तेरा दूरा ओ
कदी घरे आउणा तूँ कदी घरे आउणा

दिआलीआरे बबरू ताँ लोहड़ीआरे खिचड़ी ओ
कोहाँ तिज्जो विसरी ओ कदी घरे आउणा

पाणीए ते लकडाँ ने सारा दिन घुलदा
तूँ रोज रहे रुलदा ओ कदी घरे आउणा

काग उडाए गोरी बिंदीआ लगाए गोरी
गुमसुम कलीए ने कितना कु रहिणा ओ

बीरा औह गिआ

पीपला दे हेठ मेरी अम्मा खड़ी हो
झड़ झड पैदे पीपल पात

जाओ तूँ जाओ अम्मा घर आपणे
बीरना गुमानी जो भेज

आओ तूँ आओ बीरा बैठ तूँ पटडे
किहडे आदर देऊँ

दुधे दुहाणीने बीरा पैर धुआऊँ
दतूए पटडा देऊँ

लड्डू सकोतीए बीरा भोजन देऊँ
झारीए देऊँ ठंडा नीर

चंदा ताँ देखी देखी थाली घड़ाऊँ
तारिआँ गिणदे कटोरे
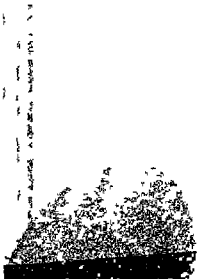
झींजण ताँ छाँटी छाँटी भात रनहाऊँ
मिठे मिठे बक्करे दा मास

खाइआ ता खाइआ वीर बड्डे गराहें
आवेगी सासू कणिआरी

सासू ताँ मेरी वीरा अगनी दा पूला
नणद लसकदी बिज्ज

घोड़ा दुड़ाँदा वीरा औह् गिआ औह् गिआ
चापका जो गिआ बरलाई

चापका जो तेरी वीरा घुँगरू लगाऊँ
रखाँगी जीवड़े दे नाल

मेरे मने दिआ ओ बैरीआ

गीताँ गाई घराँ जो चलिआ
अगे ससू ने देई लीए भित वो
मेरे मने दिआ ओ बैरीआ

आटा मैं गुन्ह् आई वड़ीआँ मैं भुन आई
करी आई घरे दा कम्म वो
मेरे मने दिआ ओ बैरीआ

छे फेरीआँ खूए दीआँ लईआँ
सतवीआँ जाए रही खूहे दे विच वो
मेरे मने दिआ ओ बैरीआ

तद नहीं मुक्कदी की जिद नहीओ छुट्टदी
सस्स नहीं बोलदी की पाणीए नूँ जाणा ए

तद भी मुक्की गई की जिद भी घुट्टी गई
सभ्भू भी बोलिआ की पाणीए जो जाणा ए

रुढ़ रुढ़ वनूआ की डुब्ब डुब्ब घडोलूआ
मैं वी ताँ डुब्बी मराँ नदीआँ दे फेर ओ

अमाँ मेरी रोमदी की बापू मेरा झूरदा
भाई मेरा तोपदा नदीआँ दे फेर ओ

ऊँचे ऊँचे बँगले की ऊचीआँ ऊचीआँ बैठकाँ
खरा दिहा लगदा की बापू जी दा देस ओ

नीठे नीठे बँगले की नीठीआँ नीठीआँ बैठकाँ
बुरा दिहा लगदा सहुरिआँ दा देस ओ

काली काली पीलीए बदलीए

काली काली पीलीए बदली
वरसीं मेरे बापू दे देस

अनाराँ दे हेठ रंगी सुकदी चुनाडिआँ
उड़ी जा याँ कालीआ कागा
जाई बोलयाँ मेरे पिछके
सौण महीना धी उडीकदी

केही जेही तेरी माई
केहे जेहे तेरे बापू

केहे जेडे तेरे बीरे
भैणाँ नूँ मिलण नही आँवदे

गंगा सरसवती मेरी माई
तीरथ जे मेरे बापू जी
चंदा ताँ सूरज मेरे बीरे
भैणाँ नूँ मिलण जरूर आणगे

रंगीआँ नी अम्मा
सूहीआँ चुनडीआ
अलसी मजीठ नी
भैण नूं मिलण असी जावणा

पारीए ले जादे नी माए दो जने
नी सस्से मेंगीए
इक ताँ नाईआँ दूआ बीरा
सावन आइआ रे

जाँदिआँ नौकराँ नूं होड़ी नी

नौकर ताँ चले ससू नौकरीआँ जो
जाँदिआँ नौकराँ नू होडिआ नी
साडे ताँ होड़े नहीं रहिंदे नूँएँ
नौकर जांदे बाँह मरोड़

तिजो ताँ दाम पिआरे ससू
साँजो पिआरी नौकराँ दी जान
मीणे मत लांदी बोन्नीआँ मत लांदी नी नूँएँ
चली जा नौकराँ दे नाल

जम्मू दिआ नौकरा

चमक मत्थे दीए बिंदीए तिजो लाई बैठी गोरी
गोरी झूरदी ओ गोरी
कांता जम्मू विच जाई रहिआ ए
ते सांजे डाढी सस्सू बस पाई गिआ
घरे आजा जम्मू दिआ नौकरा
गोरी गलीए रुले

छणक पैरे दिए झाजरे तिजो पाई बैठी गोरी
गोरी झूरदी ओ गोरी
कांता राजे बस्स जाई पिआ
कि सांजो डाढी नणदा बस्स पाई गिआ
घरे आजा जम्मू दिआ नौकरा
गोरी गलीए रुले

मिझो पेईआं दे घर जाणा

सहुरे मेरे पलंग पल बैठे
मिझो पेईआं दे घर जाणा

सहुरा बोले मेरीए कुल बहूए
जाई पुच्छ अपणी सासू पास

सासू बोली मेरीए कुल बहूए
अपनी जठानीआ जाई के पुच्छ

पटड़े बैठी मेरी जठानीए
मै पेईए दे घर जाणा

दरशण ए मरीए भण
अपने दश्रारे जाई के पुच्छ

गिंद्गूश्रा खेलदे मेरे देवरा
मैं पेईए दे घर जाणा

भाबीए मेरीए कुल भाबीए
अपनी नणदाँ जाई के पुच्छ

गुड्डीश्राँ खेलदी मेरी नणदे
मै पेईए दे घर जाणा

भावीए मेरीए कुल्ल भाबीए
जाई के अपने बिश्राउए नूं पुच्छ

लिश्राइश्रा गुश्रालूश्रा नरमे दी छट्टी
इसरा खोऊँ जाणा जाणा

गुड्डीआँ खेलदीए

गुड्डीश्राँ खेलदीए कुडीए
मेरे चोलए लगीश्राँ लीराँ
बत्ता चलेदीश्रा भट्टा भटेडूश्रा
तिज्जो किआ पई मेरी

अज ताँ है मै भटाँ भटेडू
कल भटेऊ सही श्रोगा
जे तूं आरीगा कल भटेऊ
ताँ अम्मा बापू गोदी खेलाँगी

जे तू खेलागी अम्मा बापूए दीआ गोदा
ताँ मैं ढोल जवाई बणी उगा
गुडीआँ खेलदीए कुडीए
मेरे चोलूए लग्गिआँ लीराँ

मापिआँ ने नहींओ तोरनी

कानू आगिआ सुनहिरी पग्ग बन्ह के
कि मापिआँ ने नहींओ तोरनी
चुप्प करके गड्डी बिच बहि जा
कि मापिआँ दी सेखी कोई ना
कानू उग गिआ सुनहिरी पग्ग बन्ह के

तेरे ताँई मै झाँजराँ लिआइआ
कि चले गोरी सग मेरे नी
तेरी झाँजराँ पैर नी पाँदी
कि तेरे सग नही जाणा जी
कानू आ गिआ सुनहिरी पग्ग बन्ह के

तेरे ताई मैं कपड़े लई आइआ
कि चलो गोरी सँग मेरे नी
तेरे कपडे ताँ अंग मैं नही लाँदी
कि तेरे सग नही जाणा जी
कानू आ गिआ सुनहिरी पग्ग बन्ह के

तेरे ताई मै गहिणे लई आइआ
कि चलो गोरी संगी मेरे नी
तेरे गहिणिआँ नूँ गले मै नी पाँदी
कि तेरे सग नही जाणा जी
कानू आ गिआ सुनहिरी पग्ग बन्ह के

उडी जा ओ कालिआ कागा

उडी जा ओ कालिआ कागा
भाईए जो सुनेहा देणा हो
चोंच मढ़ाऊँ तेरी सिउने कन्ने
पख मढाऊँ रूपे
भाइए जो सुनेहा देणा हो

चिट्ठीआँ पाऊँ गल तेरे हो कागा
भाइए जो सनेहा देणा हो
थोड़ो थोड़ो बुरी मिझो अम्मा दी लगदी
भाईए दी याद सतॉंदी हो कागा
भाईए जो सनेहा देणा हो

कीती मिल मेरी माउँ सुतीए

कौण रॅगावे चूड़ला
साडे कौण ताँ कस्स देवे बन्द नी
एणाँ राहाँ दे बड़े बड़े पध नी
कीती मिल मेरी माउँ सुतीए
कीती मिल मेरी माउँ भलीए
मावाँ मिलिआँ ते पई जाँदी ठड नी
वीराँ मिलिआँ ते चढ़ी जाँदे चंद नी
कीती मिल मेरी माउँ भलीए

बाबल रँगावे चूड़ला
साडी माउँ ताँ कस देवे बद नी
एणाँ राहाँ दे बड़े बड़े पध नी
एणाँ नदीआँ दे बड़े बडे छंब नी
कीती मिल मेरी माउँ भलीए
मावाँ मिलिआँ ते पई जाँदी ठड नी

बीरा मिलिआँ ते चढी जाँदे चद नी
कीती मिल मेरी माउँ सुतीए

कौण रँगावे चोलणी
साडे कौण तॉ कस्स देवे वद नी
एणॉ राहॉ दे बड़े बडे पंध नी
कीती मिल मेरी माउँ सुत्तीए
कीती मिल मेरी माऊँ भलीए
मावाँ मिलिआँ ते पईं जॉदी ठंड नी
बीरॉ मिलिआँ ते चढ़ी जॉदे चद नी
कीती मिल मेरी माउँ सुतीए

बाबल रँगावे चोलडी
साडी माँ ताँ कस्स देवे बंद नी
एना राहॉ दे बड़े बड़े पॅध नी
कीती मिल मेरी माउँ सुत्तीए
कीती मिल मेरी माउँ भलीए
मावाँ मिलिआँ ते पई जांदी ठंड नी
बीराँ मिलिआँ ते चढी जाँदे चंद नी
कीती मिल मेरी माउँ सुत्तीए

बाबल रॅगाबे चूडला
साडी माउँ ताँ कस्स देवे बंद नी
एणाँ राहॉ दे बड़े बडे पध नी
एणाँ नदीआँ दे बडे बड़े छब नी
कीती मिल मेरी माउँ भलीए
मावाँ मिलिआँ ते पई जाँदी ठंड नी
बीराँ मिलिआँ ते चढी जाँदे चंद नी
कीती मिल मेरी माउँ सुतीए

सान आवइआ रे

नाई दे हत्थ विच घुँगरू
नी माए मेरीए
वीरे दे हत्थ विच बाजा
सावन आइआ रे

किथे ताँ रक्खण माए घुँगरू
नी माए मेरीए
किथे ताँ रक्खाँ ए बाजा
सावन आइआ रे

किलीआँ माँ टँग घुँगरू
नी माए मेरीए
महिलाँ विच रखा ए बाजा
सावन आइआ रे

किस दे भिज्जे सूहे सोस
नी माए मेरीए
किस दा भिजदा रुमाल
सावन आइआ रे

भावो दे भिज्जे सूहे सोस
नी माए मेरीए
वीरे दा भिजदा रुमाल
सावन आइआ रे

महिलाँ ताँ पावाँ सूहे सोस
नी माए मेरीए

बागीं उडावा ए रुमाल
सावन आइआ रे

छोरूए जो कैद करांगा ओ

कीनी तोडे तेरे बेंगडोरे सीस
कीनी तेरी बाँह मरोड़ी ओ
ओ कीनी लए पंजा सौआँ दे नोट
कीनी जेब तोड़ी ओ
उधरों औगा राम सिंघ दे बार
छोरूए जो कैद करांगा

बारीं बरसीं मैं घर आइआ

बारीं बरसीं मैं घर आइआ कि आई उतरिआ बागी
पीपल पीघाँ सी पाईआँ कि झूटण दो जणीआँ
छोटी नणदा देवर दराणी जठाणीआँ
लिआओ ढाल तरवार कि बीर असी बढ देणा

बीर न मारिओ आपणा कि भज जाँदी बाहीं तेरी
मारिओ घर की नार कि होर बथेरीआँ
नार न मारीओ आपणी कि खिड जाँदी जोड़ी मेरी
जिस ते उगेमी लाल कि लालाँ दीआँ जोड़ीआँ

नामाँ लुआई दे रतनिआँ दा

भला मीआँ अलबेलूआ ओ
नामाँ लुआई दे रतनिआँ दा
ओ नामाँ लुआई दे रतनिआँ दा

जे तूं चली दा पारली नगरी
सानूं बी लिआई दे सोनी दई घगरी

घगरी पाईके जाणा भलिआ
नामा लुआई दे रतनिश्रॉं दा
भला मीश्रा श्रलबेलूआ ओ
नामाँ लुआई दे रतनिआँ दा

जे तूँ चली दा ऐनी ऐनी
सानूँ बी लिश्राई दे सुरमेदानी
सुरमाँ पाई के जाणा भलिश्रा
नाम लुश्राई दे रतनिश्रॉं दा
भला मीश्रा श्रलबेलूश्रा
नामाँ लुश्राई दे रतनिआँ दा

जे तूँ चली दा पारलै कलैसर
सानूँ बी लिआई दे सोनी दिह्नी बेसर
बेसरा पाई के जाणा भलिश्रा
नामाँ लुश्राई दे रतनिश्राँ दा
भला मींश्रा अलबेलूआ श्रो
नामाँ लुश्राई दे रतनिआँ दा

जे तूँ चलिश्रा पारले रकडे
सानूँ बी लिश्राई दे सोने दहे कपड़े
कपडिश्राँ पाई के जाणा भलिश्रा
नामाँ लुआई दे रतनिआँ दा
भला मीआ अलबेलूश्रा श्रो
नामाँ लुश्राई दे रतनिश्राँ दा

जे तूँ चलिश्रा पारले ऐंडले
सानूँ बी लिश्राई दे सोने दहे सैंडले
ओ सैंडलाँ पाई के जाणा भलिश्रा

नामाँ लुआई दे रतनिआँ दा
भला मीआ अलबेलूआ ओ
नामाँ लुआई दे रतनिआँ दा

घोड़ी ताँ भेजो साडे काँत वे

जमों दिआ राजिआ वे नौकरा वे लोभीआ
तुध पिआरी नौकरी कि आसाँ पिआरा काँत वे
बाल वरेसा साजो छोड़ी चला गिआ
घोड़ी ताँ भेजो साडे काँत वे

लोहड़ीआ दिआलीआ तेरा रसता नुहार दी
घरे नही आउंदे मेरे काँत वे
साउण महीने दीआँ झड़िआँ जे लगीआँ
मीहाँ ताँ वरसे मेरे नैण वे

सासू ताँ सावरे झिडकाँ जे रोजी
नणदा दे रोजी गल म्हीणे पए
घरे ताँ भेजो काँता ओ राजा
बदीआँ दी चली नही ताँ जान वे

दिनो दिन जोत सवाई ओ

खूए खड़ोतीए गोरीए
गोरीए कित्त होइआ दलगीर ओ
याँ तेरी सस्स लडाकड़ी
गोरीए याँ तेरे मापे ने दूर ओ

नाँ मेरी सस्स लड़ाकड़ी बीबा
नाँ मेरे मापे ने दूर ओ

आप वड्डी वर छोटडा बीबा
मापिआँ ने लड़ लाई ओ

सोने करॉ तुगी पीलडी गोरीए
मोतीए जड़त जड़ाई ओ
छोड कंते दी दोसती गोरीए
चली पै सिपाहिए दे नाल ओ

अग्ग लगे तेरे सोनडे बीबा
मोती नदीए हड़ाई ओ
अज्ज निकड़ा कल्ह बडड़ा बीबा
दिनो दिन जोत सवाई ओ

जी बसंती चीरे वालिआ

महिआँ दे थल्ले थल्ले जाँदिआ
जी वसंता चीरे वालिआ
महिलाँ दे अंदर आणा जी सपाहीआ

महिलाँ दे अंदर नही आउँदे
नी कलालीए नैणाँ मारीए
साडा औण नही साडे घोड़े जाँदे

घोडियाँ तेरिआँ बदलू भेजगी
तुसाँ महिलाँ दे अंदर आउणा
जी वसंती चीरे वालिआ

महिलाँ दे अंदर मैं नही आउँदा
कलालीए नैणाँ मारीए नी
घरे ताँ साडे सवाई नार नी

नारीआँ तेरीआँ जो पईआं अंबरे दी बिजली
तेरे खाओ फनीअर नाग बो सपाहीआ
जी बसंती चीरे वालिआ

अबर दी बिजली साडी भैण नी
फनीअर नाग साडा भाई नी
कलालीए नैणाँ मारीए

चीरे वालिआ सपाहीआ

संझाँ जे पइआ न्हेरा जो होइआ मुसाफ़र मंगदे डेरा
भला चीरे वालिआ सपाहीआ तैं मन मोह लिआ मेरा

डेरा डफेरा असाँ नहीं देदे राजे दा मुलख वथेरा
भला चीरे वालिआ सपाहीआ तैं मन जोह लिआ मेरा

राजे दे डेरे दीपक बलदा सपाहीआँ दे डेरे न्हेरा
भला चीरे वाले सपाहीआ तैं मन मोह लिआ मेरा

राजा दे डेरे बकरे बलौदे सपाहीआँ दे डेरे बटेरा
भला चीरे वालिआ सपाहीआ तैं मन मोह लिआ मेरा

राजे दे डेरे नौबत वजदी सपाहीआँ दे डेरे दोतारा
भला चीरे वालिआ सपाहीआ तैं मन मोह लिआ मेरा

चली पौणा वो कासी रामा

चली पौणा वों कासी रामा
बागाँ दीआँ ठंडीआँ छामाँ
इकी ताँ साके साली जो लगदी
दूए जो लगदी लाड़ी

चली पौणा वो कासी रामा
बागाँ दीआँ ठंडीआँ छामाँ
इक ताँ साके जो भावीं लगदी
दूए जो लगदी लाड़ी

कांगड़े दा नौकरा

कांगड़े दे नौकरा जो छुटीआँ जे होइआँ
घराँ वल सुरत दुड़ाई
घरे जे आई माता जे पुछदा
कित्थे गई सस्सू दी जाई
भाई पराहुणा लैणा जे आइआ
पेकिआँ दे दित्ती पुजाई

कांगड़े दे नौकरा जो छुटीआँ जे होइआँ
घोड़ा जे छजिआँ काठी जो कस्सी
सहुरिआँ दे सुरत दुड़ाई
आँगणा 'च खड़ी कहिणा जे लगी
पिठे पर बैठ मेरा भाई
भाई ताँ हुदे अम्मा दे जाए
मैं तेरे बाप दा जुआई

कागड़े दे नौकरा जो छुटीआँ जो होइआँ
गुत्ताँ ते पकड़ी घोड़े पर सट्टी
रोंदीआँ दी कीती ना सुणाई
घोड़ा दुड़ाइआ चाबक मारी
घराँ पर उतरिआ आई
कांगड़े दे नौकरा छुटिआँ जो होइआँ
घराँ वल सुरत दुड़ाई

फुटकर

काहे दे कारण

काहे दे कारण हस्सो वे गोरीए
काहे दे कारण तूं रोई बो-हाँ
तुसॉ मिले तॉ मै हम्सी मेरे महाराजा
सिर बदीआँ आइआॅ तॉ मै रोई वो-हाँ

जे तॉ रोंदीआँ गोरीए दुखे दी मारी
मापिआॅ दे मैं दिगा पुचाई वो हाँ
जे तॉ रोंदीआॅ गोरीए भुखे दी मारी
बढी करी करॉ टुकड़े चार बो-हाँ

कालीआॅ दे राजा धौले होए
कद सिलाणा गोरी वालक वो-हॉ
हट्टीआॅ बिकदे रानी महिगे मुल्ल लेंदे
नही करमॉ की दिआँ लैणे वो-हाँ

लंबड़ा नी लंबड़ा बहुत ही बुरा

ओ मेले जाणे नी दिदा
ओ टिकलू लाणे नी दिदा
ओ बिंदलू लाणे नी दिंदा
लवड़ा नी लंवड़ा वहुत ही बुरा

अक्खाँ ताँ मेरीआँ अबोए दीआँ पक्कीआँ
कि कजला पाणे नी दिदा
किम सुरा लाणे नी दिदा
लबडा नी लंबड़ा बहुत ही बुरा

उँगलीआँ मेरीआँ जे कमोए दीआँ फलीआँ
कि छल्ला पाणे नी दिदा
कि बुँदीआँ पाणे नी दिदा
लंबडाँ नी लबडा बहुत ही बुरा

ीआँ ते रिड़िआँ बँगला पुआँदी

उच्चिआँ ताँ रिडिआँ बँगला पुआँदी लंमीआँ रखाँदी ओ काँती
लमीआँ रखाँदी काँती लोभीआ लमीआँ रखाँदी ओ काँती
बँगले दा बूहा खुल्ला जो रखाँदी आई जाइआँ मेरे साथी
आई जाइआँ मेरे साथी लोभीआ आई जाइआ मेरे साथी

उच्चिआँ ताँ रिड़िआँ खूआ ओ
दुआँदी लमीआँ सटाँदी ओ लज्जनी
लमीआँ सटाँदी ओ लज्ज नी लोभीआ लमीआँ सटाँदी लज्ज नी
आँउँदे ताँ जाँदे डोली डोली भरदे मूरख जाँदे घर आए
मूरख जाँदे घर आए लोभीआ मूरख जाँदे घर भाए

इको ताँ थालीआँ दुद्ध भत्त खाइआँ ओ दुद्ध भत्त खाइआ
हुणे किजो पुच्छदा जाती ओ लोभीआ हुण किजो पुच्छदा जाती
पजा ताँ पीराँ सुक्खणा जो मुखीआँ नैणा देवी जो छेली
नैणा देवी जाँ छेली लोभीआ नैणा देवी जो छेली

इताँ ताँ बरेसा इक मत्त जमदा
ओ दो मत्त जंमदे हीर फिरे अलबेली

हीर फिरे अलबेली लोभीआ हीर फिरे अलबेली
घर दीआ नारीं जो छड्डी छड्डी जाँदा
गुजरीआँ कने मन लाइआ
गुजरीआँ कने मन लाइआ लोभीआ गुजरीआँ कने मन लाइआ

घर दीआँ महिलाँ जो छड्ड छड्ड जाँदा
टप्परीआँ 'च मन लाइआ
टप्परीआँ 'च मन लाइआ लोभीआ टप्परीआँ 'च मन लाइआ
बँगले दा बूहा मैं खुल्हा जो रखाँदी आई जाइआ मेरे साथी
आई जाइआँ मेरे साथी लोभीआ आई जाइआँ मेरे साथी

बाथरी दा बणजारा

बाथरी दा बणजारा
सिर पर बँगडी दा भारा
छोकरी जो दसदा बुखारा
आगे आगे सावण दुंदासा
पिछे बँगडी दा साका
गहिरे गहिरे सडक वणाइआ
गाँओआ मेरे सैला जो जाणा
गाँओ आइआ गाँओ जगलाती
सदिआ दिने ते आउँदा राती
राजी रहीओ होली दिओ लोको
गाँओं दा नित्ता सुख सात
डरो मत बाथरी दे लोको
गाँओं मेरा बाँधका जो आइआ
बाथरी दा वणजारा

झुल वे बरोटूआ

झुल वे बरोटूआ
तेरे मैंनूँ झुलणे दा चाओ
सज्जणा दा लाइआ
पाणी बिना कमलाइआ
झुल वे बरोटूआ
आपे लाइआँ आपे बुझाइआँ
आप हूआ बेईमान

झुल वे बरोटूआ
कोरे कोरे कागज
लिख लिख भेजदी
वाचणे वाला प्रदेस
झुल वे बरोटूआ
लई जा मेरा संदेस
झुल वे बरोटूआ

पल भर बही लैणा बो

पल भर वही लैणा बो बही लेणा ओ चदा
इस वे वरोटे दीआँ छावाँ पल भर वही लैणा बो

नूरपुर हमीरपुर ठडीआँ छावाँ
विच बो बलोचाँ दा ठाणा पल भर वहीं लैणा

चिटूटे चिटूटे चौल दुध ते मलाई
इही असाँ लोकाँ दा खाणा पल भर बही लैणा

भरीआ बदूकड़ मोठ भर धरीआँ ओ
मारी लैंणी तीतरा दी जोड़ी पल भर बही लैंणा

दुख सुख कही लैणा

बही लैणा ओ मित्रा
बही लैंणा पल भर बही लैणा
पल भर बही लैंणा
दुख सुख कही लैणा
पल भर बही के दो गल्लाँ करी लैणीआँ
कदी हस्सी लैणा कदी अक्खाँ भरी लैणीआँ

मन दा दुख सुख कही लैंणा
पल भर बही लैंणा
छल्लीआँ दी रोटी ताँ छाई दा कटोरा
सरहोआँ दा भुजू आलूआँ दा निओड़ा
चिटिआँ चौलाँ दा भत्त खाई लैणा
पल भर बही लैणा

नाले नाले जांदा छोरू बाँसरी बजांदा

जानी दिले जो तरसाँदा ओ भलिआ अलबेलूआ
टिक टिक दीआँ तेरीआँ जघाँ जली गईआँ
जंघलू दी गाल मत देंदी भलीए अलबेलीए
छोटी छोटी जंघाँ बनबाई आइआ गगा

गंगा दी निशानी बिआ आंदी भलिआ अलबेलूआ
घड़ी घड़ी छणकाँदा भलिआ अलबेलूआ
बीआ पर बहिंदा छोरू टिक टिक लाँदा
दबू रिड़ रिड लाँदा लगी है घराटा दी वोडी

मेरे कदूआ हो

मेरे कदूआ हो तेरी लबी-लबी बेल
मेरे कदूआ हो तेरी बेल गई पछाड़े

मेरे कदूआ हो तेरे पिवले पिवले फूल
मेरे कदूआ हो तूँ हो गिआ तिआर

मेरे कदूआ हो तैनूँ लै चलूँ बाजार
मेरे कदूआ हो तेरे टक्के हो गए चार

ओ राज अँग्रेज़ दा

ओ कागड़े दिआ फौजीआ ओ
छुट्टीआँ जे होइआँ घर आ सूरत दइआँ
ओ राज अंग्रेजाँ दा

घरे जे आउँदा ते माता कोलो पुछदा
पिता कोले पुछदा नार मेरी नजर न आई
ओ राज अग्रेज़ाँ दा

माता जी वी कहिंदे पिताजी वी कहिंदे
नार जे तेरी पेकिआँ जो गई
ओ राज अग्रेज़ा दा

सहुरिआँ दे जाके सस्स कोलो पुछदा
सहुरे कोलों पुछिआ
ओ नार मेरी छलनी कि नही
ओ राज अग्रेजा दा

दिन मरना जरूर

डुघली नदी रंग खोधला पाणी
हेरि हेरि कायाँ डरी जादा है

तूं किजो डरी मेरी भोल्लिआ कायाँ
इक दिन मरना जरूर

खगी खड़ाको हाखरी माँ पाणी
आई बुढापे दी निशानी हो

जोबन थीए ताँ जतन थीए
लागू थीए सभ कोई हो

जोबन मुक्को जतन मुक्के
बात न पुछदा कोई हो

हरी भरोसे तेरे बो जोबनूआँ
ना कीता धरमाँ दा भाई हो

रकत थीए ताँ बकत थीए
लागू थीए सभ कोई हो

रकत सुक्के ताँ बकत रहे
बात ना पुछदा कोई हो

थोड़े बो दिनाँ दिआ जोबनूआँ
फिर बो आइआ चार दिहाड़े हो

कालडे ते केस धौलड़े होए
केसे मेरे रंग बदलाइआ हो

बे ठंडे पाणीए जो जाणा

कोरे घडे पर दाणा
बे ठढे पाणीए जो जाणा
बे ठढे पाणीए जो जाणा

कोरे घड़े पर ऐवाँ
बे ठढे पाणीए दा बेवाँ
बे ठडे पाणीए जो जाणा

कोरे घडे पर चिमटा
बे ठढे पाणीए दी चिता
बे ठंढे पाणीए जो जाणा

कोरे घडे पर तैंथा
बे ठंढे पाणीए दी सैंसा
बे ठंढे पाणीए जो जाणा

कोरे घड़े पर कड़छी
बे ठढे पाणीए जो तरसी
बे ठंढे पाणीए जो जाणा

कोरे घड़े पर कथना
बे ठढे पाणीए दा मिलना
बे ठंढे पाणीए जो जाणा

डोडणी दी छाई

मंजी डाहणी ओ
डोडणी दी छाई ओ डलकू
मठी मारी ओ
डोडणी दी छाई ओ डलकू

कगणा दी जोड़ी ओ
तिजो लिआणी ओ छोरीए
घडा भरने ही ओ
बौड़ीआ पर जाईं छोरीए

देवर-भाभी

उठ मेरे देरनूआँ

उठ मेरे देरनूआँ
चिड़ीए चिण चिण लाई
कि उठ मेरे देरनूआँ

भावी मेरीए नी
भिआगा उठे तेरा काँता
मिजो मत बोलदी

उठ मेरे देरनूआँ
मज्झीआँ चोणे बेला होई
उठ मेरे देरनूआँ

भाबी मेरीए नी
मज्झीआँ चोवे तेरा काँता
मिजो मत वोलदी

उठ मेरे देरनूआँ
पाणीए भरने जो जाणा
उठ मेरे देरनूआँ

भावी मेरीए नी
पाणी भरे तेरा काला
मिजो मत बोलदी

उठ मेरे देरनूआँ
खाई लै नुहारी तूँ छेला
उठ मेरे देरनूआँ

भावी मेरीए नी
देहीए ने देई दे नुहारी
कि भुक्ख मिजो लग्गी ए बडी

भाबी कुकू कीआँ बोलदा

वाई पर मेंजर तेरा
भाबी कुकू कीआँ बोलदा
कीआँ बोलदा बो कुकू कीआँ बोलदा

भरिआ घड़ोलू गोरी बीणी पर धरिआ
बाल न लाँदा पापी कोई
भाबी कुकू कीआँ बोलदा

भरीआँ बन्दूकाँ गोरी कंधे पर धरीआँ
मारी लैणी तित्तराँ दी जोड़ी
भाबी कुकू कीआँ बोलदा

बड्डा रे कुकू मेरे मन बसिआ
छोटे कने प्रीत कुनी ललाणी
भाबी कुकू कीआँ बोलदा

दिओर भाबी

तेरे लक्क 'च सज्जदा घग्गरा भावी
असाँ दिउर भरजाइआँ दा झगडा भाबी
फुल्ल लई लै कि फुल्ले दा मुल्ल मैं देवाँगा
तेरे हत्थ 'च गूठी दिओरा
तूँ करदा गल्लाँ झूठी दिओरा
फुल्ल नही लैणा कि फुल्ले दा मुल्ल नहीओ पुग्गणा

छोटा जिहा दिउरनूँ

छोटा जिहा दिउरनूँ भावी तो रुस्सिआ
रुसी के नौकरीआ चलिआ गइआ
कोरे कोरे कागजाँ मैं लिखी लिखी भेजदी
सरवते दीआँ बोतलाँ मेरे वल भेजदा
थोडा थोडा पीणाँ भावो पहाडाँ दीआँ ठंडाँ
इक ताँ तूँ ए भाबो नार बेगानी
दूजे, चढी भावो नई जुआनी

दिओरा वो लोभीआ

कूजाँ जाई रहीआँ नादौन
अगे ठडे वाँके नैण
इक घुट लाई लै वो दिओरा
दिओरा वो मेरिआ लोभीआ

कूँजाँ जाई रहीआँ कलेसर
भाबो तोले दी मँगदी बेसर
तुरत वड़ाई दे वो दिओरा
दिओरा वो मेरिआ लोभीआ

कर्जां जाई रहिआ हुण पत्तण
मेरा दिल नही लग्गदा कत्तण
चरखा भन्न सिटीआ दिओरा
दिओरा वो मेरिआ लोभीआ

कूँजाँ जाई रहीआँ सुकेत
इक कुछड़ दूआ पेट
तीआ खेले वालू रेत
दिओरा वो लोभीआ

कूँजाँ जाई रहीआँ हुण मंडीआँ
चिट्टे चौल न रिझदे हंडीआँ
दुध भत खाई लै वो दिओरा
दिओरा वो लोभीआ

कूँजाँ जाई रहीआँ जिउट
चिट्टे दंद गुलाबी होंठ
बीडीआँ लाई ला वो दिओरा
दिओरा वो लोभीआ

चिड़िआँ ने चुर पुर लाई उठ देरुनूआँ

उठ देरुनूआँ चिडिआँ ने चुर पुर लाई उठ देरुनूआँ
भाबो भावरीए अगे उठ कंत तेरा पिछे छोटा देरुनूआँ

उठ देरुनूआँ मज्झीआँ ताँ दुहणा जाणा उठ देरुनूआँ
भाबो भावरे अगे चल्ले कंत तेरा पिछे मैं देरुनूआँ

उठ देरुनूआँ दहीआँ बरोलण जाणा उठ देरुनूआँ
भाबो भावरे अगे चल्ले कंत तेरा पिछे छोटा देरुनूआँ

रआ बाँकिआ दिउरा

कूँजाँ जाई पईआँ बरोट
चिट्टे दद गुलाबी होठ
गल्लाँ करदे पंजाबी लोक
इक गल्ल सुणी जाइआँ दिउरा
कि मेरिआ बाँकिआ दिउरा ओ

बारी लानी आँ मैं तुलसी
चिट्ठी कागद लिखदा मुणशी
तुरत बुलाई लैणा दिउरा
कि मेरिआ लोभीआ दिउरा
कि मेरिआ बाँकिआ दिउरा ओ

कूँजाँ जाए पईआँ गगरेट
सजी डाहृणी पिपले हेठ
पल भर बिही लैणा दिउरा
कि मेरिआ लोभीआ दिउरा
कि मेरिआ बाँकिआ दिउरा ओ

कूँजाँ जाए पईआँ पप्परोले
भितरे बाझ मेरा दिल डोले
खड्डाँ पार दो तित्तरू बोले
इक गल्ल करी जाइआ दिउरा
कि मेरिआ बाँकिआ दिउरा ओ

बागे लानीआँ शहतूत
मैं गुजरेटी तूँ रजपूत
जोड़ी बणी गई दिउरा

कि मेरिश्रा लोभीश्रा दिउरा
कि मेरिश्रा बाकिश्रा दिउरा श्रो

तेरी सौ

मेरे कुरते जो टोली मत लाँदा हो
मैं ताँ पालिश्रा कटोरा तेरी सौ

मेरे ददे सोने दी पतरी हो
मेरा माणू मुने दा खत्री हो
बाबू रिडकिश्रा चबे दे घाटे हो
असाँ होरिश्रा तमाशा तेरी सौ

बुढा चुकी कर्गी बुजकूए पाया हो
बँने पार लँघाइआ तेरी सौ
हत्थ छतरी मुढे पर झोला हो
चंद चलिश्रा तरीका तेरी सौ

भत्त खाई ले ओ दिउरा

भत्त खाई ले ओ दिउरा भत्त खाई लै
रुस्सी तस्सी बैठा ना तूँ गल्लाँ करदा
बैठी के हुण ठंडीश्राँ श्राहाँ काहनूँ भरदा
मने जो चिता मत लाई ले
भाबीआँ दे हत्थे दा भत्त खाई ले

चिट्टिश्राँ चौला दा भत्त मैं बणाइश्रा
दाली बिचघिउए दा तुड़का लगाइश्रा
खट्टा खट्टा माकड़ी दा माह्णी बणाइश्रा
देर ना ला हत्थाँ धोई भत्त खाई ले
भाबीश्राँ दे हत्थे दा भत्त खाई ले

ारहीं बरसी खट्ट के आइआ नी भाबीए

बारहीं बरसी खट्ट के आइआ नी
भाबीए डिओढी मँगदा मै डेरा

डिओढ़ी डेरा किवे दिआँ जी दिउरा
भाई घर नही तेरा

टुट्टण मँजालू बाण पुराणा जी दिउरा
जाई सोइआ पिछाडी

लहौरीं जावाँगा पैसे कमावाँगा
नी भाबीए तिजो हार बणावाँगा

पेइए जावाँगी भैण लई आवाँगी
तेरा विआह् वे करावाँगी

पहि्न पतासे सरबत घोलिआ
सालूए दे लड़ पुणिआ

सालू मेरा कने हत्थ दिखिआ
लादा सालू राजे दितू दा

ेरीए बेलड़ीए

बेली नी रस भरीए नी बेली
डालिआ छोड़ भईआँ रेली
नी मेरीए बेलडीए

भणा ता भणा मतर कोता
चल नी भण पेइआ जाईए
उह मेरीए बेलड़ीए

किआ देणा जिस भाबो दे हथीं
किआ देणा भाईए पगा जो
उह मेरीए बेलडीए

कुँगूए कटोरी भाबो दे हथी
हरी हरी दुरुभ भाईए पग्गा जे
नी मेरीए बेलडीए

किआ देणा जिना धीआँ धीआणी
किआ देणा उह जवाईए जे
उह मेरी बेलड़ीए

बाई दा चूड़ा धीआँ धीआई
पेगा दा घोडा मेरे जवाईए जो
उह मेरी बेलड़ीए

धर्म, त्योहार, पूजा और भक्ति

पांडूआँ दा गीत

पर्जा जर्णा ओ पडू पै राजे जिदा दरोगा जो जाणा
पीठी पीछे हेरो राजा धरम मात कुती सी छुटी

रुश्रा वो चदन बडो दुहाई माता दाग दिनी
काना कानूँ कोरे नाने माता सुरु नाजो दिती
पीठी पिछे तेरे राजा धरम पचणी राणी छुटी

छुटी जिना ओ आपणी पापे जिदा दरोगा जो जाणा
पीठी पिछे हेरो राजा भीम्रॉ बीर छुटी

हरी चन्द जी साडे आए

छोटीश्रॉ बूदीआँ मीह् जो वरसे
वडरी बूँदी फुहार
हरी चद जी साडे आए
प्रथी पाल जी म्हारे आए

ठडा पाणी मै गरम कराउँदी
आज प्रभू जी तुसी नहाओ
बासमती छडदी ताँ भत्त रिन्हाँदी
हरीआँ माहाँ दी दाल बणाँदी

चुण चुण कलाश्रा मैं आसण वर्णादी
श्राओ प्रभू जी तुसी बैठ जाश्रो
हरी चद जी साडे आए
प्रथी पाल जी महारे श्राए

शिव पारवती

शिवा मेरे महा देवो महा देवो कुण कुण बाजा तेरे
राणी गोरजे गोरजे ससार बाजा तेरा

राणी गरजे गोरजे राहे खड़ी नाड बजाए
राणी गोरजे गोरजे बाल पुणे लारा लाए बिकडा जाए

शिवा मेरे महा देवा जो नाचे मुकुट खिलाए
राणी गोरी गोरी गगा राणी मुकुट छुपाए

तेरी रामा कने पेश नी जाणी

सीता जो नूँ पुजाई कॅनिश्रा मेरे रावर में
कन्त रानो सपना होइआ मेरिश्रा दस रावर मे
मेरी नक्के दी वेसर ठली जाए कॅतिआ मेरे रावर मे
तुमें बुजराम सौका होरम रानी मदोदरीए
मेघनाथ जैसे पुत्र हमारे राणी मंदोदरीए
कुम्भ करण जैसे भाई श्रो राणी मदोदरीए
तेरी रामा कने पेश नी जाणी सुणा दस रावर में

जमना किनारे इक नट्टड़ा नी माँ

जमना किनारे इक नट्टड़ा नी माँ
पाणी भरन ना देंदा
छोटे छोटे डोरू मेरे मगर लगाँदा
नी माए लिहाज रखदा नी कक्ख नी

कली कलोट अक्खी मिरगाँ वाली
नी माए लिहाज करदा नी कक्ख नी
जमना किनारे इक नट्टड़ा नी माँ
पाणी भरन ना देदा

सुखरात कुड़ीओ चिड़ीओ

सुखरात कुड़ीओ चिड़ीओ
सुखरात राजे दे विहड़े
सुखरात कुडीओ चिड़ीओ
सुखरात नैणा पाणीहारा
सुखरात कुड़ीओ चिडीओ
सुखरात लक्ष्मी नराइण

ठंढा पाणी किहाँ करी पीणा हो
तेरे नैणा हेरी हेरी जीणा हो
सुखरात कुडीओ चिडीओ
सुखरात राजे दे वेहड़े
सुखरात कुडीओ चिडीओ
सुखरात नैणा पाणीहारा हो

होली

ओ रँगीला छैल खेलो होरी
ओ महाराजा रँगीला छैल खेलो होरी

आपणे रे आपणे रे अैने मंदर में निकली
इक साउली दूजी गोरी
आज रंग मे बृज मे सभ रंग मे
ओ रँगीला छैल खेलो होरी

उधरों सेउधरों से आए शाम वन्नीआ
उधरों ते आई राधा गोरी
ओ महाराजा उधराँ ते आई राधा गोरी
ओ रँगीला छैल खेलो होरी

भरी पचकारी मारी ए मोरे सनमुख डारी
अँगीआ तो भिज जादी सारी
आज रंग में बृज मे सभ रग मे
ओ रँगीला छैल खेलो होरी

उचीआँ रा पिपलाँ ए भारी पीघा ज पईआँ
झूटण आवे राधा गोरी
महाराजा जी झूटण आए राधा गोरी
ओ रँगीला छैल खेलो होरी

आज रग में बृज में सभ रग में
ओ रँगीला छैल खेलो होरी

जागण दी बेला साडी हो रही

उठ मेरी रुकमन राणी उठी के कुडला तूं खोल
जागण दी बेला साडी हो रही
अजी रामजी मेरे रात बड़ी बड़ी हो

जागण दी बेला साडी ना होई
उठ मेरी रुकमन राणी उठी के कुडला तूं खोल
दातण दी बेला साडी हो रही
अजी गोविंदजी पिआरे रात बड़ी घडीआँ चार
दातण दी बेला थोआडी ना होई

अजी मेरी सोदाँ माई रुकमनी तेरो लाडलो
मगी थी दातण मागूँ ना मिली
अजी मेरी सोदाँ माई कई ताँ पेइए पूजा
कैई ता नूँ नदीआँ रुढा
अजी मेरी सोदाँ माई

मगी थी दातण सानूँ ना मिली
कृष्ण जी पिआरे रुकमन घरे दा शिगार
पेईए ताँ मैं न भेजाँ
उठ मेरी रुकमन राणी उठी के करी ले शिगार
गड्डा ताँ आइआ तेरे बाप दा मेरे राम

अजी मेरी सोदाँ माइए रूठिआँ दा किआ मनाणाँ
अजी मेरी सोदाँ माइए रूठिआँ दा किआ शिगार
गड्डा ताँ आइआ साडे बाबे दा
गड्ड आइआँ सानूँ बहिलीआँ
सुण गोविद जी मेरे ना मेरे वीरे दा विआह

ना मेरे बाप घर शादीआँ मेरे राम
अजी मेरे गोबिद पिआरे मनई उतारी ठंडे बाग
मिलणे नूँ आइआँ सठ सहेलीआँ मेरे राम
अजी मेरी सोदाँ माईआ बाहर रिमझिम मेघला
अंदर मुनीअर बुझाण जी

अजी मेरी सोदाँ रुकमनी बना सुन्ना महिल जी
अजी मेरी सोदाँ माइआ कीता बहिलीआँ भेज
रुकमनी लेणी ए बुलाई

सोने दा क होआ

सोने दा कन्हीआ तेनूँ दिल दी सुणावाँ मै
प्रेम दा पुआड़ा दिन रात गम खावाँ मै
अज्ज पता लग्गा शिआमा इतना कठोर वे
इतना कठोर शिआमा मक्खणे दा चोर वे
तेरी मूरती मोहण मै बार-बार देखदी
बने बने बैठे के पई ओ कागाँ उड़ार दी

गुगा भरतरी

चढ़दे रण भैणे गुगा राणा मल जम्मिआँ
सिर दे तिहाड़े भैण गुगडी
पजाँ घड़ीआँ पंज पांडव जम्मे
चौथे घड़ीआँ चौठ जोगनीआँ
कुंजू कुजू वरदेसरी, बग्दार

कछरा मछरा कोकरा नैन भरा
नीला भोरताजी राही लाइआ जट
श्री कंठ परोत
माँ-जेई नगारची बौणी बटवाल
कैलू कटपाल मुरगणू बीर

पोपाँ जटी बीरधाँ वराहमणी
आछला काछला परीथी पोल
दिआँ धीआँ लाल सिंघ बजीरा
गुरू गोरखनाथ
अरजन-सुरजन

मुरली ते रौणक लाई जी

उच्चे टापू महाराज नकाए
जिनी मुरली ने रौणक लाई जी
वण केरे पंछी डिगी पैदे
माणस कौण बचारे जी

ऐसी सुदर ए मुरली वजाँदा
हेरणे एड़ा की छैल जी
चलो चलो रडी भैसाड़िश्रो
दुध नही वेचणे जाणा जी

मुरली वजाणे वाला इह बालक
श्रसी जाई जाई तकाणा जी
काणी देही गुजरी बोलदी भैणों
मैं हाखी जो सुरमा लांणा जी
होरनाँ गुजरीए विद विद लाइश्रा
काणी दे मुट्ठ भरी लाइश्रा जी

घर शाम दे आए

मिलण सुदामा हारनी घर शाम दे श्राए
पैर नगे तन लीर ना होई
नाल गरीबी दे हालत होई
मिलण गए कृष्ण मुरारी जी
घर शाम दे श्राए

मिलण सुदामा हार नी घर शाम दे आए
रल मिल सहीश्राँ खूब नुहाए
उच्चे श्रासन पर बिठलाए

नगेरी नों के न्याथ जे
उहना चरन दबाए

मिलण सुदामा हारनी घर शाम दे आए
सिआम ने पुछिआ दसो शताबी
खाण नूँ की भेजिआ मेरी भाबी
मुखे सुदामा बोलदे
कद्दाँ चौल लुकाए

मिलण सुदाम हारनी घर शाम दे आए
उहनाँ चौलाँ दा सिआमे भोग लुआइआ
गिआन सुदामा नूँ परख के आइआ
दसदे महिल रँगीले लगी नजर नी आए
मिलणा सुदामा घर शाम दे आए

मेरे पीआ ने रँगाई सो रँग दे लाला

मेरे दोनों बसंती रँग दे लाला
मेरे पीआ ने रँगाई सो रँग दे लाला
भरी पचकारी भारी मोरे सनमुख तारी
अंगीआ ते भिज्ज जाँदी सारी ए लाला
छू लाला मेरे पीआ ने रँगाई

सो लाला मेरे पीआ ने रँगाई सो रँग दे लाला
हसनी चुनीरीआ रे मेरे पीआ की बदरीआ रे
मेरे दोनों बसंती रँग दे लाला
मेरे पीआ ने रँगाई सो ए लाला
मेरे पीआ ने रँगाई सो रँग दे लाला

सिद्धा तेरीआं माड़लीआं

सिद्धा तेरीआँ माडलीआँ
कि यातरू दूरे ते आए
सिद्धा तेरीआँ माड़लीआँ
कि सखाँ दी पई गुजार
सिद्धा तेरीआँ माडलीआँ
धूएँ दी लगी धुणखार

तिन्न रुत्तां

चार महीने हुमिओ के आए
पखूआ झोलो रे साजनवाँ
चार महीने बरसात के आए
ओ रिमझिम भीगे रे साजनवाँ
चार महीने सरदी के आए
ओ थर-थर काँपे रे साजनवाँ

होलीआँ दे मेले

होलीआँ दे मेले जो हवा झुलदी
फुली सरसों ओह मोइआ फुली सरसों

होलीआँ दे मेले जो फुली सरसो
उह मोए होलीआँ दे मेले जाणा परसों

हत्थ गहिणे उह मोइआ हत्थ गहिणे
होलीआँ दे मेले जो दो ही जणे

पईआँ बरखा उह मोइआ पईआँ बरखा
होलीआँ दे मेले जो पईआँ बरखा

हवा झुलदी उह मोइआ हवा झुलदी
होलीआँ दे मेले हवा झुलदी

जन्म-गीत

बाड़ीआं हुणे फुल पक्के

धन्न धन्न माईए देवकीए
तूं पुतर कान्हड़ू जाइआ
तेरीआं चोरीआं काहन मेरीआ
काह्ना जी बूहड़ लाइआ
तूं रोइआ नां काह्ना मेरिआ

हुण मैं पाणीआ जाणा
काह्ना जी रोइआ नां
तूं खेल काह्ना मेरिआ
बाड़ीआ घोगर रहिंदे
काह्ना जी रोइआ नां

बाडीआं हुण फल्ल पक्के
काह्ना जी मैं ले आवांगी
गरीआं छवारे कन्ने बदामां दी
भोजन काह्ना जी मैं दिंगी
काह्ना जी रोइआ नां

गीगा पुछींदा दाई आपणी नूं

गीगा पुछीदा दाई आपणी नूं
कोई दाइए मेरा बाबा ना

हत्थाँ कलाई फिरदा सिपाही
ओही गीगिआ तेरा बाबा ना

गीगा पुछदा दाई आपणी नूं
कोई दाइए मेरा दादा ना
पैरी जो जोड़ा चढ़ने जो घोड़ा
ओही गीगिआ तेरा दादा ना

गीगा पुछींदा दाई आपणी नूं
कोई दाइए मेरी दादी ना
हत्था मधानी बैठी राणी
ओ गीगिआ तेरी दादी ना

गीगा पुछींदा दाई आपणी नूं
कोई दाइए मेरा नानो ना
पैरॉ ना जुत्ती चढ़ने जो कुत्ती
ओ गीगा तेरा नानो ना

गीगा पुछींदा दाई आपणी नूं
कोई दाइए मेरी नानी ना
सिराँ पर खारी बुढ्ढी बिचारी
ओ गीगिआ तेरी नानी ना

हे बालक लोरी ले

जित दिन गीगे जन्म लिआ
मीह ओ पाणी घणी धुप्प
तेरे पिओके ओ बधाइआँ
हे बालक लोरी ले

तरे नानकव होई हुब्ब
तर बाब द सिर दुब्ब
तेरे नाने दे सिर दुब्ब
हे बालक लोरी ले

काले महीने दीआँ न्हेरीआँ राताँ

काले महीने दीआँ न्हेरी राती
जनमिआ किशन मुरारी
मेरे शाम जी

जाँ जम्मिआ जाँ दीपक बलिआ
चो चके हो रहीआ लोई
मेरे शाम जी

सहिजा धोता पाट पलेटिआ
कुछड मिलिआ चाइआ
मेरे शाम जी

घोल पतासा मै गुलसत देसा
सोने दी कटोरी
मेरे शाम जी

रुठड़ी तुरफड़ी तूँ इस घर आई

तूँ मै बिआई राणीए तूँ मैं बिआई
रुठडी तुरफडी तूँ इस घर आई

इनाँ बिआइआँ राणीआँ दीआँ पेठा
बालक जम्मिआँ सत्त माईआँ दा जेठा

इनाँ विश्राईश्राँ राणीआँ दीश्राँ चौल
बाले दीश्रा मामिश्राँ लैई गए रौल

इसा बिश्राइआँ राणीश्राँ दा-जो-दिश्राँ दुरुभ
बालक जम्मिश्रा घर होइश्रा सुध

इसा विश्राईआँ राणीआँ जो दिश्राँ टिका
बालक जम्मिआ सताँ भाइआँ दा लडिक्का

मँडला किसे घर बाजिआ

श्रजी सिंबल दा फुल गहिरा गनेर गहिरा गनेर
छड़दे देवी न देंवते
मँडला किसे घर बाजिश्रा

श्रजी राजे दी नगरी वसे
सारा लोक बसे सारा लोक
मँडला किसे घर वाजिआ

अजी बाडले भाईए घर
जरमिश्रा पूत जरमिआ पूत
मँडला उसे घर बाजिश्रा

श्रजी रीसी रीसी कत्ताँ निका सूत
कत्ताँ निका सूत कत्ताँ निका सूत
रीसी पूत न जम्मदे

सुंढ सरीकाँ नूँ दिओ जी

अँगण बैठडा भाईश्रा काला काग
लवी भरीआँ उडारी जी

जाइ बोलीआ मरीआ अम्मडीआ
धीआं हौलर जाइआ जी

अम्मा भेजडे सानूं घीसे घड़े
सूढ सरीकाँ नूँ देओ जी
घिओ खाई लिआ धीआ लाडलीए
सुढ सरीकाँ नुं दीओ जी

सस्सू भेजे सानूँ बिगडे चौल
उपर सुढी दी गट्ठी जी
चौल खाई लोआ वहू लाडडीए
सुढ कसी मत्थे लाईआ जी

दिनीआँ लोरी

दिनीआँ लोरी मुनूआ सोई जाणा ओ
आँगणे ताँ साडे निबुए दा बूटा
उथू ताँ रखी देआ जूता ताँ सोठा
हौले हौले पैरीं तूँ आई जायाँ ओ

आँगणे ताँ सुतिआ मुनूए दा बापू
उथू ते बची कने आई जायाँ ओ
दिनी आँ मैं लोरी सोई जायाँ ओ
हौले हौले पैरी तूँ आई जायाँ ओ

आज मोरे बजीआँ बधाईआँ

बजीआँ बधाईआँ गुरू के नगारे
ऐसी नसीब वाली आई
की आज मोरे बजीआँ बधाईआँ

काइसदी मै गुलचट दीमाँ
काइसदी ए कटोरी
की आज मोरे बजीआँ वधाईआँ

भन्न वे पतासा मै गुलचट दीमाँ
सोने वाली ए कटोरी
की आज मोरे बजीआँ वधाईआँ

काइसदा मैं झगू सिआँदीआँ
काइसदा सिआमाँ टोपू
की आज मोरे बजीआँ वधाईआँ

मखमल दा मै झगू सिआँदीआँ
रेशमी दीमाँ टोपू
कि आज मोरे वजीआँ वधाईआँ

ढोलरू

बजिआ ढोलरू

पहिलाँ ताँ नाम लेणा राम दा
जिन्हे सारी दुनीआँ बसाई ए
दूजा ते नाम लैणा माई बाप दा
जिन्ने वसिआ संसार ए
चढ़िआ नाँ चेतरा बिसाख
मै शराधिआ धरम जी होए
बज्जिआ ढोलरू
आइआ सरीआँ चिने
बज्जिआ ढोलरू असाँ नही आउणा ए

इह दिन बरीआँ दे औगे
गौरजाँ राणी ताँ चलीए पाणीए
हत्थ ताँ लिआ घड़ालू गौरजा
पटरी पर बैठिआ राजा रामचंदर
सीता हरी वडरी बहार
तुलसीआ दी डाली गौरजा ना लैणा
तुलसी बाह्मण पिआरी ए
मरुए दे फुले जी ना लैणा
मरूआ जाती दा खदरेटा ए

सभ जाँ हरी जी रामा फिर हरी आँ
मानश फिरिआ नही आउँदा

हिओदड़ा गिआ जी घर आपणे
आई चला सोए दी बहार
आरन फुली जी गौरजा ना लैणा
आरन जाती जी आरन जी दा लैणा
मेखूले मूए दा नूँ ना लिआओ
इह घर फुल फुले राधा
पहिलाँ नाँ नाँ लैणा राम दा

राजा भरथरी

काए दी वणी काइआ कोठड़ी
काए दा बणिआ जजाल
समझी चलो राजा भरथरी

झूठी वणी काइआ कोठड़ी
झूठा वणाइआ ससार
समझी चलो राजा भरथरी
बारा बरसाँ दा राजा जो होइआ
सत कीती विआह
पहिली विआही राणी पिगली
दूजी कुलवती नार
समझो चलो राजा भरथरी

राणी जी कहिंदी सुणो राजा
मेरी इहो दिही बात
कदी ना राजा उह रण चढिआ
कदी ना खेलिआ शिकार
डाई लगी राजे पतर
होणा महिलाँ ते बाहर
पंज लिआओ मेरे कपड़े

छटा लिआओ हथिआर
सतमी लाइओ मेर जी लीलो
जो हाणा महिलाँ तो पार
समझी चलो राजा भरथरी

जाँदा जाँदा राजा जाई रिहा
बाँकी वाहर घिरदी फिरदी जो आई
सुण राजा मेरी इहो जही वात
हीरे हिरने मत मारदा
जिहदो सौ सठ नार
मारी लिआ पंज सत मिरगाणीआँ
तेरा हुणे शिकार

पहिलाँ तीर राजे मारिआ
हिरने लीआ खुजाँ
दूजा तीर राजे मारिआ
हिरने लीआ बचा
तीजा तीर मारिआ
हिरने गिआ कलेजे पार
घिरदी फिरदी हिरनी आई
सुण राजा मेरी इहो जही बात
जैसी रंडी हिरनी फिरे
वैसी फिरे तेरी नार

तड़प तडफेदा हिरन केही गिआ
सुण राजा मेरी इहो जही बात
सिगा दिआँ किसे नादीए
जो संजरा नवाइआ
नैण बंडीआँ किसे राणीए

जेहड़ी सोलाँ करेगी शगार
मासों दिआँ किसी होड़ीआ जो
जिहडा छिबी छिवी खाँगा
खलडे दिआँ किसी पडत जो
जिहडा हेठ बिछागा
समझी चलो राजा भरथरी
बारॉ चलो चवा मालती
महिलॉ हरी कुल नार
समझी चलो राजा भरथरी
राणी कहिंदी सुण गोली मेरी
इहो जिही वात
मथे दी बिंदी गिरी पई
सुरखी गई भुझा भार
नके दी वेसरी फुटी गई
मोती पए भुजा भार
पलगॉ दी पट्टी टुटी गई
राणी गई भुजा भार

गोली कहिदी सुण राणी
मेरी इहो जिही वात
नेकॉ हुदे राणी सुपने
नेकॉ हुदे जजाल
कल घर आउणा राजे भरथरी
काइदी बणी काइआ कोठड़ी

वारें

गुग्गे दी वार

ए दाने दी ए बेला गुगूआ
पुने दी ए बेला
संधिआ दी बेला आई
कुतां तां पूजे राणी मदरां तां पूजे
ठाकरां मन लीला लाई
भुखिआं जो भोजन लीलावती
नगिआं जो उडण रजाई
न्हौई तां धोई राणी केसां जो पलटे
ठाकरां मन लीता लाई
आरसी दीआं मनी ठीकरीआं करी रखां
सीसे जो दिआं ठुकराई
छम छम देई अम्मा बाछला रोवे
हंभूआं गोद भराई
कालिआं दे तां हुण धौले होए
रंग दिता बदलाई
कद्द होणी पुतरे दी वधाई
हट्टे नही मिलदे बजारे नही मिलदे
हुण लैणे फले 'च नकलाई
दछण किनारे गोरख नाथां दे डेरे
सेवा तूं करिआं उह जाई
दछण किनारे गोरख नाथां दे डेरे

मेवा राणी करि आ तू जाई
दछण किनारे राणी बासी-बासी पूजे
दुधे दिदी ए नुआई
बारां सालाँ दे गोरख नाथाँ नूं कम्म जिहड़े हुदे
राम राम करदे ने जाई
मैं तप्ठिआ माई तूँ कुझ मंगिआ
दिनां मै तिजो उह जाई
धन दौलत बाबा सभ कुझ है जी
पुत्तरे बाझी घर नही उह जाई
अमृत फल गुरु गोरख नाथाँ दिना
मेवा राणी कीती है जाई
खाँदी है अमृत फल राणी
पैदावार हुंदी उह आई
पजवाँ महीना छिट्टा महीना हुण
अठवें बारी चढी आई
मजला मजला राणी चलदी
मजला हुण रसता कीता जाई
दिले विच राणी सोच करदी ए
चलणाँ ए पिओकिआँ दे जाई
रसते विच गुगा मडलीक अडी करदा
मैं नानकिआँ दे नही जाणा
नानकिआँ दे घर जे मैं जांगा
गरभे, च मडलीक माला फडी
गडले जाँ माता दिती पाई
मजलाँ दे रसते जाई बरसाँ दे रसते
हुण दसाँ रोजाँ बिच महिलाँ आई
अगे महिलाँ, च रहिदे मडलीक पूजिआ
पैदावार हुण होई आई
इह वेले माई शुभ जिहड़े हुदे
मगल नारी गांदिआ आई

अन्न उह राणिआ धन्न मडलीका
अन्न अम्मा वाछला माई

(दूसरी कली)

सिर दे तिहाड़ुए गुगा छत्तरी जम्मिआँ
रैण पिआणे भैणाँ रोंगला
सिर दे धिआवे तेरा कैलू जम्मिआ
चड़दे तिहाड़े माइआ धारी
डल्हीआ ढलेला केला गाई
जम्मदिआँ छतरिआँ दीवे बलदे
परबत हुंदिआँ लोई
जम्मी जाए सतजुगे दे चारों भाई
खबराँ होइआँ सारूए दे देस
बजी रही पुत्तर बधाई
गुम्म नगारिआ चोट लगाई
नारी मजल लै गाई
हरी हरी दुरुभ पगाँ पर लगाई
देव राजा वेद्दी बुलांदा
पढ़िआ पडताँ राजे दी साइत गणाई
हथे सोटी मुढे पोथी
मजला मजला कुले दा परोहत आँदा
आँदा पंडत वेद विचारदा
पूरे लगन जनम लिआ भाई
लिख लईआँ पंजका चुकदीआँ भरदा
पंज कलाणीए जनम लिया भाई
खबरा होइआँ मासीआँ काछलाँ
हिकाँ विच्च दव दई रोई
रोंदी कलाँदी नागाँ दे जाँदी
बाई करोड़ नाग लए जगाई
मारूए देसे गुगा छतरी जम्मिआँ

नागाँ दोआँ वेदी वहिणा आई
जिस कमाणा मारूए दा राज
जौहड़ाँ दा हाल नहीं है कोई
हुकम दिते नागे बिस्साँ दे भडारीए
बिस्साँ दोआँ कोठडीआँ सुलाई
सौ मण जहिर मासी चीचूए चारे
भाणजूए जो चीचू देणा
मुने दे पघूडे भैण भाई खेलदे
लोरीआँ दिदी तुलसी दाई
दिआ भैणा आपणे वालके
मिजो बेदण होई
पलोलूए ते चुकदी गोदीआँ लैंदी जी
भैणाँ चीचू मुँह दिता पाई
दहिणें हत्थे चीचू मुंहे पाइआ
धरती दिता बहाई
सौ मण जहिर धरती बहाइआ
हड्डूआँ दी कुण कुण लाई
हटदी फिरदी काछला मासी फिरी
सुतिआ नाग लिआ जगाई
सौ मण जहिर नागा घुट घुट पीता
हंडीआँ दी कुण कुण लाई
हुकम कीते नागे कलीअर नागे जो
गाढड़ू जो उसी ओइआँ जाई
सौ मण जहिर जिनी लागा चारिआ
मारूए जो रखी धाई
वाराँ कोहाँ विच सुकाँ मारिआँ
पथर पटके मेरे भाई
हिलदा कवदा नाग मारूए जो आँदा
धर धर मारू कंबे सारा जाई

सूने पलगूड़ ए भाई भैण खेलद
हुलेरियाँ दिदी तुलसी दाई
नरेड़ ए नरेड़ ए लोह् ड़ छाइआ
मुडीए जो रखदा लुकाई
इन्हां गल्लां जो माई बाछल सुणदी
छम छम रोंदी मेरी माई
जागो मोए शहिरे देउ लोको
मारूए दा राजा नागाँ लिआ खाई
इहनाँ गल्लाँ गुगा छनरी सुणदा
खिड खिड दई हस्सदा मेरा भाई
देहणे हत्थे भैण रोंगला पलटी
बाबे सुडी मुँहे पाई
सौ मण जहिर घुट मैं पीता
मैं हड्डआँ दी कुड कुड़ लाई
छड़ी दीआँ जीजा छड़ी भणोइआ
सूलीआँ दिंगा मैं तिजो बिआही
कद दा मैं जीजा कद दा भणोइआ
कदी कीती मैं भागाँ दे कुड़माई
सौ मन जहिर घुट मैं पीता
मैं हडीआँ कुड कुड लाई
छडो छडो जीजा छडो दिआ भणोइआ
सुलीअर दिग्गा मैं तिजो विआही
कदी दा मै जीजा कदी दा भणोइआ
कदी कीती मैं नागाँ दे कुडमाई

राम सिंघा दीआँ बगावताँ

घर सिआमे दे राम घिस जम्मिआँ
जम्मिआ बड़ा अवतारी
जिस दा नाम रखिया मार जंग

जिन रक्खी राजपूताँ दी लाज
बेटा वजीर दा खूब लडिआ
लिख परवाना कम्पनी भेजदी
गोरियाँ नाल ना छेड
फरंगी है बुरी बला
तैं की रखेगी पिंजरे पा
बेटा वजीर दा खूब लडिआ

लिख परवाना राम सिंघ भेजदा
मैं लड़ना गोरिआँ नाल
अकेला पठाणीआँ खूब लड़िआ

दूर कलकत्ते दीआँ फौजाँ चढीआँ
बासे दा चढिया वजीर
मरिहूआली तें चढिआ साहब
जग्ग विच पई गई लड़ाई
अकेला पठाणीआँ खूब लड़िआ

न्हाई धोई राजा पूजा पर बहिदा
बाम्हणे चुगली लाई
पूजा पर दित्ता पकड़ाई
बेटा वजीर दा खूब लड़िआ

डल्ले दीआँ धाराँ डफले वजदे
पलटणी कड़के तबूर लोको
अकेला पठाणीआँ खूब लड़िआ

लिख परवाना कम्पनी भेजदी
गोरिआँ नाल ना छेड राजा

फरगी है बुरी बला
त का रखेगा पिजरे पा
तेरा घर-बार करेगा नीलाम
बेटा वजीर दा खूब लड़िआ

लिख परवाना राम सिघ भेजदा
मैं लडना फरगीए नाल
मेरा दाईआ अंग्रेजाँ दे नाल
मै जीणाँ दिहाडे चार
बेटा वजीर दा खूब लड़िश्रा

लिख परवाना मामिश्रां जो भेजदा
सदिश्रा दास कोतवाल
सदिआ श्रमर सिघ मिनहास
जिन्ने सूतरी लई तलवार
मै परखणी फौजाँ दे नाल
मेरी कैसी चलदी तलवार

खाए मरोड़ा फिर रामसिह चढिश्रा
हत्थ पकडी तलवार
जिहडी करदी है मारोमार
मैं परखनी है फौजाँ दे नाल
श्रकेला पठाणीश्राँ खूब लड़िश्रा

न्हाई धोई राजा पूजा घर बाँहदा
फिर वाम्हणे चुगली लाई
फिर चोरीश्रा दित्ता फड़ाई
घर सिश्रामे दे रामसिघ जम्मिआ
जम्मिश्रा बड़ा श्रवतारी राजा

जम्मदे ने पकडी तलवार राजा
दाईश्रा बप्पा अग्रेजॉ दे नाल राजा

लिखी परवानॉ भुली की भेजिआ
सदिआ दास कोतवाल राजा
सदिश्रा जगी पडवाल राजा
सदिश्रा तारा सिंघ साहबे राजा
सदिआ नहॅगी धनोटीश्रा राजा
धनोटीश्रा ने लिखिश्रा जवाव राजा
मदिश्रा श्रमर सिंघ मिनहास राजा
जिस दे घोडे दे गल हार राजा

श्रमर सिघ सूतरी लई तलवार राजा
चलो मिलीए अग्रेजे दे नाल राजा
रखणी धरम चादे दी आन राजा
पलटणा मारीआँ चार राजा
लहूआ दे बगदे नाल राजा

हुण डेरा कूच करिश्रा राजा
डेरा नागा वारी पाइश्रा राजा
उथे बाह्मण रसोई की लाइआ राजा
कस्स कपड़ा ढाका पर जुआन राजा
वजीर नूं हुण कुताओ जा राजा

मेतो थोड़ा दिआ लै जाश्रो इनाम राजा
लको सूतरी लई तलवार राजा
उस श्रन्ही लई ढाका ते जुश्रान राजा
उथे सिपाहीआँ की हुकम कराइश्रा राजा
डेरा शाहपुरे दे अदर लाइआ राजा

ओथ सिपाहीआं की हुकम कराइआ राजा
लुट्टी लो शाहपुरे दा शहिर राजा
डल्ले दीआँ धारा डफले वजदे
कुम्हानी खड़के तंबूर राजा
तेरी खबर गई हजूर राजा

मलमल साहब चढ़ी आइआ राजा
आउँदिआँ हल्ला कराइआ राजा
मलमल साहब दे हत्थे की तीर लाइआ
हत्थे दा कीता नाश राजा

मलमल दा भाई चंडी साहब चढ़िआ
उस आउँदिआँ ने फट चलाइओ राजा
फट ढाला पर बचाइआ राजा

फट साहब दे सिर पर बहिआ राजा
ओहदा देह दिहली चुकाइआ राजा
देई करी ढाला दा अड़िका
हारे दे नाल अड़काइआ राजा

फरंगी है बड़ा बादशाह राजा
लिखी परवाना पुछिआ राजा
अंग्रेज है बडा बादशाह राजा
घर-बार करांदा नीलाम राजा
जींदिआँ नहीं देंदा जाण राजा
अमर सिंघ आखदा
मैं जीणा दिहाड़े चार राजा

जरनैल करनैल चढ़ी आइआ राजा
आउँदियाँ ढिंडोरा पिटाइआ राजा
राम सिंघ दिओ पकड़ाए राजा
दो हज़ार रुपिआ इनाम राजा
जो रामसिंघ दए पकड़ाए राजा

तेरे बामणे दग़ा कमाइआ राजा
पूजा बैठदा पकड़ाइआ राजा
बिच सुखपाले दे पाइआ राजा
नूरपुर शहिर की आइआ राजा
बाले दे तल पर बिठाइआ वज़ीर राजा

इक दौड़दा हरकारा चला आइआ राजा
सिआमिआ भेरा चुहर अड़ाही बिच पाइआ राजा
बादशाह कन्ने तू ज़ोरा लाइआ
अंग्रेज है बड़ा बादशाह राजा
जिहड़ा रखदा पिंजरे पा राजा
करम लिखिआ सो मैं पाइआ राजा
मेरे मिसराई ने दग़ा कमाइआ राजा

भाई गोपाल सिंघ मिलणे की आइआ राजा
सक्के भाई ने दग़ा कमाइआ राजा
भाईचारा दिंदा मदत राजा
जीदा लैंदा कौण मेरा नाँ राजा
मरदा दे बोल रहिंदे मरदाँ नाल राजा

लड्द माइग्रों द पुत्तर राजा
राम सिघा पठाणीग्राँ जोर लडिग्रा[1]

गीत रामसिंह पठानीओं

घर सिआमे रे रामसिंह जम्मिग्राँ
जम्मिग्राँ बडा ग्रवतारी राजा
जिन्नी जमदिग्राँ पकड़ी तलवार राजा
कोई ऐसा पठानीग्राँ जोर लडिग्रा

पहिली लडाई बिच बासे दे मारीए
हुण भलिआ बोडा दा ताल राजा
माता इन्दौरी ठाकाँ पाए
बच्चा गोरिआँ कन्ने ना छेद राजा
गोरे हदे ने बुरी बला राजा
तिकी रखणगे पिंजरे पा राजा
घर-बार करणगे निलाम राजा

ग्रम्मा बतरी धाराँ तूँ बखशी दे
मेकी लडना दे गोरिग्राँ कन्ने राजा
लिखी परवाना राजे की भेजिआ
खरच पाणी सभ राजे ने मन्निग्रा

---

१. राम सिंघ की बगावतों की यह 'वार' जे० एफ० मिच्चिल असिस्टेंट कमिश्नर कुल्लू ने लोगो से सुनी और इसे लिखित रूप प्रदान किया। सी० एच० डानलड के कथनानुसार इस 'वार' को पहले कभी लिखित रूप नही दिया गया था। जैसा कि उसे नूरपुर के एक बूढ़े अत्रदाल ने बताया वह उस बूढे के पिता और दो चाचाओ ने मिलकर गाई थी। जिनके नाम जट्टू धमन और बिल्लू है। लिखित रूप में न होने के कारण ही यह वार कई रूपों में मिलती है। यह राम-सिंघ के गिरफ्तार होते ही लिखी गई प्रतीत होती है। अगले पृष्ठो मे इसके और रूप भी दिए गए है।

पिछे फिरी दित्ता जवाव राजा
कोई ऐसा पठानीआँ जोर लड़िआ

एक सवाली तेरी अतली पतली
दूसरी नागर बेल
गलाँदीआँ साड़ीआँ चूड़ीआँ बग नही पाइआँ
साकी मुत्तीआँ छड्डी नही जाइआँ

गलाँ दा मैं नही सवालीआँ दा भूखा
असाँ पकड़ लई तलवार राजा
हुण तलवाराँ दी बजे झणकार राजा
कोई ऐसा पठानीआँ जोर लड़िआ

बही के बस सलाह जे कीतीए
कुण कुण करना याद राजा
पहिले आपणा भाई चारा करना याद
फिरी बाराँ मगिआँ दा मन राजा
जिहदिआँ घोड़ीआँ दे गल हार
बहादरसिंह मामा जिहदे कगणाँ वद्धी बहार

असाँ रली मिली करनी लड़ाई
ताँ आपणा नूरपुर लेणा बचाई
साडा राजा करेगा राज बापू
सिआमा करे वज़ीरी
तेरा बड़ीआँ दा बिड़िआल
जिहदा हाल रिहा खेतरे विच
जिन्नी सुआरी लैइए भंडार
राजा कोई ऐसा पठानीआँ जोर लड़िआ

इक बारण साहब चढी आइआ
जिन्नी आई के इह फ़रमाइआ
इसकी शाहपुर देणा नाम
इसकी कागडा देणा नाम
जिहदे ऐमे लडदे जवान
जिन्हाँ रजपूतां दी रख लई लाज
असाँ नही नामा दे मूल भुक्खे
असी करनी ए लडाई
असाँ नूरपुर लैणा बचाई
राजा कोई ऐसा पठानीआँ ज़ोर लड़िआ

बची के पारने फिरी सलाह जिस कीती
लेआँ पूँपिआँ दा राजा बडिआ
लक्ख-लक्ख वंडे हुण तीर राजा
हुण बासेते चढे वजीर राजा
जिनाँ बबूकाँ भरी लए तीर
तुसी गिणी-गिणी मारने जवान
जिन्दा इक नही देणा जान राजा
राजा कोई पठानीआँ जोर लड़िआ

कोई ऐसा पठानीआँ जोर लड़िआ

उले दीआँ धाराँ डफले बजदे
सुमनी बजे तंबूर राजा
जिद्ही खबर गरीए हजूर राजा
कोई ऐसा पठानीआँ जोर लडिआ

लड़ने का रंभ रचाइआ
डेरा थीनीं दे किले की लाइआ
लिखी परवाना कागड़े की भेजिआ

इक परवाना नादौने की भेजिश्रा
होर परवाना गुलेर की भेजिश्रा
सबनाँ राजिश्राँ ताँ मंगी ए मदद राजा
सबनाँ ने दित्ता ए जवाब राजा
लडीश्राँ नूँ आपणे जोर मीश्राँ
कोई ऐसा पठानीश्राँ जोर लडिश्रा

जिन्नी सूतरी लईए मचार
जिन्नी पाइश्रा घमसान
बढी दिते नाँ दस जुश्रान
कोई ऐसा पठानीआँ जोर लडिआ

इक बारन साहब चडीह् श्राइआ
जिन्नी श्राइके यह फरमाइआ
इसकी शाहपुर दिश्रो इनाम
कने कागडा दिश्रो इनाम
जिदे ऐसे लड़दे जुआन
जिन्हाँ रजपूताँ दी रख लई श्राण

श्रसाँ नही इनामाँ दे भुक्खे
श्रसाँ करनी ए लडाई राजा
श्रसाँ लैणा नूरपुर छुड़ाई राजा
कोई ऐसा पठानीआँ जोर लड़िश्रा

फिर बेही कर सलाह जो कीती ए
लप्पाँ पड़ोपीआँ दारू जे वडीश्राँ
बुक-बुक वंडे ने तीर राजा
बासे दे चढ़े ने वज़ीर राजा

जिन्हा तपकाँ च पाई लए न तीर राजा
असी गिणी-गिणी मार ने जुआन राजा
जींदा इक नही देणा जाण राजा
कोई ऐसा पठानीआँ जोर लड़िआ

डेरा वासे थोरु 'च कराइआ
जाँई बिच नागाबाड़ी दे पाइआ
उथे वाम्हण रसोई की लाइआ
खाई लई रसो ताँ चकीआ लागाँ लाइआ
कोई ऐसा पठानीआँ जोर लडिआ

लूटी ममूने दी चौकी
फूकी दतार रुगिआल
डेरा बिच धरिआड़ी ते लाइआ
फ़ीना सिंधे दिता जुआब
सुचेत सिंघे दित्ता जुआब
मीआँ लड़ीआँ आपणे जोर
खरच बिच डले दे पाइआ राजा
कोई ऐसा पठानीआँ जोर लडिआ

समय के चरण-चिह्न

अद्धी-अद्धी रातीं आइआ थानेदारा

इक भाई टिकटर दीआँ धारा
दूजा भाई ठेकेदार ओ
घोड़े घोड़े पूछोए थानेदारा
जागा देवी कूँनी भारी ओ
अद्धी-अद्धी राती आइआ थानेदारा
मैं किहड़ा खून कीता ओ
नीली घोड़ी लुगीआ तेरा साफा
राणी बुज्झे राजा आइआ ओ

किन्ने मेरी बाँगलू दा शीशा तोड़िआ
किन्ने मेरा लौंग परिआ ओ
आपूँ चढो गिआ चबे दे चुगानाँ
छोहरो बदनाम होइआँ ओ
अद्धी-अद्धी रातीं आइआ थानेदारा
मैं किहड़ा खून कीता ओ
जपणे को राम चाहिए
मन चित्त लाँदिआ

नीली घोड़ी

नीली हुण घोड़ी नौ रंगीए
दो सभ सूम्बाँ दा रंग महिंदीआ

अज ता दसा सूम्बा दा
बारा सेरा दी काठी ए
तेरी नौ सेराँ दी लगाम
नी बद्धी पछवाड़े जी नीली घोड़ी अज ताँ

लिख-लिख जी चिट्ठीआँ भेजीआँ
जी चिठीआ मामिआँ तो
मजलाँ दे बेण जी लगीआँ लड़ाइआँ अज ताँ
सारी दित्ती जी हुण नीली घोड़ी अज ताँ
चेतर जी महीने नीलोआ दी घोड़ी गाणो वाला
नीली हुण घोड़ी नौ रगीए

बिगड़ी कांगड़े देश जाणा

बच्चिआँ जो दिदे छाई जे खटिआ
दुध जो बेचदे जाई के हट्टीआ
दुध जो बेचदे जाई के हट्टीआ
मिहनताँ हुण घट लोको
बिगड़ी कागड़े देश जाणा

बिगड़ी कागड़े देश जाणा
बापूए जो बोलदे कम्म कर मित्तरा
घरी ते कढ़ी दे मारी के छित्तरा
लाड़िआँ जो लई होदे बख लोको
बिगड़ी कांगड़े देश जाणा

आउदिआँ पितराँ जो डंग बडंगा
मोइआँ पितराँ जो लई जांदे गँगा
कलजुग होइआ परतक्श लोको

बढ्ढी दे बक्करा झट लोको
बिगडी कांगडे देश जाणा

इस देश दीआँ मूरख जनानीआँ
टके ते कंधीआँ ते प्रीत लगाँदीआँ
होर न रहो कोई गत्त लोको
कलजुग होइआ परवक्श लोकों
बिगडी कांगडे देश जाणा

मन चित लाँदिआँ

बाँके बाँके महिल चाहिए
देखणे को मोरीआँ
जपणे को राम चाहिए
मन चित लाँदिआँ

अम्मा चाहिए बापू चाहिए
भाईआँ दीआँ जोड़ीआँ
बाँके बाँके खेत चाहिए
बैलाँ दीआँ जोडीआँ

मन्नणा सिआणिआँ दा कहिणा लो

पधरीं मदाने बँगला पवाँदी
पधरी मदाने बँगला पवाँदी
कन्ने बगीचड़ी लानी ओ
कन्ने बगीचड़ी लानी ओ

धड़ीआँ दूधे वाली गऊ जे लेणी
धड़ीआँ दूधे वाली गऊ जे लेणी
छड़ छड फिरदी मधानी लो

छड छड फिरदी भवानी लो
छोटड़ झाटड़ बल लई आउण
डूहगडे डूहगडे हल चलाउणे
खेती आपणी चलाणी लो
खेती आपणी चलाणी लो

सँभाली ले आपणा तूँ गहिणा जे गठा
सँभाली ले आपणा तूँ गहिणा जे गठा
मैं मापिआँ चली जाणा लो
मैं मापिआँ चली जाणा लो

पुठीए ताँ अड़िआँ ना पा मोईए
रीमाँ पुठीआँ तूँ अड़ीआँ ना
मन्नणा मिआणिआ दा कहिणा लो
मन्नणा मिआणिआ दा कहिणा लो

सुकीआँ टुकड़ीआँ खाई करी मुनूआ
सुकीआँ टुकड़ीआँ खाई करी मुनूआ
रोज सकूले जो जांदा लोको
रोज सकूले जो जांदा लोको

सुन शामजी रेल आई

लाहौर शहिर दे पुल टूट गए
लाए दी सड़क बणाई
रेला दे विच रेलू जम्मिआ
कार लाट साहिब दी आई
पज रुपै साधू मंगदा
साधू मगदा रेलाँ दी दसाई

मुण शामजी रेल आई
पंज रुपे चूड़ा मंगदा
चूड़ा मंगदा रेलाँ दी सफाई
पंज रुपै दाई मंगदी
दाई मंगदी रेल दी बधाई
मुण शामजी रेल आई

चंबे जाई राणी होइआँ

अगे बी मैं जाती दी रठिआणी
चंबे जाई राणी होईआँ
अगे खाँदी बी इह्नाँ दा साग
चंबे जाई मास मंगदी हो
किने चोरे पंजा सैआँ दे नोट
किने मेरी जेब मरोडी ओ
जिन्नी चोरे पंजा सैआँ दे नोट
उनी तेरी जेब मरोडी ओ

लाज रखे लाटाँ वाली

इक मिन्ट बीतिआ दो मिन्ट बीते
करनल ने सीटी मारी
तिन्न मिन्ट बीते चार मिन्ट बीते
आजे चड़ी ओ सवारी

मोरचे ते चिट्ठीआँ जे आइआँ
लाम लग्गी बड़ी भारी
आजे चड़दे गूखणा जे करदे
लाज रखे लाटाँ वाली

पद्धरे दरवड़ा बिच्च बँगला पुआणा

पद्धरे दरवड़ा बिच्च बगला पुआणा
नाले बगीचड़ी लाणी ओ
शोभोला-शोभोला मंजा डाहूण
हवा ठंढी खाणी हो

खुल्ले टप्परू ना पाणे मुईए रेशमो
करना इहीआँ ही गुजारा हो
भीड़ीआँ संगणीआँ दिन जो कहणे
हवा न ठंडी खाणी हो

उच्चडे-उच्चड़े बैल लिआणे
ढूंघे ना सिद्धे हल चलाणे
छेल ते नवें बीज बाले हो
फसल ताँ आपणी बढाणी हो

पुठीआँ अड़ीआँ ना पा मुईए रेशमो
करना इहीआँ ही गुजारा हो
रुखीआँ सुखीआँ दिन जो कहणें
जान ना दुखाँ बिच्च पाणी हो

सुकियाँ टुकड़िआँ खाई करी मुनूँ
रोज सकूले जो जाँदा हो
धडीआ दुद्धे वाली गऊ जो लैणी
धड़ धड फिरनी मधाणी हो

साँभ तूँ आपणा गहिणा गठा
मैं पिओकिआँ दे चली जाणा हो

कमाह्गी ने खाह्गी मुँनू जो पढाह्गो
जान ना दुखाँ रे बिच्च पाणी हों

इहीआँ नराज ना हो मुईए रेशमो
जिहाँ चलहाँगी तिहाँ चलाँगा
घरे जो सँभालणा कम्म तेरा रेशमो
बाहरे दा कम्म मैं करहाँगा हो

लोकाँ दा चली पिआ राज लोको

बसी ताँ काँगड़े देश जाणा
लोकाँ दा चली पिआ राज लोको

रूपे दीआँ साफियाँ माणे पिता बन्नदा
शिवाँ ताँ गौराँ दीआँ नाचा दिखदा
हाराँ दीआँ जवालाँ जो दिले विच रखदा
कम्मे दीआँ कौतका चाएँ चाएँ दिखदा
गौराँ दीआँ चादराँ पुर नाज लोको
लोकाँ दा चली पिआ राज लोको

राती दिने खड़ा खड़ा रक्षा मारी करदा
रूपे दीआँ बरखा कने झोली मारी भरदा
गोदाँ विच चुको चकी मुखड़िआँ चुम्मदा
दिलाँ दीआँ लगीआँ धिआने कन्ने सुणदा
हरा भरा रखदा साज लोको
लोकाँ दा चली पिआ राज लोको

फलाँ कने मेविआँ जो रखी चखी खुआँदा जी
फुल्लाँ दीआँ खंदोलूआँ च ढकी ढकी मुआँदा जी
झर-झर झरने दीआँ गीताँ ताँ सुणदा जी

सर सर पवनाँ दीआँ साजा ताँ वजाँदा जी
पेड़ूआँ भरदा अनाज लोको
लोकाँ दा चली पिआ राज लोको

सोने दीआँ नदीआँ दाने विच दिंदा जी
जोगीआँ सिधाँ दे चरनाँ धोई धोई पीदा जी
बीराँ दीआँ फौजाँ दे भरोसे पुर जीदा जी
देसे दीआँ टुकड़िआँ परेमे कने सीदा जी
बणी रहिंदा देसे दा राज लोको
लोकाँ दा चली पिआ राज लोको

बस्सी ताँ काँगड़े देश जाणा

लोकाँ दा चली पिआ राज लोको
बस्सी ताँ काँगड़े देश जाणा

पहिले ताँ हुंदे थे तेले दे दीए
हुण चलिआ लिशकारा लोको
बस्सी ताँ काँगड़े देश जाणा

पहिले ताँ हुंदे थे घाए दे टप्परू
हुण चलिआ घनिआरा लोको
बस्सी ताँ काँगड़े देश जाणा

पहिले ताँ हुंदे थे घोड़े ते खच्चराँ
हुण चलीआँ मोटराँ लोको
बस्सी ताँ काँगड़े देश जाणा

पीआ करो पीआ करो

झिके ते मुनिआरे आए पहाड़ा दे विपारी
पिठी पादे बुचका तम्बाकू बेचन आए
ढोला छोडी देणी छोडी चिलम तम्बाकूए दी

जली वे जाइऊ इस तम्बाकूए दे पठा
इन्नी वो वकाइआ मेरा सोने दा कंठा
ढोला छोडी देणी छोडी चिलम तम्बाकूए दी

जली वो जाइउ इस पहाड़ूए दी हट्टी
इहनी वो खाधी मेरे सौहरे दी खट्टी
ढोला छोड़ी देणी छोडी चिलम तम्बाकूए दी

जली वो जाइउ इस कराड़ूए दा भुग्गा
इहनी वो वकाइआ मेरीआँ वालूए दा मुगा
ढोला छोडी देणी छोडी चिलम तम्बाकूए दी

सदो साड़िआँ चौठी कहाराँ पीड़े साडा ढोला
इथू खाँगी सारी रोटी पेईआ खाँगी थोड़ा
ढोला पीआ करो पीआ करो तम्बाकूए दी

सदो साड़े चरूएदाराँ पीड़ो साड़ा घोडा
झिके जाँगे बिआह् कराँगे
गोरीए रमी रही पिउकिआँ दे जाई

दहाड़ भीनी नरेल घड़ानी अरसीआ कटोरी
चंनण दा तम्बाकू सोने दी अँगारी
ढोला पीआ करो पीआ करो

सेविंग सरटीफ़ीकेट लैण लई

मेरा तेरा गोरीए घर साह्मणे ओ
फुलमू घर साह्मणे
रखे नैनाँ दी प्रीत गोरीए
ओ प्रीत जानी राजी रहिणा

मैं जो गलाया मिजो काँटे बणा
मिजो नथ घडा मीआँ मेघूआ
छोडी दे बदी दा खिआल ढोला
ओ खिआल जानो राजी रहिणा

काँटे बी तिजो बणावाँगा
गोरीए सस्ते दिन होणा
इतने चाँदीए दे ते पैसे बई
फौजा दे मुनुए दे पैसे आए

पैसे औदिआँ होइआँ तूं लोभी होइआ ओ
तूं लोभी जानी राजी रहिणा
अज्ज जे रुपईइ बचाइए गोरीए
बचाइए जानी राजी रहिणा

सेविंग सरटीफ़ीकेट लईए
बाराँ ताँ बरिहाँ हो जाँदे
डेवढे दसाँ दे पंदराँ
मुनूए पढाणे दे कमे औगे

ओ बिआहे लाणे पैसे
ओ जमीन लैनी मुईए फुलमू

चरना म तग्गिआ दी दासा
ढोला ओ मैं दासी जानी

लै रूपईआ सेविंग सरटीफिकेट
लैइआ सरटीफ़िकेट
छडी दे बदी दा खिआल ढोला
खिआल जानी राजी रहिणा

बदला जमाना बे

नवें छे पैसे दा पुराणा एक आना बे
किरपी बिचारीए बदला जमाना वे
लई लैणा रेडीओ देणे पैसे दूणे बे
नवें नवें गाणे घरे घरे सुणे बे

पिछले जमाने री न रही चेवे चाल बे
नागे सिरे चलणा हाथा दे रूमाल बे
नवें मांझो कपड़े लांदे नमी चली चाल वे
गल्लां करें चटपटी जेबा रखी खाली बे

कांगड़े दीआं मोड़ां तों मोड़ मोटरां

मोड़ मोटरा सनेरूआ मोड़ मोटरा
इन्हां कांगड़े दीआं मोड़ां तों मोड़ मोटरा

बेसर मंगदी सनेरूआ बेसर मंगदी
इन्हां कांगड़े दिआं नौकरां तों बेसर मंगदी

इह नहीं पुग्गदी सनेरूआ इह नहीं पुग्गदी
इन्हां कांगड़े दिआं नौकरां तों इह नहीं पुग्गदी

हार मगदी सनरूआ हार मगदी
इन्हां कागड़े दिश्रां नौकरां तो हार मगदी

इह नहीं पुग्गदा सनेरूश्रा इह नही पुग्गदा
इन्हां कांगड़े दिश्रां नौकरां तो इह नहीं पुग्गदा

मोड मोटरा सनेरूश्रा मोड़ मोटरा
इन्हां कागड़े दिश्रां मोडां तों मोड़ मोटरा

कपड़े सलाई दे

मै जो गलाईश्रा मिजो कपडे सलाई दे
हुण कीआ बिश्राहे जो जाणा इस रूहा हो

कपड़े तां श्रज्ज कल्ल सिलणे बी नाही
गठी मुठी करना गुजारा रतनीए हो

इसा तां फसला दे दाणे भला श्राउणे
कांटे दीश्रां बणवाईश्रां ईसरूश्रा श्रो

श्रसां तां खूने जो पैसे नी गवाणे
पैसिश्रां जो लेगे बचाई रतनीए श्रो

इहनां तां गल्लां तूं मिजो जो दसदा
श्रापी कीश्रा हुका पींदा

तिजो तां दिखी करो मुनूआ जे पीणा
श्रापू तां खगा कने मरदा ईसरूश्रा श्रो

तमाकू ता मैं पीणा छडी भला देणा
तूँ भी गलाया मन ले रतनी ओ

चरनाँ मैं तेरीआ दी दासी ईसरूआ ओ
जिहा गलाया तिहाँ मन्नी ओ

देखो तमाशा बारने दा

बारन साहब है डाहडी सरकार लोको
देखो सरकार लोको

टोपे टोपे दारू वडिआ
मणे वंडे हुन नीर लोको
देख तमाशा बारने दा

पहिली लड़ाई फतेह चद चढ़िआ
लहूआँ दे बगी जांदे हढ लोको
देखो तमाशा बारने दा

पहिला बदोबस्त बारने कीताँ
अज्जी तक दिंदे दुआए गरीब लोको
देखो तमाशा बारने दा

सुंदर जवान बहादर सूरमा
कोई ऐसा नहीं देखिआ अँग्रेज लोको
देखो तमाशा बारने दा

बारन साहबी खानदान बनाए
दित्तीआँ बख्शी जागीर लोको
देखो तमाशा बारने दा

साहब बहादर जब कड आइआ
हो गई लोक खुशबाब लोको
देखो तमाशा बारने दा

टिहरी सुजानपुर राजे पकड़े
हो गिआ अमल्ल अमान लोको
देखो तमाशा बारने दा

ऐसा नहो कोई रहिमदिल सुणिआ
ना देखिआ गरीब परवार अंग्रेज़ लोको
देखो तमाशा आरने दा

आइआ रॅंगरूट-ओ

बारहीं बरही आइआ रॅंगरूटा रे
हाथी छतरी पैरी बूटा रे
नहीं चलणा कुछ चारा ओ
आखदा रे प्राणू दा पिआरा ओ
बाथरी दा आया बणजारा ओ

सिरे पर बन्ह गड़ू दा भारा ओ
इक हत्थ गडी चुकाणी ओ
ले दूजे हथ साबणू दी लाणी ओ
लाहुडे पर मोटर खिलारी ओ
खोल्ह पानो खिड़की दुआरी ओ

हत्थ लिआ दुद्धे गलास ओ
ले पानो शाहरी रुमाल ओ
कणकाँ दी चढी लगी कानी आ

दख मई पाना दी जवाना ओ
बारही वरही आइआ रँगरूटा ओ

मेरा फुलणू बारन साहब दे टोपे

मेरा फुलण् लाणाँ वारन साह्ब दे टोपे
बारन साहब है बहादर जवान
राजा म्हारा बालक छोटा
मुलखा पर भूचाली
चलो साहब बारने री टोपा
चलो भाईओ फरिआदी चलीए
बारन साहब री आगे
पूरा तोलदा बिनाँ वट्टे इनसाफ लेणा
बारन साहब री हाथाँ
लोग पूजे न्हाहोरे
ताँ साहब भूबे ही जोते
मेरा फूलणू लाणाँ वारन साहब दे टोपे

हाँ बाबू रेंजरा

बाबू रे किचना बोला भाता दुद्धा री वाड़ी
पाँज माँगे कपड़े रुपए माँगे चाली
हाए बाबू रेंजरा बासी नगरा तेरे

वाहरली वो जाँदीए ओ हाथा लइआ लोटा
देई सुणी चालणा जमाना लागी रा खोटा
हाए बाबू रेंजरा बासी नगरा तेरा

बाबूआ रे आँगणा रे बहीणा री कयारी
सच्च बोले बाबूआ तूँ जा नही री पयारी
हाए बाबू रेंजरा बासी नगरा तेरे

शिमले री सड़के घोड़ी हुँडणा उँटा
बेटी लोड़ी दरसणा देश दुनीआँ निआरी
हाए बाबू रेंजरा बासी नगरा तेरे

जोगी बणी ओ जाणा

ओ बाबू रामा रेंजरा
जोगी बणी ओ जाणा
आर बखे शिमला
पार बखे बो ठाणा
जोगी बणी बो जो जाणा

ससू दे आँगणे 'च
बीहणे दी है वो किआही
पँजे शेरे कपडे रुपए मगे चाल्हो
ओ बाबू रामा रेंजरा
जोगी बणी ओ जाणा

चंद घेरिआ बदलीआ
माछी घेरी ओ जाली
तूँ वी घेरिआ ओ बाबूआ
इन्ना लोकाँ दी गल्ली
ओ बाबू रामा रेंजरा

बाबूए दी बाबूआणी
जगाँ तो है ओ होणी
बजे दी पालकी नाले नाले ओ लीनी
ओ बाबू रामा रेंजरा
जोगी बणी ओ जाणा

ड़े दीआँ मूरख जनानीआँ

साडे पहाडे दीआँ मूरख जनानीआँ
मैलीआँ कुचैलीआँ कपडीआँ लाँदीआँ
मूँनूआँ दे मथ्थे काला टिकूआ लांदीआँ
मूँनूआँ जो पई जादी चहि्क लोको
पेटी सधाहीए लक्क लोको

फुद्दूँ दीआँ लाड़ीआँ सत्त लोको
रेशमी घाघरा लक्क लोको
चन्दा नहीओ लाणा
फुद्दूँ मजूरीआ नहीउँ लाणाँ
साडे पहाड़े दीआँ मूरख जनानीआँ

नू सूरमा

ठंडी-ठंडी हवा धरमूआ बरखा दी छमकार लो
अन्दर पक्के फुलके धरमूआ बाहर रिझझी दाल लो
वढड़े जे भाईए चुगली लाई सदी वलाई सरकार लो
हौले-हौले पुलसाँ चलदीआँ कड़ीआँ दी छणकार लो
सौ-सौ रुपीआ सपाहीं मगदे दो सौ थाणेदार लो
मैं कुथों ते दीआ लोको देवे धरमू दी जान लो

सुत्ता सुतेड़ा धरमू उठिआ हथूँ फड़ी तलवार लो
पंज ताँ बड्डे पुलस सपाही छीआ थाणेदार लो
कोठे चढ़ के पिता रोवे धरमूईं खाणी मार लो
तूँ किउँ रोंदा पिता मेरा धरमू नी खाँदा मार लो
पौड़ीआँ चड़दी माता रोवे दर विच रोवे तेरी नार लो
तूँ किउँ रोंदी माता मेरी धरमू नी खाँदा मार लो

किसी दा नी मारिआ धरमू मरदा करमे दिती हार लो
चार चुफरे धरमू दौड पिआ मूआं दे भार लो
पहली गोली छाती वज्जी दूजी कलेजे फाड लो
सेर तॉ पक्का कालजा निकलिआ चरवी बेशुमार लो
गडीआॅ मोटरॉ धरमू जादा उतर गिआ हरी दुआर लो
शहिरी बजारे डौंडी पिट्टी धरमू दी आ गई लाश लो

मच गई धूँदू कारी लो

लस पलस बिच जगाँ ना मिलदी जहाजे पलटन चाडी लो
जहाज तॉ बैठकर चिट्ठिआॅ लिखेदे उमीद न रखीआे साडी लो
बंब जो चलदे तोपां जो चलदीआॅ मच गई धूँदूकारी लो
आगे जवानाँ दे दिल घबरॉदे पिच्छे रिटाइर कराद ला
चिट्ठीआँ लिख-लिख घरां जो घल्लदे ठगदे कलेजे साडी लो
चिट्ठीआॅ सुणी कर माई-बाप रोंदे पेईकिआ रोंदीआॅ नारी लो

भला हेर

कसेरे बजार मेरे पूरनाँ मखमल दा थाण भला हेर
मखमलां दा कोट मेरे पूरनाँ रोमी-रोमी सीणा भला हेर
दसाॅ गजा दा कोट मेरिआ पूरनाॅ चढी चबे जो जाणा भला हेर

गद्दियों के गीत

चम्बे जलसा सुणींदै

चम्बे जलसा सुणीदै हो तानी गद्दी आ
असाँ जलसे जो जाणा हो तानी गद्दीआ
हत्थ बगडीआँ पाणी हो मोटो गद्दणी
मत्थे बिंदलू जो लाणा हो मोटो गद्दणी
तेरा चोला पुराण हो तानी गद्दीआ
तेरा डेरा पुराणा हो तानी गद्दीआ

चंबा कितनी कु दूर

माए नी मेरीए जम्मुए दी राही
चम्बा कितनी कु दूर
उडी उडी कूंजाँ देस माही दे
लई आणी खबराँ जरूर

उच्ची उच्ची रिड़ीआँ ते डूँघी डूँघी नदीआँ
दिल मेरा होई जाँदा चूर
शिमले नी बसणा सपाटू नी बसणा
बसी जाणा चम्बे जरूर

चम्बे दा चौगान पिआरा हो

मिंजो वड़ी छैल लगदी
चम्बे दीआँ उचीआँ धारा हो

होली होली चलणा रावी दे कढे कंढे
डाँडा डाँडा रावी किनारा हो
बही लैणा पीपला दी ठंडीआँ छावाँ
किन्हे रहिणा दिन सारा हो
उच्ची उच्ची धारा कने टेढी मेढी नदीआँ
चम्बे दा चौगान पिआरा हो

साएँ साएँ मत्त कर रावीए

साएँ साएँ मत्त कर रावीए
मिजो तेरा डर लगदा
चम्बे दे गले दीए लडीए
मिजे तेरा डर लगदा

टेढी मेढी चाल तेरी सौ सौ नखरे
धंदे तेरे रावीए कर ना तूँ नखरे
तेरे कंढे वहिणे दा दिल मेरा करदा
तेरे ही मैं गीत गावाँ ऐसा मन करदा

आप चलिआ चम्बे

लाणा घड़ोलूए जो बाल जमादारनीए
सरनू जे मरनू सकीआँ भैणा हो
आप चलिआ चम्बे जो में सौगी तेरे जाणे
दिखीआ जी चंबे जो मैं सौगी तेरे जाणे

लई के घड़ोलू गोरी पाणीए जो जाँदी
चढनी मकंदरे दी धार हो
खसम जो तेरा राजे दा हजारी
देवर तेरा ठापेहार हो

चम्बे दिआँ हट्टीआँ बिकदा चौणा

मिजो भरोसा तेरा हो माणूआ
हो ठगबाज हो बेईमान माणूआँ
चम्बे दीआँ हट्टीआँ बिकदा चौणा
कुस मरना कुस जीणा हो माणूआँ
आप तो चलाइआ चम्बे दी चाकरी
साड्डा की करी गिआ हीला माणूआँ

मै नहीं जाणा चंबे दीआँ धाराँ

मैं नही जाणा चम्बे दीआँ धाराँ
चंबे दीआँ धाराँ पैण फुहाराँ
मेरा चोलणू सिजी जाँदा सारा ओ जी
मै नहींउँ जाणा चम्बे दीआँ धाराँ
हथड़ू ताँ गोरी दे ठरी वो ताँ जाँदे
पैरा की लगी जाँदा पाला ओ मेरे

चम्बे दे चौगाने विच ढोलकी जे बजदी
अम्बी बजे नगारा ओ जी
घर घर टिकलू घर घर बिंदलू
घर घर बाँकीआँ नाराँ
ओ मेरे गद्दीआ मै नहीं जाणा
चम्बे दीआँ धाराँ मै नही जाणा

चम्बे दीआँ धाराँ वो मेरे

घिरी घिरी आँवदीआँ वो मेरे
चम्बे दीआँ धाराँ वो मेरे
हुण बरफाँ पावदीआँ वो मेरे
चम्बे दीआँ धाराँ वो मेरे
कन्नी बुंदे पाई लैणे

इ थो कगरण् लाई नण
नक्की नथलू लाई लणा
नक्की नथलू लावदीआँ मेरे
चम्बे दीआँ नाराँ वो मेरे

घोल नाल मेरे लई के
खिडर जो चलीआँ
बरफाँ दे पहाड़ छड्डी
सुक्का पहाड़ मल्लीआँ
असाँ शिमले जाणा
नवाँ चोला लाणा
नवाँ लाणा मैं डेरा
घिरी घिरी आँवदीआँ वो मेरे
चबे दीआँ धाराँ वो मेरे

मेरे तेरे संजोग हो

लोहली भोटडीए गम करी ना मेरी लोहली हो
लोहली भोटडीए ठंडे नाले लकड़ी चुगणी हो
लोहली भोटड़ीए जोना पुरे बंगला पवाणा हो
लोहली भोटड़ीए बगलूए शीशे लगान हो
लोहली भोटडीए मेरे तेरे संजोग हो

गोरी दा चित्त लगदा

चंबे दीआँ धारा पैण फुहारा
उडणूँ ताँ भिज्ज गिआ सारा
लाडो दा चित लगदा चबे दीआ धाराँ
घर घर चकरू घर घर वकरू

घर घर मौज बहारा
गोरी दा चित्त लग्गा चंबे दीआँ धारां

घर घर बिदलू घर घर टिकलू
घर घर बाँकीआँ नारां
गोरी दा चित्त लग्गा चंबे दीआँ धारां
घर घर चरखे घर घर पूणीआँ
घर घर नारां भतारां
गोरी दा चित्त लग्गा चंबे दीआँ धारां
घर घर बजदे ढोल-नगारे
घर घर नारां भतारां
गोरी दा चित्त लग्गा चंबे दीआँ धारां

चंबे दीआँ छैल बहारां

चंबे दीए गोरीए-छोरीए
कट्टी पा मंडोआ जो फेरा
छडिता मिजो मिलणाँ
बो किथी हू लिआ मन तेरा

हस्सी के ना लय बैरीआ
मरी सास भरमा दी मारी
दिखी बे जो लैणी नणदे
बे कलेस पौणा मेरा तेरा

चंबे री आ छैल बहारां
गऊ चराउँदीआँ गोरीआँ नारां
आई कल्ने मिलणा जो यारा
बो बालम साँझ सवेरा

कौलाँ वे गदेटड़ीए नी मेरीए

कौलाँ वे गदेटडीए नी मेरीए
हरी सिधा दिउरा हो नी मेरिश्रा

हट्टी बैठे दुहानीआँ
तेरी हट्टी वाकैदा जीरा
होर लाँदीश्राँ रेशमी ढाठू मैं लगाँदी लीरा
ओ मेरिश्रा हरी सिंघा दिउरा हो नी मेरिश्रा

पुले पर पुलसाँ दी चौकी
श्रो मेरीए कौलाँ वे गदेटडीए
पुले लँघिश्रा की की देणी तारी नी
मेरीए कौलाँ वो गदेटडीए

होरनाँ दे बागे सभ फुल फुल्ले
मेरे बागे फुल गोभी
इक्क ताँ मेरी जिद निभाणी दूजे सारा जग्ग लोभी
श्रो मेरिश्रा हरी मिंघा दिउरा हो नी मेरीआ

छैला राजपूता

पारीए वी जादा छैला राजपूता
दो जलीए दा मुल्ल कर जाइश्राँ
गोरी दा वी हुंदा सईश्रा लाख टका
साँवली दा हुंदा लाख चार

गोरी जो बी सजदा काजल कुगू
साँवली जो सज्जे बिंदू लाल
गोरी जो बी सजदा बारी काला घुडू
साँवली जो सज्जे गुलानार

कुने वी दित्ता तुज्जो गंभर गड्वा
किने वो दित्ता गले हार
आ माए पा दित्ता माजो गंभर गड्वा
बापूए दित्त गले हार

कुँजू दा गीत

चवे दे चौगान तेरा डेरा कुँजूआ
मूँहा बोल जबानी ओ
कपडे धोआँ नाले रोआँ कुँजूआ
बिच बटन निशानी ओ
हाए कुँजूआ विच बटन निशानी ओ

गोरी गोरी बाहीआँ तेरी चूडा चंचलो
विच गजरा निशानी ओ
छीटे दा रुमाल हत्थ मेरे चचलो
बिच रग निशानी ओ
हाए मेरीए जिंदे विच रंग निशानी ओ

हत्थ कने हत्थ मिला दे कुँजूआ
दे जा निशानी ओ
ले लई ओ दिल दी निशानी
सच मेरी जानी ओ
इही जिंदे जग दे मेले सच मेरीए जिंदे
कुफरी दा चौगान विच लाणा डेरा कुँजूआ
उत्थे ओ मिलणा सारा मेला
सच डो मेरीए जिंदे
जिंदा लगदा मेला
हाए मेरीए चचलो जिंदा लगदा मेला

हत्थ कने हत्थ मत लांदा कुँजूआ
मेरीआं टुटी जांदीआं वगा
चवे दे चौगान तेरा डेरा कुँजूआ
मूँहा बोल जवानी ओ
ओ मेरीए जिदे मूँहा बोल जवानी ओ

अलबेलूआ हो

नाले नाले जांदा अलगोजूआ वजांदा
सुत्तिआँ दी नीदर गवांदा हो
अलबेलूआ हो

छल्लीआँ दी रोटी हुंदी बड़ी मोटी
छाही कने चूरी करी खाँदा भला हो
अलबेलूआ हो

कोदरे दी रोटी हुंदी बडी मोटी
दही कने चूरी करी खाणी भला हो
अलबेलूआ हो

नाले नाले जाँदा अलगोजूआ बजाँदा
लोकाँ जो गलाँदा हट्टी मेरी भला हो
अलबेलूआ हो

चंबे दी हट्टी मेरे देरे दी खट्टी
लोकाँ जो गलाँदा हट्टी मेरी भला हो
अलबेलूआ हो

खाने जो नी दिंदा पहिनणे जो नी दिंदा
लोकाँ जो गलाँदा लाड़ी मेरी भला हो
अलबेलूआ हो

भँवरा

लाल तेरा साफा भँवरा
मोरे की दी कलगी हो
तेरी मेरी प्रीत भँवरा
टुट्टी ताँ नहीं जानी हो

लाल तेरा चोला भँवरा
चिट्टी तेरी टोपी हो
धिआड़ा नी घरोंदा भँवरा
घड़ा नी भरोंदा ओ

तेरी मेरी प्रीत भँवरा
टुट्टी ताँ नहीं जानी हो
बुरे हुदे बुरे भँवरा
झिके केरे लोका हो

नाले नाले जाइआ भँवरा
बँसरी लजालीआ हो
बँसरी बजाइआँ भँवरा
दिले जो तरसाइयाँ हो

ब्रिज लाला भँडारी

ओ जोते पर बँसरी बजाई भला बो
ब्रिज लाला भँडारीआ
भाबो जो रुणकी सुणाई बो
ब्रिज लाला भँडारीआ
जोते पर हटली तेरी बो
ब्रिज लाला भँडारीआ

कदे छुट्टीआँ आमणा

चिट्टी चिट्टी चादर चन्ना फुल्ल पाणा फेरमाँ
घड़ीआ दे करार कीते
महीना चढ़िआ तेर्हवाँ

ओ आरे पोर लारी जादी
गब्बो मोनही छोकरी हाए
वो गो बे सोनी छोकरी

ते वाजी बाँसरी लो मैं बूआ खोल्हया
हाए वो जानी मैं बूआ खोल्हया
जे तूँ चलिआ हट्टी वर सोडी रग डोलिआ

चद मोरा चढ़िआ
ओपरा रे जा रिआ
जम्मू दिआ नौकरा कदो छुट्टीयाँ आमणा

मेरी बाँकीए गद्दणे

नगारे चुकी राजा होडे जो चढ़िया
बाँकी जिही लद्दण नजरी आई
ओ मेरीए बाँकीए गद्दणे

चार सिपाही राजे दड़ दड़ भेजे
बाहाँ ते चुकी डोलीए पाई
ओ मेरीए बाँकीए गद्दणे

छड्डी ताँ देणा गद्दणी पहाड़ा दा हँडोणा
पदरे नादौणे जो आ
ओ मेरीए बाँकीए गद्दणे

छडडी ता देणा सदणी भुजा दा साणा
भुजरी दे पत्तया जा आ
ओ मेरीए बाँकीए गद्दणे

छड्डी ताँ देणा गद्दणी तसलीआँ दा खाणा
सोने दे थालाँ जो आ
ओ मेरीए बाँकीए गद्दणे

छली छली राजा गद्दणी जो पुछदा
कीदी कीदी लगदी बुरी
ओ मेरीए बाँकीए गद्दणे

थोड़ी थोड़ी बुरी राजा घेलूआँ दी आउँदी
गद्दीए दे ताईं बगदी छुरीए
ओ मेरीआ हरी सिघा गद्दीआ

थोड़ी थोड़ी बुरी राजा तेरी बी लगदी
गद्दीए दे ताईं बगदी छुरीए
ओ मेरीआ हरी सिघा गद्दीआ

महिलाँ दे लागे गद्दीआ बकरीआँ चारदा
इना पैंरी दरसन देओ
मेरे हरी सिघा गद्दीआ

इक लख मगे गद्दी दो लख मगे
पलमाँ दी देणी बजीरी ओ
मेरीए बाँकीए गद्दणे

हरी सिंघ दिउरा ओ जी जानी

पुले पर पुलस गई जोड़ा नी मेरिआ
हरी सिंघ दिओरा ओ जी जानी

पुल लघणा की लंबी तारी नी मेरिआ
हरी सिंघ दिओरा ओ जी जानी

ओ पुलसा दई देणी चोटणी मेरिआ
हरी सिंघ दिओरा ओ जी जानी

ओ बसदी ओ बेहंदी नैं ओ जवाड़नी नी मेरिआ
ओ हरी सिंघ दिओरा ओ जी जानी

ओ बबरू पकाणे लोकों ओ गडे चडीग नी मेरीए
हरी सिंघ दिओरा ओ जी जानी

भिआगा घडी जो जागा जी जानी
मेरिआ हरी सिंघा दिओरा ओ जी जानी

हला बेलूआ ओ

हला बेलूआ ओ हला बेलूआ ओ
नाले नाले आउँदा ते बाँसरी वजाँदा
ओ मेरे बेलूआ रे

आपूँ ताँ चली पिआ धारा नगरी
मैनूँ लैई दई सोहणी जेही घगरी
ओ मेरे बेलूआ रे

घगरी लगाई कन्ने चल्लणा ओ
नावाँ लुआई दिआँ रतनीआँ दा
ओ मेरे वेलूआ रे

खाणी भी ना देंदा पीणे भी ना देदा
नान्हे जीणे भी ना देदा
मेरे वेलूआ हो

मेरीए छैल गद्दैटड़ीए

पहाड़ दा लाणा ओ राजा राणीआँ जो सोहँदा
राणीआँ जो सोहँदा

पहाडे दे लाणा मनजूर जीआ ओ
होणी मेरीए छैल गद्दे टडीए

सलवारी दा लाणा ओ राजा राणीआँ जो सोहँदा
राणीआँ जो सोहँदा

पहाडे दा लाणा मनजूर जीआ ओ
हो नी मेरीए छैल गद्दे टड़ीए

साकी रसता बताई करी जाणा

ओ जाणा महाराजा रसता बताई कई
वते ते भुली गईआँ ओ लोका
साँकी रसता वताई करी जाणा ओ महाराज

चबे लो चँडेदीआँ की रात जे पई गई
रसते ते भुल्ली गईआँ ओ लोका
साँकी रसता वताई करी जाणा ओ महाराज

बबी बंबा अक्खीआ नी काले म्हारे केस
मै तॉ बालक निआणी डोला
कंध परदेस ओ रस्ते भुली गईआँ ओ लोका
साँकी रसता बताई करी जाणा महाराज

नीकी नीकी हुंडणा नी हारे दे बीच ओ
निक्का दिहा मोती नी मेरा बेसरा दे बीच ओ
रसते ते भुली गईआँ ओ लोका
साँकी रसता बताई करी जाणा महाराज

गाली दिखीआँ दिंदी

फुल फुली बारे पारे ठोडा
गाली दिखी दिंदी छोरी
नहीं ताँ पिटॉगी मामा रे सोगा

तेरे कोठे ते पैण नोरड़े
गाली दिखी दिंदी छोरूआ
नहीं ताँ पिट जागा मामा कोरड़े

ओ सच दस पिग वालणी

उपर धारा बिजदा मरीना
ओ सच दस पिग वालणी

तेरे बिना किन बे जीणा
ओ सच दस पिग वालणी

उपर धारा बिजदे करेले
ओ सच दस पिग वालणी

काजा छाड़ मिञा दे मेले
ओ सच दस पिग बालणी

उपर धारा त्रिजदे ददोमा
ओ सच दस पिग बालणी

कयों पाया दँदड़ूआँ दा हासा
ओ सच दस पिग बालणी

चादर फटे तै मैं टाकी जे पाँदीआँ
लो सच दस पिग बालणी

दिल फटे ते कीआँ साणा बो
ओ सच दस पिग बालणी

लोकाँ जू गलाँदा

होले होले जाँदा मूआ लकड़ू चुगाँदा
लोकाँ जो गलाँदा ठेकेदार बेलीआ

खाणे जूनी देंदा मूआ लाणे जूनी देंदा
लोकाँ जू गलाँदा लाड़ी मेरी बेलीआ

चादरा जु फटी मेरे देवरे दी खट्टी
तूँ ताँ गज लठा वी ना देंदा बेलीआ

जितनी कु जिमीं मेरे देवरा दी खट्टी
लोकाँ जु गलाँदा जिमी मेरी बेलीआ

किआ कुछ बिकदा

कौलाँ बो गद्दे टड़ीए हो मेरीए
कौलाँ बो गद्देटड़ीए

चम्बे दीआ हटीआ किआ कुछ बिकदा
इक बिकदा ओ लहिंगा जानी
ओ फिरी मिलगा जे जींदा रौहिंगा ओ जानी

चम्बे दीआ हटीआँ ओ किआ कुछ बिकदा
इक बिकदा ओ चौला जानी
मेरा हरी सिंघ मेरा भोला भाला ओ जानी

चम्बे दीआँ हटीआँ किआ कुछ बिकदा
इक बिकदा जानी ओ लोटा
हो मेरे मन कपटी ओ दिल खोटा ओ जानी

चम्बे दीआँ हटीआँ किआ कुछ बिकदा
इक बिकदा धूणो ओ जानी
ओ मेरे इक बो बटाई लैणी दूजी ओ जानी

चम्बे दीआँ हटीआँ किआ कुछ बिकदा
इक बिकदी आरी ओ जानी
ओ मेरा लक पतला ओ लहिंगा भारी ओ जानी

हो बो जाणा माले दीआ राखी

डूँघे डूँघे वालू चढणे गबालू
जाणा माले दीआ राखी
हो बो जाणा माले दीआ राखी

उच्चीआँ ने घाटीआँ ओ बिखड़ा ए पैंडा
जाणा माले दीआ राखी
हो बो जाणा माले दीआ राखी

जेठ महीने नाड़ जे लग्गदा
व्होणा मिल्ली करी छाँई
हो बे व्होणा मिल्ली करी छाँई

हो बो आईआ ना मेरा साथी
चांदणी राती खेलण गवालू
आइआ ना मेरा साथी

सावण महीने अम्बजे पक्कदा
व्होणा मिली करी राखी
हो बो व्होणा मिली करी राखी

रूपणूआ लाहौल मत जांदा हो

तोव कने किसी सकीआ भैणा हो
कुण कुडी लाहौल जो नीणी हो
रूपणूआ लाहौल मत जांदा हो
दोसती दा मजा बरसांदा हो

कुण कुड़ी सखत बिमारा हो
एक हत्थ रोगणी दी नाडी हो
रूपणूआं लाहौल मत जांदा हो
दोसती दा मजा बरसांदा हो

जाल मूआ बेदणू त्रणी त्रहिंदा हो
इक हत्थ भंगी दी डाली हो
रूपणूआ लाहौल मत जांदा हो
दोसती दा मजा बरसांदा हो

भेडडाँ पा९जा लम्मा फरा हो
आइआ मेरे रूपणू दा डरा हो
रूपणूआ लाहौल मत जादा हो
दोसती दा मजा बरसादा हो

तेरी ओ मजाजा भारी ओ

चिट्टा वे चोला काला डोरा मुईए मसतूनी
चिट्टा वे चोला काला डोरा ओ
चढ़ी चम्बे नूँ चली जाणा मुईए मसतूनी

जाणा चम्बे दीआ जात्रा
बाहाँ भरी बंगा दी भनाणी मुईए मसतूनी
बाहाँ भरी बंगा दी भनाणी ओ
बाहाँ भरी बंगा दी भनाणी मुईए मसनी
मित्तर कीता बनजारे

तेरी ओ मजाजा भारी मुईए मसतूनी
तेरी ओ मजाजा भारी ओ

भला मीआँ मॅगलोटूआ हो

भला मीआँ मॅगलोटूआ हो
चौह दिनाँ दा जीणा तेरी सौह
दु खी असी रहिणा हो

भला मेरी गद्दे टड़ीए
दुखे नी कट्टणी जिंदडी तेरी तेरी सौंह
सुक्खे असी रहिणा हो

भला मोआँ मँगलोटूआ हो
सिरा ना चकदा घड़ोलू तेरी सौंह
दूर दूर पाणी हो

भला मेरी गद्दे टडोए
सिरे नी चकिआँ घड़ोलू तेरी सौंह
गाँवाँ गाँवाँ पाणी हो

भला मोआँ मंगलोटूआ हो
गाँवाँ दी बाटाँ औखीआँ तेरी सौंह
हौले हौले चलणा हो

कुणी दित्ता रेशमी रुमाल

आइआ मेरा पुणू पोहालू ओ
धारे-धारे बँसरी बजादा ओ
धारे बँसरी बजांदा ओ
बँसरी जो ताल ना चलादा ओ
रोपुणू दा शोसत्त भेड़ा ओ
भेड़ा जो वालूण ना जूडा ओ
आइआ मेरा रोपुणू पोहालू ओ

असाँ जाणा सिमले बजारा ओ
आइआ मेरा रोपुणू पोहालू ओ
ताराँ टुट्टी गड्डी कीआँ लघंणा ओ
आइआ मेरा रोपुणू पोहालू ओ
कुणी दित्ता रेशमी शलवारा ओ
आइआ मेरा रोपुणू पोहालू ओ

मभ सम पाहालू घर आए श्रा
श्राइश्रा मेरा रापुण पोहाल्लू श्रा
रोपुणू दा श्राइश्रा मुक्ख सादा ओ
हथ छतरी मुड्ढे चोला श्रो
श्राइश्रा मेरा रोपुणू पोहालू श्रो
रोपुणू दा श्राइश्रा डोला श्रो
आइश्रा मेरा रोपुणू पोहालू श्रो

कुसी की जाई गलाई देना

कुसी की जाई गलाई देना
तुहाडी मूरत नित बुलांदी श्रो
भती ना पीदी ना कुझ खादी श्रो
आ सजणा देख नूँ हाल मेरी
ना दम श्राए ना जिद जांदी श्रो
लाहौरी राजे कने गलाई देना
गोरी ठाकरू ठाकरू गादी श्रो
कुसी की जाई गलाई देना

आज दीए राती रहु मेरे गद्दीआ

श्राज दीए राती रहु मेरे गद्दीश्रा
श्राज दीए राती रहु ओ
आज दीए राती रानी रहु मेरे मित्तरा

आज दीए राती रहु मेरे गद्दीश्रा
सहुरा वी घर नही, सम्स वी घर नही
कल्लीए जो लगदा ए भौ
श्राज दीए राती रहु मेरे गद्दीआ
रहु मेरे मित्तरा

गेल वो दिनीआं सोंवण वी दिनी आ
ठडीआं बोड़ीआं न्हाउ
आज दीए राती रहु मेरे गद्दीआ
रहु मेरे मित्तरा

चौल वी दिनीआं दाल वी दिनीआं
नड़के जो दिनीआं घिउ
आज दीए राती रहु मेरे गद्दीआ
रहु मेरे मित्तरा

मंजा वी दिनीआं बिद भी दिनीआं
तू ठंढिआं बागाँ विच सौं
आज दीए राती रहु मेरे गद्दीआ
रहु मेरे मित्तरा

मेरे तेरे लिखे संजोग

बकरी चुगाणी गल्लाँ लाणी गद्दी जालमाँ
बकरी चुगाणी ठंडे नाले गद्दी जालमाँ
मेरे तेरे लिखे संजोग कुड़ीए पुगला
बालू बलाका दा काओ गद्दीआँ जालमाँ
बालू देला मजेदार कुड़ीए पुगला

चढ़िआ महीना जेठ

चढ़िआ महीना जेठ कि पल्ले हेठ कि लूआ डाढीआँ
माही गिआ परदेस ना खबराँ साड़ीआँ
चढ़िआ महीना हाड कि नरण पहाड कि बलण अँगीठीआँ
माही गिआ परदेस मैं बिरही लूठीआँ

दिने मदणा ता आउंदा राती

पारा बने आइआ वणजारा हो
मिरे पुरी बगडी रा भारा हो
बाबू आइआ बाबू जंगलाती हो
दिनै मदणा ताँ आउँदा राती हो
रोज रोज चम्बे की चलूरी हो
चम्बे तेरा कम्म किआ बनूरी हो
मोडे पुरी सोठी लसकारी हो
आइआ मेरा मापो पटवारी हो
एकी हाथे बागड़े पवांदी हो
दूए हत्थे सावण लुआँदी हो

रिध माँगणा सो माँगी लै

बापू तेरा धरमे आइआ
रिध माँगणा सो माँगी लै
थालूआ कटोरूआ रे दान
धीए माँगणा सो माँगी लै

माता मेरी धर मे आई
माँगणा सो माँगी लै
कापड़े रे, जेवरा रे दान
धीए माँगणा मो माँगी ले

भाई तेरा धरमे आइआ
रिध माँगणा सो माँगी लै
जिमीआँ रा अन्नाँ रा दाण
भैण माँगणा सो माँगी लै

टप्पे

नीले पाणीए दी टाँकी भरू री
दस बो रुपइए लई ले
वखा देखणे जो बाँकी नगदी

तेरे कोठे ते पैर फिसले
घुँड काज़ो पाँदी छोरीए
अमाँ बैठी अरे तेरे आमरे

हरी कणकाँ दा दाणा भरू दा
मट्टी दी नी आई छोरीए
तेरे टब्बराँ दा कौण सरूदा

पाणी भरना री डोले उमरे
साडा किआ कसूर गोरीए
गाली दिती आरी तेरे टबरे

तेरे कोठे ते पइआँ मसराँ
इक बारी मिल छोरीए
असी कड लैणी सारी कसराँ

गड्डी आई री ओ घुम्मी घुम्मी
सिओने दी तू बण जा छोरीए
असी छड्डी देणी राजी बो नामी

२ कार ते गणा जा दाणा
मागी टूनी मल उतरी
असाँ मिले जाणा ओ जाणा

तेरे कोठे ने बद कुलकू
दूरा ते पछाणियाँ गंगीए
गोरे रग ते काले जुलफू

तेरे कोठे ते पइयाँ रस्सीयाँ
दूरा ते पछाणियाँ गगीए
तेरे सजनाँ नू पइआँ गल्सीआँ

फुल फुलिया तमाखूए दा
सूट सिजो सुर्नाए दिता
नामाँ लगी दा दापूए दा

तेरी थालीए ते घिओ गलीदा
जेले तेरा मेकना छोरी
साडा देखी कने जीउ जलीदा

अग्ग बाली कनी सेकन दे
जिहड़ी मेरे करमे लिखी
उस ग्राकिआँ जो देखणी दे

खट्टा भरिआ खीट आइआँ बो कन
काचा रग तेरा छोरीए
कजो मारदी बडिआइआँ बो कने

मेरे दिलड़ जो दुःख तेरा दितए
बाटा ते किनारे हटी जा
म्हारा खून तू बथेरा पीतू रा

तेरे पलंगा थले खेरा रे पावे
बोलूए ना मन्निग्रा पागले
सारे खूना पीदे सभी दावे

पानी छड़ना फीग दाने जो
दूरा दी ए मोइए गगीए
दिल बोलदा ना घरा जाने जो

पत्ता पानो रा बे झरोखे रक्खो रा
देखिआ बेईमानी करदा
दिल तेरे भरोसे रक्खी रा

चिट्टे ददरूए बेरिग्रा बरसा
वालका री लगी ममता
हूणी मरने ते नही डरना

चिट्टा कुरता सलवारी कने
लगिग्रा दिल नही मुड़दा
भावें बड्ढी दे ललवारी कने

चिट्टे कपड़े सीग्राँ दरजी
लॅमड़े करार देउरी
हुण मिलणे जो हुई री मरजी

१ कार त दाणा जा दाणा
मागी दूनी म न उतरी
अमाँ मेले जाणा ओ जाणा

तेरे कोठे ले बद कुलकू
दूरा ले पछाणियाँ गंगीए
गोरे रग ते काले जुलफ़

तेरे कोठे ले पटआँ गम्मीयाँ
दूगा ते पछाणियाँ गगीए
तेरे मजनाँ नू पइआँ गम्मीआँ

फुल फुलिया तमाखूए दा
मूट निजो मुनीए दिता
नामाँ तरी दा बापूए दा

तेरी थालीए ते घिओ गलीदा
जेले तेरा मेकना छोरी
साडा देखी कने जीउ जलीदा

अग्ग बाली कनी सेकन दे
जिहड़ी मेरे करमे लिखी
उस बाकिआँ जो देखणी दे

खट्टा भरिआ खीट आइआँ बो कन
काला रग तेरा छोरीए
कजो मारदी बड़िआइआँ बो कने

मेरे दिलडू जो दु.ख नेरा दितए
वाटो ते किनारे हटी जा
म्हारा खून तू बयेरा पीलू रा

तेरे पलगा थले खेरा रे पावे
बोलूए ना मन्निग्रा पागले
सारे खूना पीदे सभी दावे

पानी छडना फीग दाने जो
दूरा दी ए मोइए गगीए
दिल बोलदा ना घरा जाने जो

पत्ता पानां रा बे झरोखे रक्खो रा
देखिआ बेईमानी करदा
दिल तेरे भरोसे रक्खीं रा

चिहे दंदरूए बेरिग्रा बरमा
बालका री लगी ममता
हूणी मरने ते नही डरना

चिट्टा कुरता सलवारी कने
लगिग्रा दिल नहीं मुड़दा
भावें बड्ढी दे ललवारी कने

चिट्टे कपड़े सीग्राँ दरजी
लॅमड़े करार देउरी
हुण मिलणे जो हुई री मरजी

धान बाणा ते पशु निकल
साम्हण ना जाइ छोरीए
म्हारी आखरी रा आँसू निकले

फुल फुली गिआ बाटा रो घोरे
कुछ घरी लिखी रे दिदे
कुछ समझे डमाका रे जोरे

लम्बा पात बे तमाखूए दा
चल छोरी चली ओ जाणा
बग नप्पणा सबाडूए रा

तेरी हट्टीआँ ते विके पिसता
इथे जिउणा कठन गिआ
तेरी शकला रा कोई नी दिसदा

तेरे कोठे ते पईआँ तुल्लीआँ
चिट्टे तेरे दद छोरी
आजा सोने री वनाई दूँ फुल्लीआँ

पाणी भरी लैणा गागरी कने
सड़काँ रे मोड़ टुट्टी गए
तेरे हरे पीले चादरू कन्ने

वग्गे बैलाँ री जौड़ी दब्बके
ममता जो सारी दुनिया
कोई दिदा नही कलेजा कढ़के

हरी चीली रे चीली तखने
अखी रा इशारा जाणी जा
असी जीभा ते नी बोली सकदे

हरा रग तेरे बॅगड़ूआँ दा
इक लक्ख जानी दा देणा
दो लक्ख है दॅदड़ूआँ दा

रौंदिआँ छड्डी वे गिआ
चिट्ठी लिख किथे पावाँ
जाँदी वारी दस्स नी गिआ

तेरे घोड़े जो देदी मैं दाणा
प्रदेसाँ नही जाणा
घर बैठिआँ ही खाणा

तेरे कोठ ते दुद्ध रिड़के
मेरी भामाँ जान कढी लै
मारे सजनाँ तू मत झिड़के

फुल फुलिया रे कैथा रे मेरे
बहुतेरी समझाई छोरी
हुण करनी ले बिनतीआँ दे मोरे

छा बडनाँ रे धानाँ रे बीड़ा
सुख सांद लै लैं पापणी
तेरे सजनाँ जो इस्सी रा कीड़ा

फुल फुलिया पगा हेठा ।।
किता तरा गीत सुनजा
किता लगी जाजथाँ हेठीआ

पानी भरना ले हरी डडीआँ
भरने ते होर डरदे
असीं लडणा तलवारी नगीआँ

फुल फुलदा रे भर किआरीआँ
बैटरी मँगा दे छोरीए
असा चलणा रे राती धिआड़ीआँ

गड्डी आई री बो खड्डे बो खड्डे
मेले री जलेबी खादी
हुण निकली बो हड्डे बो हड्डे

फुल फुलिआ डोडनी दा
छेती छेती तुरी वैदा
मदा हाल बो रोगणो दा

घड़ा भरना धोई बो धोई
दिन तेरे आसरे कहाँ
राताँ कटणी रोई बे रोई

चिट्टा रग बे पतासे दा
सुरखी दा की मलणा
गूहड़ा रग बे ददासे दा

तेरे रुपए नें बड्डी डुंगागी
लोका छोऊ गल्लाँ मारदा
आँू विआही काली डूमणी

पाणी भरी लेबा डोले बे डोले
गाल्ली देखिआँ देंदा छोरूआ
तूँ ते लगी रा बगाने रे बोले

चिट्टे कपड़े री सीबी झगरी
तूँ वी परदेसी छोरूआ
बे जो असाँ छोडी देणो तेरी नगरी

बार डालीआ दे पक्के पखला
इजत बरान कीतीआँ
नी निजो कदी भी नी आई अकल

कांगड़ा-शब्दावली

अउँ = मै
अहाँरा = हमारा, अपना
अक्ली बखी = आस-पास, इर्द-गिर्द
अगवाडा = खलिहान
अजकनी = केवल आज की
अम्बर = आसमान
अँबला = आमरँगा
अँबोए दीआँ पक्कीआँ = आम की फाँके
अरसीआ = आरसी

आरशू = शीशा, दर्पण
आरन = आड़ू का पेड

इसती = इसको, इसे
इसरा = इसका

उगपाऊ = कमीला आदमी
उगमी = उठी, पैदा हुई
उजाड़ी मढ = उजाड़, उजडी जगह
उपाहू = खेतिहर मजदूर

एड़ा = कौन-सा, कितना

ओढ = छाया वाली जगह
ओथला = ऊँचा
ओपरेरना = वारना
ओडी = भेड़ो का बाड़ा
ओरी = धान की पौध

कस = किसने
कसी = घिसकर
कसेरे = कौन से
कछ्छ = पास
कछ्छा = किनारे
कर्जादा = काहे का
कजो = क्यों
कडी = गले का गहना
कँदलू = कत, पति
कन्ने = निकट, सग, पास
कमलोआ = फाख्ता-जैसा जानवर
करौके = चौकीदार
काइआ = काया, शरीर
काइसदी = किसकी, काहे की
काठ = गोदाम, भंडार
कारी = इलाज
किचना = लंगर मे
कित्ता = या
कीआँ = कैसे
कीहाँ = किस तरह
कीताँ = या फिर

कीदीआँ = किसके जैसी
कुआन्नू = चढ़ाई
कुकड़िआले = मुर्गे की
कुंगू = टीके वाला सिंदूर
कुतरा = कुत्ता
कुथूं = कहाँ से
कुनी = किन, किस, किसके
कुम्भज = पूजा वाली मूर्ति
कुआ मारना = आवाज देना
केरे लाँ केरे = लगातार
कोहूए = कउ का वृक्ष
कोकड़ी = मुर्गी

खटनालू = एक फूलदार पौधा
खनी = छलनी
खाखड़ = गाल
खिद = लीरों का गद्दा
खेदना = हाँकना
खोड़ा = अखरोट
खोडी = खोल

गराइआ = चरखड़ी
गतारां = गाने वालियाँ
गलाणा = बोलना, कहना
गड्ले = गड्ढे में
गाई = गाय
गिरी पई = गिर गई
गुआलूआ = पशु चराने वाला
गुणीआँ दे रोग = वियोग का दुःख
गुलचट = अर्क
गोहडा = रूई का गाला
गौरां = पार्वती
गौरजां = पार्वती

घनिआरा = सलेट का पत्थर
घनेरी = फूल का नाम
घड़ालीआ = घड़ौंची
घड़ोल = घोड़ा
घालकर = नौकर
घेमिआँ = गहने

चकरू = चकोर
चल्हएदार = नौकर-चाकर
चाचड़ी = धान आदि की फसल
चापका = चाबुक से
चिजण = छोटे बढ़िया चावल
चितरेगा = चित्रकार, रंग करने वाला
चिडवा = चिवड़ा

छन्ने = पटे, पुरुषों के सिर के बाल
छंन = बरामदा
छलेछले = पुचकारकर छल सहित
छेलू = बकरी का बच्चा
छैल = सुन्दर युवक
छोंदा = बुलावा
छोडे छोडे = जल्दी जल्दी

जघा = जांघ, टांग
जदोकना = जब का
जनास = ब्याही स्त्री
जवाईए = जमाई को
जवरा = बूढ़ा (बाप)
जमोंते = बिलकुल ही
जलदीआ = मछली
जाहणू = घुटना
जाकत = जवान, बालक
जातक = लड़का
जिक्के = नीचे, मैदान

जिक्कीअ = चिनकर दबा लेना
जिजराडा = स्त्री का दूसरा ब्याह
जिदे रेहले फिरी मलिले = जीते रहे तो फिर मिलेंगे
जीगी = जिऊँगी
जुआँदडी = जवान, युवती
जोजी = चोली
जौत = चोटी, पर्वत की चोटी

झाजे = जहाज में
झिकले = निचले, नीचे के
झीजण = छोटे बढ़िया चावल
झूरी = दुखी होना, पछताना
झलझाल = छून-छात
झोले = छाछ में नमक और हल्दी उबाल-कर तैयार किया गया खाने का एक पदार्थ

टँगोना = लटक जाना, चढ़ जाना
टापरू = झुग्गी, झोंपडी
टावण = हटाना
टिआला = चबूतरा (पेड़ के इर्द-गिर्द)
टिक टिकदीआँ = पतली
टिकलू = टीका (बिंदी)
टुहाणीआँ = दुकानदार
टोल = घर, कुनबा
टोली = पत्थर

ठाहरी = ठौर, जगह, स्थान
ठाकाँ पाए = समझाए
ठाकणा = रोकना

डगा = दीवार, बंध, पत्थरों की हद
डब्बल = पुराना पैसा, टका
डल्ली = डलिया, टोकरी
डडोली = छाबडी
डाई = दुख
डाँडा डाँडा = टेढ़ा-मेढ़ा
डुगरे = गहरे
डुँगाणी = रुपये का कुण्डा (हमल का)
डुगी = गहरी
डोडणी = रीठा
डूणमड़णी = चकरा जाना
डोरडीए = ढूँढती है
डोरू = निकम्मा, गँवार

ढलीआ ढलेला = दिन ढले
ढाई ने = हटाकर

तपकाँ = तरकश
तरू टोरा सुथणू = चूड़ीदार पाजामा
तरेड़ा = अँगड़ाई
तरेड़ए = कुहली मारकर
तिसा नेडे = उसके पास
तिजो = तुझे
तीते = तुझसे
तैंथा = खुरचना
तोपणा = ढूँढना
तोपदे = ढूँढते
तौंदी = उमस, गरमी का मौसम
तौला = उतावला

थाडी = थाली
थीआ = था, (दुआबी)

दछण = दक्षिण
दलिआलू = नाश्ता
दंतूए = ऊँची जगह

दन्वू = बच्चा
दग्म = शाम, पैंम
मरवटा = खुला मैदान
दीमाँ = को
देला = दूँगा
देवा = देवी
दोहड़ = दोहर, दोहरी चादर

ध्रजा = झंडी
धूरी = धुंध
धोल = गेहूँ के आटे का रोट

नसीच = खालिस, साफ
नवरौरी = आने वाली चौथ
नजानी = अनजाने
नँदाई = गुड़ाई नलाई (दुआवी)
नरेला = नारियल
नाले = नाड़ा
नाड़ = नाद, पीपनी, एक बाजा
निआई = कटाई आरम्भ करना
निहाल = इंतजार, प्रतीक्षा
निहाड़ा = पशुओं का बाड़ा (घरों से दूर)
नीठी = नीची
नीणी = ले जानी
नुहारी = नाश्ता
नेहतर = धोना
नोई = नई
नौणी = मक्खन

पईआ = मैका, पीहर, पिता का घर
पहुणी = अतिथि, मेहमान
पखला = ओपरा आदमी
पटू = छोटा खेत
पटलोई जाणा = भूल जाना
पणीआँ = छप्पते
पतलू = पत्ते
परगड़ा = मुँह अँधेरे
पराल = पुआल
परोल = ड्योढी
पाजा = जगली चरी
पाजी = जगली जवार (मक्की)
पाटीआँ = क्यारियाँ
पाग्ही = रखवाली करने वाला
पिंजर = पिंजरा, शरीर
पिपड़ = पीपल
पीडो = तैयार करो
पूँजिआ = धुन दिया
पेड़ीआँ = सीढ़ियाँ
पेईए = माँ-बाप के
पैंडा = मार्ग, बाट
पोलूआ = रुई जैसा

फफड़ूआ = जगली बूटी (सब्जी के लिए)
फंदे न निकलाई = फंदे में से निकालना
फुलनूं = फूल
फुली समाए = खिलकर मुरझा गए
फंटे = बाली

बहिलीआँ = बगियाँ
बकरू = बकरे
बंगड़ोरे = चूड़ियाँ (काँच की)
बंजपा देणा = बिरादरी से निकाल देना
बटैहड़ा = पत्थर घड़ने वाला कारीगर
बटोलना = चुगना, समेटना, उठाना
बत्त = रास्ता
बत्तरी = बत्तीस

बदरी पुआल का चटाई
बँनूआँ=सिरनी, ईडुली
बबरू=खमीरी पूरी
बरेही=खाली भूमि, बजर
बरी=बुगाई
बल्ही=नदी किनारे का टीला या खेत
बडका=बड़ा भाई
बढी=बड़ का वृक्ष
बाइओं=भाइयो
बाई=नाव
बासण=बरतन
बाहो=बाहर
बागलू=चूडियाँ
बाजीआँ=मिठाई
बाडला=बडा
बाणा=बन्ना, दूल्हा
बौडी=बावड़
बामी=बामी
बारन=जुताई
बालू=नथ
बाड्ए सुगाड्ए=गाँव की सीमा मे, बस्ती
बिहाग=सवेरा
बिहोतरी=विवाहिता स्त्री
बिखरा (बिखड़ा)=मुश्किल, सख्त
बिगसा=खिल जाना
बिज्ज=बिजली
बिदलू=बिंदी
बिल=मुँह (घडे का)
बिड़ला=नौका
बीआ=घर के आगे छोटी दीवार
बीहूण=धनिया
बीड=खेत की मेड
बेसर=नथ, बुलाक

बठाआ बाग
बोटी विवाह की पुत्री
बोणा=बैठना
बोढ्ढवाला=बूढा
बोबो=बहन
बोलीआँ=कौल, वचन
बौहडी=चौबारा
बौहेकरी=बुहारी, झाड़ू
बौडी=बावडी

भईआ रेली=नीचे पसर गई
भटान=मिट्टी के डले को तोडने वाला लकड़ी का हथौडा
भटरू=खमीरी रोटी
भँडाणी=पहनती
भतोला=पागल
भरावी=प्याऊ
भरी=झाड़ू, बुहारी
भारी=दूर
भिआगा=सवेरा
भिक्हड=मिट्टी की डली, डले
भुजू=साग
भेदन=प्रेम की यादें

मँझा=बीच मे, मध्य
मँझी=बीच
मटेडा=राज (मकान बनाने वाला)
मँडला=कटोरी बजाने वाला
मँढार=कोई हथियार
मधरा=साग, सब्जी
मनजूर=मनभाता
मनिआरे=बिसाती
मरथिआल=श्मशान
मरीना=पशम, कपास

मरूआ=एक पेड़
मोरना=खाद डालना
म्हड़ी=चालाक स्त्री
माहणू (माणू)=आदमी
माकड़ी=आम की सूखी फाँकें
माजरू=चटाई
माणी=नौका के आगे रखा पत्थर
म्हाणी=आम का खटाई वाला पानी
मिजो=मुझे
मिझो=मुझको
मीकी=मुझे
मीणे=ताने
मीनी=कलाई, बाँह
मुआल=गाली देना
मुसती=मस्त, लापरवाह
मुगा=नग
मुडीए=गर्दन को
मुन्ना=हल
मूसना=खिसका लेना, चोरी करना
मेघ=मेह, वर्षा
मैंसाँ=भैंसें
मैंजर=झगड़ा, खराब बातें करना
मोडी=सग

रकड़=पथरीली जमीन
रखोकड़=घर बसाई स्त्री
रमज=तर्ज
रमी रही=मन लग गया
रड़िआँ=टीले पर
रास=पहाड़ी, मेड़
री=की
रुग बुग्गी=इक्का दुक्का
रूपा=चाँदी
रेहना=झगड़ा

लप पड़ापोआँ=भर-भरकर
लमारिआँ=अलमारियाँ
लाहड़=किनारे पर
लाहड़ू=मकान के साथ सब्जी आदि
के लिए जमीन
लाड़ी=बहू, बीबी
लिचड़ा=नीला
लुहारे=झोंके
लुणाई=फसल की कटाई
लैंरे=सावन के महीने
लोटकी=लुटिया

वयाहकुल=विवाह की तिथि, लगन

सइ=सोना
सस्सू=सास
संगेलणा=इकट्ठा करना
संघड़ा=तंग
सच्ची रा कीडा=साँप काट गया
सनेरूआ=सुनार
सघड़ा=पत्थर
सल्ह=श्मशान भूमि
सवाणा=चराने वाला, चरवाहा
साओगी=साथ, संग
साइत=एक सगुन
साकी=हमें
सावाँ दा रासी=सावन का महीना
सिज्जा=गीला, सीला
सीर=जहाँ पानी रिसता हो
सुहेतड़ी=सँभालकर रखी हुई
सुक्केकुत्त=सूखी रोटी
सुखरात=सगुन वाली रात
सुज्जे=अश्विन के महीने
सेहना=भिगोना

सेढी पानी न्यिा
सलो=हरी, सब्जी
सोगेला=छाया में

हटली=दुकान
हडणा=लाँघना, पैदल चलना
हाखरी=आँख

हार फगन सा
हार -फसल, खेनिया
हेसीओ मजदूर, सामान ढोने वाले
हेरी = देखना
हेडीआ=शिकारी
होणाँकीहा--किस तरह का होगा
हौलर=बच्चा